अध्ययन-माला
२

महाकवि भूषण

भगीरथ प्रसाद दीक्षित

साहित्य भवन लिमिटेड
इलाहाबाद

प्रथम संस्करण : १९५३ ई०

ढाई रुपया

139589

मुद्रकः—रामआसरे कक्कड़
हिन्दी साहित्य प्रेस, इलाहाबाद

प्रकाशकीय

'अध्ययन माला' का द्वितीय पुष्प आपके हाथ मे है। इस योजना के अन्तर्गत हम ऐसी छोटी-छोटी किन्तु महत्वपूर्ण पुस्तके अधिकारी विद्वानो द्वारा लिखवा कर प्रस्तुत करना चाहते हैं जिनसे हिन्दी साहित्य-निर्माता प्राचीन एवं आधुनिक प्रमुख कवियो की कृतियो और जीवन-परिचय के साथ-साथ उनका आलोचनात्मक अध्ययन भी प्रस्तुत किया जा सके। हिन्दी-क्षेत्र के विस्तार और छात्रो की सख्या-वृद्धि के साथ ही हमारा दायित्व भी बढ गया है कि हम साहित्य-पिपासुओ के लिए 'गागर मे सागर' प्रस्तुत कर सके। हमारा विनम्र प्रयास इसी दिशा मे है।

महाकवि भूषण देश प्रेम की भावना के माध्यम से अभिव्यक्त तत्कालीन राष्ट्रीय चेतना के प्रतीक हैं। उन्हे दरबारी कवियो की कोटि मे रख कर उनका मूल्याकन करना अपनी दृष्टि को सकुचित कर लेना है। उनके समय तक कुलाभिमान का स्थान जात्यभिमान ने ग्रहण कर लिया था। तत्कालीन परिस्थिति मे राष्ट्रीय भावना की अभिव्यक्ति का कदाचित् वही स्वरूप हो सकता था। राष्ट्रीय भावना और 'राष्ट्रीयता' के भेद को दृष्टिगत रखे बिना इस सम्बन्ध मे अपना 'फैसला' देना भ्रामक हो सकता है। प्रस्तुत पुस्तक के आलोचक इस विषय के प्रख्यात पडित है। हम ऐसे विद्वतापूर्ण ग्रन्थ को सहर्ष प्रकाशित कर रहे है।

नर्मदेश्वर चतुर्वेदी
प्रकाशनाध्यक्ष

अवतरणिका

जीवन-संघर्ष मे ओज और उत्साह की अनिवार्यता सर्वविदित है। इसी कारण वीररस की उद्भावना प्राग्-साहित्य से ही प्रचुर मात्रा मे पायी जाती है। जीवन-संघर्ष की जटिलता के चढाव-उतार के साथ-साथ वीर-काव्य का अनुपात भी बदलता रहा है। युग-प्रभाव प्रेरित उत्साहवर्द्धक प्रेरणाओ का योग वीर भावना के उद्रेक मे महत्वपूर्ण महायक होता है। यद्यपि इसका क्षेत्र व्यक्तिगत मनोभावो से लेकर लोक-कल्याणकारी भावना तक फैला हुआ है।

वैदिक साहित्य तक मे सामाजिक रक्षण और मानवता के उद्धार के लिए वीररस विषयक अनेक मन्त्रो के उदाहरण मिलते हैं। परन्तु कालान्तर इस रस का ह्रास दिखलाई देने लगता है। प्राकृत, सस्कृत और अपभ्रंश साहित्य मे अपेक्षाकृत ओज अथवा उत्साह वर्द्धक साहित्य कम दृष्टिगोचर होता है। नाना कारणों से उनमे अधिकतर शृगाररस तथा अध्यात्म भावना का समावेश लक्षित होने लगता है। प्राकृत भाषा का सेतुबंध काव्य, संस्कृत का किरातार्जुनीय काव्य तथा वेणीसहर नाटक और अपभ्रश की कीर्तिलता एव कीर्तिपताका आदि रचनाएँ अवश्य ऐसी हैं जिन्हे वीर-काव्य की कोटि मे रखा जा सकता है। दुर्गा सप्तशती जैसे कुछ खण्ड काव्यो को छोडकर शेष धार्मिक तथा पौराणिक साहित्य ऐसा नहीं है जिससे वीर भावना को स्फुरण मिल सके।

कवियो और नाटककारो मे भास, कालिदास, भवभूति, बाण, श्रीहर्ष, माघ आदि प्रमुख कवियो एवं काव्य रचयिताओ मे से सभी ने शृगाररस का ही विवेचन तथा विश्लेषण अधिक किया है और उसी को रसराज ठहरा कर वीररस की प्रायः उपेक्षा कर दी है। यहाँ तक कि भरत के नाट्यशास्त्र मे भी शृंगाररस का ही विस्तार हमे दिखलाई देता है। वीररस के साथी रौद्र, भयानक तथा वीभत्स रस जो कि वीररस के महयोगी माने जाते है इनका चित्रण भी बहुत ही न्यून मात्रा मे दृष्टिगत होता है। इसकी

तुलना मे शृगाररस के भेद-प्रभेद और अग-प्रत्यगो का गहराई के साथ विस्तार किया गया है। नायक-नायिकाओ के भेदो, उनकी भिन्न-भिन्न अवस्थाओ और दशाओ एव हाव-भावो का वर्णन इतने बडे पैमाने पर किया गया है कि अन्य सभी रस दबे-से पडे जान पडते है। इसे युग प्रभाव की विशेषता ही समझनी चाहिए।

हम यह नही कहते कि देश मे वीरत्व का अभाव था। परन्तु जाति-गत समूहो मे बॅटने के कारण राष्ट्रीय चेतना के अभाव मे भारत की सगठन-शक्ति क्षीण पड गई थी। पजाब मे छोटे-छोटे राज्य होने से सिकदर और दूसरे विदेशी आक्रमणकारी देश मे घुसते चले आये। चाणक्य की नीतिमत्ता और चन्द्रगुप्त के शौर्य से ही हम उन्हे भारत से निकालने मे सफल हुए। इन दोनो ने भारत की सगठन-शक्ति का भी सफलता के साथ सचालन किया। किन्तु अन्त मे महमूद गजनवी के आक्रमणो से धन की अटूट राशि का हरण हुआ तथा इसके कुछ ही काल पीछे मोहम्मद गोरी के हमले से देश सैकडो वर्ष के लिए दासत्व शृखला मे जकड गया। इन शासको मे से शेरशाह एव अकबर को छोड कर अन्य किसी बादशाह ने राष्ट्र-निर्माण का प्रयत्न नहीं किया हिन्दुओ की जातिगत विकृत व्यवस्था ने भी हमे दुर्दशाग्रस्त रहने मे पूरी सहायता की। गोरखनाथ एव कबीरदास ने राष्ट्र-निर्माण का प्रयत्न अवश्य किया था परन्तु ये भी उतने सफल न हो सके।

भारतीय साहित्य के इतिहास मे नवी शताब्दी से लेकर चौदहवी शताब्दी के अन्त तक वीरगाथा काल कहा जाता है। यह काल खुमान रासौ, बीसलदेव रासौ और पृथ्वीराज रासौ के आधार पर निर्धारित किया गया है। परन्तु विषय प्रतिपादन से प्रकट होता है कि यह नामकरण ठीक नही है। खुमान रासौ मे राणा खुमान से लेकर राणा राजसिह तक का चरित्र-चित्रण हुआ है। खुमान का समय ८७० वि० से ६०० वि० तक माना जाता है और राजसिह का समय १७०६ वि० से १७३७ वि० तक था। इस ग्रथ के रचयिता दौलत विजय नामक जैन मुनि थे। इसका

विषय वीररस न होकर शान्त और शृगार है। अतः इसे वीररस का ग्रन्थ नही माना जा सकता है। रति सुन्दरी तथा खुमान के विवाह का विस्तार से वर्णन किया गया है। वीररस के रूप मे कुछ ऐतिहासिक उल्लेख ही मिलता है। फिर दौलत विजय राणा राजसिह के समकालीन थे अतः इस रचना को खुमान के समय मे ले जाना ऐतिहासिक तथ्य की उपेक्षा करना ही समझा जायेगा। एक छन्द मे पद्म विजय, जय विजय, तथा शान्ति विजय नामक जैन मुनियो की चर्चा आई है अतः इस आधार पर इसे प्राचीन रचना मानना असगत है। पद्म विजय तो दौलत विजय के गुरु थे ही शेष दो मुनि भी इन्ही के समकालीन थे। अतः स्पष्ट हो जाता है कि यह रचना राजसिह के समय मे लिखी गई, इसमे सन्देह नही।

बीसलदेव रासौ के बारे मे स्थिति और भी स्पष्ट है। यह एक प्रेम काव्य है इसमे बीसलदेव का राजा भोज परमार की कन्या राजमती से विवाह का वर्णन है। इसके पश्चात् बीसलदेव का राजमती से रूठ कर उडीसा जाने का कथन किया गया है, फिर राजमती का विरह-चित्रण तथा अन्त मे बीसलदेव का वापिस आकर राजमती को धार से ले आने का उल्लेख है। इसमे तो वीररस का नाम भी नही है। इसका रचयिता नरपति नाल्ह एक चारण था। ग्रथ का निर्माण-काल दो भिन्न-भिन्न प्रतियो मे १०७२ वि० तथा १२१२ वि० मिलता है। जयपुर वाली प्रति का लिपि-काल सं० १६६६ वि० है। इससे पूर्व की कोई पाण्डुलिपि न तो प्राप्त है और न कही किसी प्रकार का उल्लेख ही मिलता है। भाषा के विचार से भी यह रासौ सत्रहवी शताब्दी से पूर्व का विदित नही होता। अतः स्पष्ट है कि यातो यह ग्रथ सत्रहवी शताब्दी का रचा हुआ है अथवा इसे आल्हा खड की तरह मौखिक रूप मे हम गाते चले आ रहे हैं जिसे चारण अपनी वृत्ति के लिये प्रयोग मे लाते रहे हैं। अतः प्रेम-काव्य होने से न तो इसे वीर-काव्य के रूप मे लिया जा सकता है और न प्राचीनता के विचार से ही इसका कुछ महत्व है। बीसलदेव अजमेर का प्रसिद्ध चौहान था जिसकी विजयो का वर्णन कुतुबमीनार (दिल्ली) की लोहे की

लाट पर उत्कीर्ण है जो कि स० १२२० वि० में खुदवाया गया है। इसके बाद भी उसने १२२४ वि० मे उड़ीसा विजय किया था। परन्तु नरपति-नाल्ह इस यात्रा का वर्णन रानी के ताने पर नौलखाहार की प्राप्ति के लिए उडीसा जाने तथा वहाँ के नरेश के आश्रित रहने का चित्रण करता है। इससे स्पष्ट है कि यह कथानक बीसलदेव की मृत्यु के बहुत पीछे निर्मित हुआ होगा। 'वीर-काव्य' के सपादक ने इस रचना को वीर-काव्य के अन्तर्गत लेकर उचित नही किया है।

इसके पश्चात् पृथ्वीराज रासौ की स्थिति पर विचार करना उचित प्रतीत होता है। यह चन्दबरदाई का रचा एक बहुत बडा ग्रन्थ माना जाता है जो कि पृथ्वीराज का दरबारो कवि और मत्री था। प० गौरी-शकर हीराचद ओझा इस ग्रन्थ को जाली मानते हे इसके लिये वे निम्न-लिखित प्रमाण देते है—

(१) पृथ्वीराज रासौ चौहानो की उत्पत्ति अग्नि से मानते है जो कि आबू के यज्ञ से हुई थी। परन्तु जयानक कृत पृथ्वीराज विजय सस्कृत काव्य मे चौहानो की उत्पति सूर्य से होना बतलाया गया है।

(२) चन्द कृत चौहान वशावली न तो पृथ्वीराज विजय से मिलती है और न राजसिह राणा के स० १७३२ वि० के बिजौलिया वाले शिला-लेख से ही मेल खाती है।

(३) रासौ मे पृथ्वीराज का जन्म दिल्ली नरेश अनगपाल की पुत्री कमला के गर्भ से होना बतलाया गया है परन्तु पृथ्वीराज विजय एव हम्मीर काव्य मे पृथ्वीराज की माता का नाम कर्पूर देवी कहा हे जो कि त्रिपुरी के हैहय वंशी राजा तेजल की पुत्री थी।

(४) रासौ मे पृथ्वीराज की बहिन पृथाबाई का विवाह मेवाड़ के राणा समरसिंह से होने का उल्लेख है जो कि पृथ्वीराज के साथ शहाबुद्दीन से लड़ता हुआ मारा गया था। यह इतिहास विरुद्ध है : राणा समरसिह इस युद्ध के बहुत पीछे हुए हैं।

(५) रासौ के अनुसार पृथ्वीराज के पिता सोमेश्वर गुजरात के राजा

भीम के हाथो से मारे गये थे और उसका बदला लेने के लिये पृथ्वीराज ने गुजरात पर चढ़ाई की और भीम राजा को युद्ध मे मार गिराया था परन्तु शिलालेख आदि से यह घटना अशुद्ध जान पड़ती है। इसी प्रकार से रासौ मे बहुत-सी घटनाओ का चित्रण अशुद्ध रूप मे हुआ है।

इधर नई खोजो से रासौ के ग्रन्थ चार रूप मे पाये जाते हैं। (१) वृहत् रूपान्तर, (२) मध्यम रूपान्तर (३) लघु रूपान्तर (४) लघुतम रूपान्तर।

वृहत् रासौ का सग्रह राणा अमरसिह ने करवाया था। प्रथम राणा का समय स० १६४२ वि० था कुछ विद्वान् राणा अमर सिंह द्वितीय का सग्रह कराया हुआ मानते हैं जिनका समय स० १७५५ से १८०५ वि० तक था। रासौ की पुष्पिका से विदित होता है कि इसका सग्रह स० १७६० वि० मे किया गया था अतः इसे द्वितीय अमरसिह के काल मे सगृहीत मानना युक्तियुक्त है।

ताज-उल-मा आसीर मे लिखा है कि शहाबुद्दीन गोरी ने अजमेर पर चढाई की और पृथ्वीराज को मार कर उसके लडके गोविन्दराज को राज दे दिया फिर वह दिल्ली चला गया। दिल्ली के राजा ने अधीनता स्वीकार कर ली अतः स्पष्ट है कि दिल्ली और अजमेर अलग-अलग राज्य थे। पृथ्वीराज के कुछ ताँबे के सिक्के मिले है जिन मे एक ओर "अश्वारोही मूर्ति" है और "श्री पृथ्वीराज देव" लिखा है तथा दूसरी ओर एक 'वृषभ मूर्ति' है और "आसावरी श्री सावंत देव" लिखा है। थोडे से सिक्के ऐसे भी मिले हैं जिन पर एक ओर "पृथ्वीराज" का नाम और दूसरी ओर "सुल्तान महम्मद साव" लिखा है। इससे विदित होता है कि पृथ्वीराज अपनी स्वाधीनता गँवा कर गोरी के सावत रूप मे भी रहे थे।

दशरथ शर्मा बीकानेर और मोहन सिह उदयपुर इस समय रासौ की खोज मे लगे हैं ये लोग जैन ग्रथो के आधार पर लघुतम प्रति को शुद्ध ठहराते हैं। फिर भी अब तक इन दोनो साहित्य पुगवो की खोज अधूरी ही जान पड़ती है सुरजन चरित्र, पुरान प्रबध सग्रह, पृथ्वीराज प्रबध, हम्मीर महाकाव्य, आदि ग्रन्थो के प्रकाश मे आ जाने से कुछ नया

प्रकाश रासौ की रचना और उसके समय तथा घटनाओ पर भी पडता है। इससे हम आशा करते है कि कुछ दिनो मे पृथ्वीराज रासौ विषयक समस्या अवश्य हल हो जायगी। अब यह तो निर्विवाद सिद्ध हो गया है कि वृहत रूप वाला रासौ अवश्य जाली है। रहा अन्य रूपो के बारे मे उन पर अभी और भी गभीरता से अन्वेषण, विवेचन और विश्लेषण होने की आवश्यकता है। राजस्थान मे हस्तलिखित ग्रन्थो का अटूट भंडार भरा पडा है उसमे से और भी बहुत से रत्न प्रकट होने की आशा की जा सकती है।

ऊपर के उदाहरणो से यह स्पष्ट हो जाता है कि वीरगाथा काल के नाम से जिस साहित्यिक वातावरण की चर्चा की है वैसी भावना उस काल मे नही थी। अतः नवी शताब्दी से लेकर तेरहवी शताब्दी के काल को वीरगाथा काल नाम देना व्यर्थ है। इस समय पूर्वी प्रान्तो मे ८४ सिद्धो का प्रभाव दिखलाई देता था और पश्चिमी प्रान्तो मे जैन साहित्य का बोलबाला था। इस प्रकार से शौरसेनी और मागधी प्रान्तो मे ऐसी भावनाए कार्य कर रही थी जिससे ओजस्विता, वीर-भावना तथा उत्साह-वर्द्धक सजीवता का ह्रास हो रहा था। इसके साथ ही सगठन-शक्ति का और भी अधिक अभाव था। तेरहवी शताब्दी मे अजमेर, कन्नौज और महोबा के राज्यो की पारस्परिक विरोधी भावना इसका ज्वलन्त उदाहरण है। मोहम्मद शहाबुद्दीन गोरी के भारत पर आक्रमण करते समय देश की यही दशा हो रही थी।

उस समय देश मे राष्ट्रीय-भावना का नितान्त अभाव था। समाजो भिन्न-भिन्न जातियो मे विभक्त हो रहा था बौद्धो और जैनियो मे चमत्कार का प्राधान्य था। संकुचित क्षेत्र मे क्षत्रियत्व तब भी शेष था। परन्तु इनके नेताओ मे अहभाव की मात्रा बढी हुई थी। साथ ही दर्प एव असतुलित असयम शीलता का भी प्राचुर्य था। यही कारण था कि देश छिन्न-भिन्न होकर दासत्व को शृखला मे जकडता चला गया था।

पन्द्रहवीं शताब्दी मे विद्यापति की कीर्तिलता और कीर्तिपताका अपभ्रश भाषा मे वीररस की अत्युच्च कोटि की रचनाएँ है। इनमें

मिथिला नरेश कीर्तिसिह द्वारा असलान को हराने का चित्रण हुआ है जिसमे जौनपुर के नवाब इब्राहीम ने भी कीर्तिसिह को सहायता की थी तथा नैतिक समर्थन दिया था। इन रचनाओ मे वीररस का अच्छा स्फुरण हुआ है। मागधी भाषा मे वीररस की सर्व प्रथम यही रचना दिखलाई देती है। इस दृष्टि से इन दोनो रचनाओ का स्थान और भी ऊँचा हो जाता है। विद्यापति ने सस्कृत, अपभ्रश, मैथिल भाषा सभी मे सफल रचना की है अतः ये सर्वतोमुखी प्रतिभा लेकर ही भारत भूमि पर अवतीर्ण हुए थे। परन्तु वीररस की उक्त दो ही रचना अब तक उपलब्ध हो सकी हैं।

इसी शताब्दी के उत्तरार्द्ध मे श्रीधर नामक कवि ईडर मे हुआ था जो वहाँ के राजा रणमल राठौर का दरबारी कवि था। इसने रणमल छन्द नामक छोटा सा ग्रथ रचा था जिसमे पाटण के सूबेदार जफर खॉ और रणमल के युद्ध का वर्णन है। यह युद्ध स० १४५४ वि० मे हुआ था जिसमे रणमल विजयी हुए थे।

पन्द्रहवी शताब्दी के अन्त मे शिवदास नामक चारण कवि ने "अचलदास खीची री वचनिका" नामक एक छोटा-सा ग्रथ रचा था जिसमे गागरौन के खीची राजा अचलदास का मॉडौ के बादशाह होशगशाह से युद्ध का वर्णन गद्य-पद्य मे किया गया है इस युद्ध मे अचलदास मारे गये थे।

सोलहवी शताब्दी के अन्त मे सूजा जी नामक चारण कवि ने "राव जैतसी री छन्द" नामक ग्रथ की रचना की थी। इसमे बाबर के पुत्र कामरान और बीकानेर नरेश राव जैतसी के युद्ध का चित्रण किया गया है जिसमे कामरान पराजित हुआ था। मुसलमान इतिहासकारो ने इसका उल्लेख नही किया। इस रचना मे वीररस का अच्छा स्फुरण हुआ है।

सोलहवी शताब्दी के पश्चात् अकबर बादशाह के शासन काल मे देश ने सतोष की सास ली। इस बीच वीररस के कई अच्छे कवियों का प्रादुर्भाव हुआ था जिनमे सूजा, जटमल और दुरसा का नाम अधिक प्रसिद्ध हैं। परन्तु इस काल मे एक दूसरी धारा भी तीव्र गति से आगे आ रही थी

जिसे 'रीति कालीन कविता' के नाम से अभिहित किया जाता है। इसने भारतीय सामाजिक जीवन और राज दरबारों को शृगार रस से ऐसा अभिभूत कर दिया कि वीररस और उत्साह का अत्यन्त ह्रास हो चला था। सत्रहवीं शताब्दी मे इसी रस की प्रधानता थी।

अट्ठारहवी शताब्दी के प्रारम्भ मे औरगजेबी शासन देश प्रतिष्ठित होता है इसकी शासन प्रणाली अपने पूर्वजो से भिन्न थी अतः हिन्दुओ, शिया मुसलमानो और परिवार वालो पर अनेक प्रकार के अत्याचार किये थे। चित्तौड के राणा राजसिह से भी खूब झडपे हुई जिसका वर्णन मान कवि ने अपने 'राज विलास' मे विस्तार पूर्वक किया है, यह रचना वीररस और उत्साह से पूर्णतया ओतप्रोत है। इन्ही परिस्थितियो मे भूषण का जन्म, शिक्षण और उत्थान हुआ था।

भूषण ने शिवाजी का आदर्श लेकर सारे देश मे दौरा लगाया था। राज दरबारो मे भूषण की ओजस्विनी कविताओ का ऐसा प्रभाव पडा कि शृगारिक उच्चकोटि के कवियो की उक्त दरबारो मे पूछ अत्यन्त कम हो गई। यही नहीं इस महाकवि के प्रभाव से गोरेलाल, रतन, सदानन्द, भूधर, सारंग, नाथ आदि कई वीररस के उत्कृष्ट कवियो का अविर्भाव हुआ था। यहाँ तक कि राजा भगवन्त राय खीची जैसे महानुभाव भी शासन की महत्ता बढाने के साथ उच्चकोटि की वीररसमयी रचना करते दृष्टिगोचर होते है।

वीरकाव्य की यह परम्परा किसी न किसी रूप मे स्वातन्त्र्य सग्राम के अतिम चरण तक चली आई। कालचक्र इसे निःशेष नही कर सका। परन्तु इस विकास-क्रम मे इसे कई मोड़ो से होकर गुजरना पडा है। यहाँ तक कि अब इसका विषय-क्षेत्र युद्धवीर तक ही सीमित नही रह गया है। सत्यवीर, धर्मवीर, दानवीर, तथा त्यागवीर आदि कई क्षेत्रो मे इसका प्रसार होता आ रहा है। इस प्रकार वीरकाव्य द्वारा राष्ट्रोत्थान का कल्याणकारी मार्ग अनुदिन प्रशस्त होता जा रहा है।

भगीरथ प्रसाद दीक्षित

विषय-सूची

संग्रह खण्ड

१. जीवनी खण्ड

विषय प्रवेश

अकबर बादशाह ने भारत मे जिस शान्ति और सुख की वृद्धि करके देश को धन-धान्य पूर्ण कर दिया था वह तीन पीढी तक अपना उत्कर्ष बनाये रखने मे सफल हुआ और लगभग सौ वर्ष का वह वैभव पूर्ण शासन मुसलमानी काल मे अपनी समता नही रखता, आज भी मुमताज महल का रौजा, मोती मसजिद, दिल्ली का किला, आगरे का किला, सीकरी के महल तथा सिकदरा का मकबरा उनकी यादगार को ताजा बनाये हुए है। ये इमारतें तत्कालीन शासको के सजीव चिह्न हैं। जिनके देखने के लिये विश्व के यात्री आगरे की यात्रा करने मे अपना गौरव मानते है। यही नही, इसे विश्व के सप्ताश्चर्य मे से एक का गौरव भी मिला हुआ है। शाहजहाँ बादशाह के इस गौरवमय काल के पश्चात् औरगजेब का ऐसा कलुषित पूर्ण, अनाचार से भरा हुआ, साम्प्रदायिकता के पक्षपात से युक्त शासन आता है जिसने मुगलिया शासन की जड ही नही हिला दी वरन् उसका अन्त ही कर दिया।

इस औरगजेबी अत्याचार को नष्ट भ्रष्ट करने और उस पर हावी होकर राष्ट्र को सत्पथ दिखाने मे महाकवि भूषण ने सबसे अधिक महत्व-पूर्ण कार्य किया और उसे सफलता की सीमा तक पहुँचा दिया इसी मे इस महाकवि की महत्ता निहित है। इस महान् कार्य के सम्पन्न करने मे उसे क्या-क्या भगीरथ प्रयत्न करने पडे और किन-किन राजा-महाराजाओ को भूषण ने अपने सगठन मे सम्मिलित करके साधना का क्षेत्र प्रस्तुत किया था इसी की विवेचना और क्रिया-कलापो का विस्तार इस रचना मे किया जायगा।

भूषण ने अपनी कार्य शैली मे शिवाजी को प्रमुख स्थान दिया था। उसका मुख्य कारण यह नही था कि वे शिवाजी के दरबार मे राजकवि

थे, वरन् यह था कि उन्होने शिवाजी के आदर्श पर राष्ट्र का सगठन किया था। क्योकि इसी छत्रपति शिवाजी ने दक्षिण मे औरगजेब के छक्के छुडा दिये थे। इसके सरदार एव सिपाही शिवाजी के आतक से ऐसे थरथर कापते थे कि दक्षिण मे जाने का नाम नही लेते थे। इसीलिये वे उसे ईश्वर का अवतार मानने मे भी नही हिचके थे। भूषण छत्रपति शिवाजी के दरबार मे कदापि नही थे उनका जन्म ही शिवाजी की मृत्यु के एक वर्ष पीछे हुआ था अतः उक्त किवदन्ती नितान्त अनर्गल और मिथ्या है, जिसने भूषण कवि की महत्ता को ही लोप कर दिया है साथ ही उनके अत्यन्त उच्च कोटि के महत्वपूर्ण कार्यो को एक दूसरा ही रूप दे दिया गया है। इस प्रकार से पिछले २५०-३०० वर्ष के अज्ञानान्धकार ने वास्तविक इतिहास पर मोटा पर्दा डाल दिया है अन्य महाकवि तुलसी, सूर आदि के विषय मे भी यद्यपि अनेक भ्रमपूर्ण बातो के फैल जाने से यथार्थता लोप-सी हुई दिखलाई देती है। पर महाकवि भूषण के विषय मे तो यह बात और भी अधिक विस्तार से की गई है। इन्ही किवदन्तियो के सहारे हमारे चरितनायक का चित्र बिल्कुल उलट दिया गया है जिसमे सत्य-भावना का बहुत ही थोड़ा अश शेष रह गया है।

इसी कारण से जब सन् १६२२ ई० मे महाकवि भूषण पर मेरा प्रथम लेख नागरी प्रचारिणी पत्रिका मे प्रकाशित हुआ तो पुरानी शैली के साहित्यको मे एक उथल-पुथल-सी मच गई। उन्होने उन्ही किवदन्तियो का सहारा लेकर नवीन खोज का नव निर्मित भवन ढहा देना चाहा। परन्तु उस अन्वेषण का आधार सत्य और ज्ञान को पक्की नीव पर आश्रित था। मतिराम कृत वृत्त कौमुदी की वंशावली ने किवदन्तियो की कल्पित इमारत को एक ही धक्के मे भूमिसात् कर दिया। यह विवाद २५ वर्ष तक बराबर चलता रहा। जिस मे अनुसधान के सहारे भूषण के जीवन-चरित्र को एक बिल्कुल नया रूप मिल गया। 'वादे वादे जायते तत्व बोध': की कहावत के अनुसार भूषण कवि पर-छिडे विवाद ने उनके विषय मे फैले हुए भ्रम और अज्ञान को बहुत कुछ दूर कर दिया।

इस विचार विनिमय मे केवल मेरी ही खोज ने इस महाकवि के चरित्र को परिष्कृत करने का प्रयत्न नही किया वरन् विरोधी पक्ष लेने वाले याज्ञिक त्रय, मिश्र बंधु, तथा प० कृष्ण विहारी जी मिश्र आदि के लेखो से भी मुझे अनुकूल सामग्री प्राप्त हुई थी जिसके लिये मै उक्त सज्जनो का हृदय से आभारी हूँ।

इस कवि के विषय मे मुझे अनेक लम्बी-लम्बी यात्राए करनी पडी। रीवॉ राज्य के पटेहरा नामक गॉव से सुरकी वंश की वशावली प्राप्त हुई थी। हृदयराम सुरकी के बारे मे स्टेट रेकर्ड से भी कुछ मसाला मिला था। असनी (फतहपुर) से तो उक्त वृत्त कौमुदी ही खोज मे मिली थी। भरतपुर, तिकमापुर, नारनौल, पटियाला, भिनगा आदि स्थानो मे पुस्तकालयो की ढूँढ ढाढ ने मुझे इतनी अधिक सामग्री दी कि विरोधी पक्ष वालो के उत्तर सप्रमाण दे सका 'भूषण विमर्श' की रचना उसी खोज पर अवलबित है। इधर नये सस्करण मे कुछ और भी नवीन सामग्री सम्मिलित कर दी गई है।

भूषण कवि के विषय मे कितना गहरा भ्रम फैला हुआ था इसका इसी से अनुमान कर सकते है कि उनके असली नाम तक का साहित्यिको को पता न था। उनका शिवाजी से क्या सबध था ? क्यो इस महाकवि ने शिवाजी की इतनी अधिक प्रशसा की ? उनके भाई कौन-कौन थे ? वे किन-किन दरबारो मे गये थे ? उनकी जन्मभूमि कहाँ थी ? तिकमापुर मे कब जा बसे थे ? जन्मकाल और 'शिवराज भूषण' का निर्माण काल क्या है ? उनकी रचना का उद्देश्य क्या था ? इत्यादि बातो का विवेचन करना ही इस रचना का उद्देश्य है जिसके विषय मे केवल अनुमान एव किंवदन्तियो का सहारा लेकर ही लेखक गण काम चला रहे थे। इस प्रकार से कवि के जीवन-चरित्र, उसकी ग्रन्थ रचना, भाषा और शैली तथा रचना की विवेचना और विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए कुछ बाते पाठकों के सम्मुख रखने का प्रयत्न किया जायगा।

महाकवि भूषण वीर रस के प्रमुख कवि हैं। इनकी रचनाओ मे

इसी की प्रधानता है। अतः वीर रस के स्थायी भाव की पूर्ति हम इसी कवि से कर सकते है। अन्य किसी कवि की रचना मे वीर रस का इतना उत्कृष्ट एव गहरा परिपाक नही मिलता। यही बात भूषण को अन्य कवियो से भिन्न कर देती है। इस महाकवि की रचनाओ मे उत्तेजनात्मक एवं उत्साह जनक दोनो प्रकार को भावनाओ का बाहुल्य है जो कि 'शिवा-बावनी' तथा 'शिवराज भूषण' के अध्ययन से सरलता से जाना जा सकता है। 'शिवाबावनी' के छन्द पढते ही जनता मे जोश का समुद्र उमड आता है, वे रचे ही इसीलिये गये है जो कि सेना सचालन के समय नव जीवन देकर उत्तेजित करने मे समर्थ हो सकें। इसी प्रकार से 'शिवराज भूषण' के अधिकाश छन्द गभीर और स्थायी उत्साह भरने मे पूर्ण प्रभाव रखते है। भूषण की इसी विशेषता ने उसे सफल राष्ट्रीय कवि के रूप मे प्रति-पादन किया है। यही नहीं उसने अपने साहस पूर्ण प्रयत्न द्वारा स्वराज की सृष्टि करके औरगजेबी शासन को ही ध्वस्त कर दिया था। अँग्रेजी शासन के भारतीय पुर्जो ने अपने तथा अपनी सरकार के ऊपर इसका प्रभाव न पडने पावे इस भय से भूषण विषयक नई खोज का तीव्र विरोध किया। परन्तु वे सब नितान्त असफल हुए अन्त मे इसी के फलस्वरूप भारतीय राष्ट्र को स्वराज्य की कुजी जनता के हाथ लग गई। भूषण की रचना मे उत्साह वर्द्धन के साथ राष्ट्र निर्माण की भी पर्याप्त सामग्री प्रस्तुत है।

पिछले २१५० वर्ष के दासत्व मे भारतीय समाज लगातार पददलित होता चला आया है। मध्यकालीन सन्त कवियो ने भी वैराग्य की महत्ता बढाकर हमारे उत्साह को मद कर दिया था। सस्कृत के शृगारी कवियो ने तो देश मे स्त्रैणता का प्रसार किया ही तुलसी-सूर आदि ने भी उसी भावना को बल दिया जिसे भास, कालिदास, भवभूति तथा श्रीहर्ष आदि ने पनपाया था। रीतिकालीन कवियो मे देव, बिहारी आदि ने जो कुछ लिखा वह श्रेयस्कर नही सिद्ध हुआ। इसी का यह परि-णाम हुआ कि हम दासता पर दासती लादते चले आये। यवन, शक, यूची, कुशाण, हूण, मुसलमान और अग्रेज सभी की दासत्व शृखला

हमारे पैरो को जकडती गई साथ ही उनके दोष के भी हम भागी बने। ये हो कारण हैं जिन से हम उबर नही पाये है। अतः उत्साह के श्रोत —भूषण की रचना—को बिना अपनाये हम मे नव जीवन का सचार हो ही नही सकता। भूपण के पश्चात् उस देन की रक्षा हम नही कर पाये इसी से हम फिर दासता मे जकड गये थे। यदि हमने अब फिर गफलत की तो देश का ही नही विश्व का भी महान अहित होने की सभावना है। क्योकि भूपण की रचना मे उत्साह भरने के साथ ही राष्ट्र निर्माण और आध्यात्मिकता दोनो का ही गहरा पुट लगा हुआ है। आशा है देश इस भावना को तत्परता से अपनाने का प्रयत्न करेगा। ताकि वह शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, आर्थिक, वैज्ञानिक तथा आध्यात्मिक सभी भावो की पूर्ति करने मे फलीभूत हो सके। उत्साह जीवन का सर्वोत्कृष्ट श्रोत होने के कारण नव उद्भावनाओ, स्फूर्तियों एव आविष्कारो का जनक होगा जिससे अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष सभी पदार्थों की प्राप्ति हो सकती है। भूपण की रचना मे वैदिक भावना की ही प्रधानता है। अत• इसकी भावना उन दोपो से बहुत कुछ मुक्त है जिसमे विदेशी आक्रान्ताओ ने अपनी प्रेरणा देकर समाज को कलुपित बना दिया है। इसीलिये हमें इस महाकवि की रचना का गभीर अध्ययन करना चाहिये तभी हमें आगे बढने के लिये पथ पा सकते है।

परिस्थिति

महाकवि भूषण के जन्म-काल मे देश की परिस्थिति बड़ी विचित्र हो रही थी। एक ओर औरङ्गजेबी शासन अत्याचार की सीमा पार कर रहा था उसने अपने भाइयो का बेरहमी से कत्ल करवा डाला था। हिन्दुओ पर जजिया कर लगा कर उनकी धार्मिक भावनाओ पर गहरी ठेस लगाई थी। सैकडो मदिर, मसजिद के रूप मे परिणित किये जा चुके थे। यहाँ तक कि विश्वनाथ मठ, केशव राय का देहरा, ज्ञानवापी तथा जामा मसजिद के रूप मे परिणित कर दिये गये थे। शंख बजाना एक अक्षम्य अपराध करार दे दिया गया था। चन्दन लगाने तथा कठी पहनने का किसी को साहस नही होता था। जोधपुर का राज परिवार जो कि सच्चे दिल से बादशाही सेवा मे निरत था उसे षड्यन्त्रो द्वारा मरवा कर उस के राज्य को हडपने का प्रयत्न किया गया जिसे बीरवर दुर्गादास राठौर ने बडे ही प्रयत्न से बचाया। जयपुर नरेश मिर्जा जयसिह की भी वैसी ही दुर्दशा की गयी तथा राजकुमार समेत उसे विप दिलवा कर अन्त्येष्टि करवा दी गई थी। भारत मे सभवतः एक भी हिन्दू या भारतीय ऐसा न था जो हृदय से औरङ्गजेब का साथ देना चाहता हो फिर भी बहुत बडी सख्या उसकी अनुगामिनी हो रही थी यह राजनीतिक दासता की पराकाष्ठा थी। औरङ्गजेब ने हिन्दुओ पर ही अत्याचार नही किये शाह मोहम्मद जैसे सूफी सन्त की अत्यन्त दुर्दशा कर डाली थी और सरमद फकीर को तो शूली ही पर चढा दिया था। शियाओ पर भी भयकर अत्याचार किये थे। सिक्खो के गुरु तेगबहादुर को भी शूली दे दी थी तथा गुरु गोविन्द-सिंह के दो बच्चो को जिन्दा दीवार मे चुनवा दिया था, सतनामी साधुओ का आम कत्ल करवा के उनके वश-क्षय का ही प्रयत्न किया गया था।

इस प्रकार से इधर तो अत्याचार की पराकाष्ठा मे त्रस्त हिंदू जाति किंकर्तव्य विमूढ, हो रही थी दूसरी ओर उनमे विलास-प्रियता का तीव्र

प्रवाह बह रहा था राजदरबारो तथा बादशाही आम-खास मे शृगारिक भावना का वेग प्रबलता पर था यही रीतिकालीन रचना के नाम पर गन्दे से गन्दे और अश्लील साहित्य की सृष्टि हो रही थी। इनके दरबार शृङ्गारी कवियो से भरे पड़े थे जो कि राजाओ-नबाबो तथा सरदारो की चाटुकारी के साथ उन्हे स्त्रैणता के गहरे समुद्र मे गोते लगवाने मे निरत थे। किसी मे भी देश, समाज अथवा राष्ट्र के उत्थान, सगठन तथा मर्यादा-निर्धारण का विचार तक उत्पन्न नही हो रहा था। इन्ही दो चक्कियो के पाटो के बीच मे सारा देश बुरी तरह पिसा जा रहा था, मुख्यतया हिन्दू समाज की दशा तो अत्यन्त शोचनीय हो रही थी। फिर भी वह बलिदान के बकरे की भॉति चने की दाली चबाने मे ही अपने को गौरवान्वित समझ रहा था। ऐसा क्यो था इस पर आज भी देश और समाज विचार करने को प्रस्तुत नही जान पड़ता, और न इतिहास की कडियॉ सुलझाने की ही ओर अग्रसर होता दिखलाई देता है।

महाकवि 'भूषण' का जन्म इन्ही परिस्थितियो मे हुआ था। बनपुर अनेक उच्चकोटि के कवियो की जन्म-भूमि थी उन सबमे ही वही रीतिकालीन शृगारिक भावना का प्राधान्य था। यही नही भूषण के बड़े भाई चिन्तामणि तक उसी औरगजेबी दरबार मे स्त्रैण उपासना मे लीन थे। अत. भूषण भी रीतिकालीन नायिकाभेद के चक्कर से न बच सके। फिर भी अपने पिता की स्वतन्त्र वृत्ति व दुर्गा जी की उग्र उपासना एव राजनीतिक घात-प्रतिघातो की थपेड ने उन्हे सजग कर दिया तथा गीता के 'धर्म संस्थापनार्थाय' भावानुकूल वे अपना देश-उद्धार-पथ अन्वेषण करने मे निरत हुए। अतः इसी भावना ने उन्हे शृगार रस का परित्याग करके वीर रस की ओर अग्रसर कर दिया, जिससे औरगजेब की सारी शक्ति क्षीण पड गई और राष्ट्र मे ऐसा उत्साह एव ओज तथा उत्तेजना के साथ नवजीवन का सचार हुआ कि जिसकी आशा स्वप्न मे भी नही की जा सकती थी। यही महाकवि भूषण की महत्ता है जो कि अन्य कवियो से उसे अलग कर देती है।

यहाँ पर यह बतला देना उचित प्रतीत होता है कि औरंगजेब केवल हिन्दुओं का ही शत्रु नही था मुसलमानो का भी वैसा ही शत्रु था जैसा कि ऊपर के कथन से स्पष्ट है। वह किसी पर विश्वास नही करता था केवल सुन्नी मुसलमानो को अपनी ओर इसलिये मिला रखा था ताकि शासन और साम्राज्य की रक्षा की जा सके। फिर भी अपने स्वार्थ के लिए उन्हे भी नीचा दिखाने मे नही चूकता था। इसी से वह राष्ट्र का पक्का शत्रु था। भूषण ने इसीलिये उसे प्रतिनायक के रूप से चुना था। अतः भूषण पर न तो साम्प्रदायिकता का दोष लगाया जा सकता है और न जातीय पक्ष पात का। वरन् औरंगजेब की भर्त्सना उन्होने केवल इसीलिये की कि वह अत्यन्त तास्सुबी एव सम्प्रदाय पक्षपाती तथा राष्ट्र व देश का शत्रु था। इसी कारण वह हिन्दुओं को तो नीचा दिखाना ही चाहता था। साथ ही शिया मुसलमानो का विरोध कर सुन्नियो का समर्थन ग्रहण करना मात्र ही उसे अभीष्ट था। दारा को शाहजहाँ का प्रेम प्राप्त था साथ ही हिन्दुओं की सद्भावना मे निरत होने से उनका हृदय स्वाभाविक ही उसी ओर आकर्षित हो रहा था, अतः औरंगजेब इन सब लोगो को एक साथ ही निकाल फेंकने के लिये उत्सुक था। ये ही सब कारण थे जिससे वह सबको ही सन्देह की दृष्टि से देखता था। भूषण के हृदय मे इसी राजनीति का विश्लेषण व आलोडन था जिसके प्रतीकार मे वे दत्त-चित्त से विचार मग्न थे तथा उन्हे कार्य रूप मे परिणत करने का प्रयत्न कर रहे थे।

जन्म-काल तथा जन्म-स्थान

महा कवि भूषण के जन्म-काल तथा जन्म-स्थान दोनो ही के बारे मे अत्यन्त भ्रम फैला हुआ है। किसी ने यह समय स० १६७२ वि० तथा किसी ने स० १६६२ वि० माना था। यह जन्म-काल इसी लिए कल्पित कर लिया गया था ताकि भूषण को शिवाजी का दरबारी कवि ठहराया जा सके। इन साहित्य के इतिहासकारो ने 'शिवसिह सरोज' के कथन की भी चिन्ता नही की जिसकी रचना ही भूषण-मतिराम के सम्बन्ध मे फैले भ्रम को दूर करने के लिए हुई थी।[1] उसमे चिन्तामणि का जन्म स० १७२६ वि० और भूषण का जन्म समय स० १७३८ वि० वर्णित[2] है। शिवसिंह सेगर का निवास स्थान काथा (उन्नाव) भूषण के वास-स्थान तिक्रमापुर (कानपुर,) से १५-२० मील के ही अन्तर पर है। मतिराम के एक वशज उक्त सेगर जी के साथ 'सरोज' रचना मे सहायता कर रहे थे। अतः इसकी सत्यता मे सदेह नही किया जा सकता। इन सब प्रमाणो के साथ स्वय भूषण के कथन से भी इसकी पुष्टि हो जाती हैं। इसे आप भूषण के ही शब्दो मे अवलोकन कीजिये –

सम[3] सत्रह सैंतीस पर, शुचि वदि तेरसि भान।
भूषण शिव भूषण कियो, पढियो सुनौ सुज्ञान॥

शिवराज भूषण, छन्द ३८०

इसमे श्लेष से भूषण का जन्म काल तथा शिवराज भूषण का निर्माण[4] काल दोनो का ही उल्लेख किया गया है। वे कहते है —

---

[1] देशिवसिह सरोज की भूमिका पृ० १

[2] शिवसिह सरोज पृ० ४६७

[3] नवल किशोर प्रेस से प्रकाशित प्राचीन प्रति

[4] भूषण विमर्श पृ० ४५

सवत् १७३७ वि० के पश्चात् अर्थात् स० १७३८ वि० मे आषाढ बदी १३ रविवार के दिन देवाधिदेव शिवजी ने भूषण को जन्म दिया। गणित से भी यह तिथि ठीक प्रमाणित होती है। अतः सरोजकार के कथन मे कोई सन्देह के स्थान नही रह जाता। इसी आधार पर शिवराज भूषण का निर्माण काल स० १७७३ वि० ठहरता है। अब जन्म-स्थान पर विचार कीजिये। वृत्त कौमुदी मे मतिराम ने अपना निवास स्थान बनपुर (जिला कानपुर) बतलाया है इसे कवि के ही शब्दो मे अवलोकन कीजिए—

तिरपाठी बनपुर बसै, बत्स गोत्र सुनि गेह।
विबुध चक्रमणि पुत्र तहँ, गिरिधर गिरिधर देह ॥[1]

इसमे मतिराम ने अपना स्थान बनपुर बतलाया है इस वृत्त कौमुदी की रचना स १७५८ वि० मे हुई थी। इसके पश्चात् मतिराम के पन्ती कवि बिहारी लाल ने विक्रम सतसई की रत्नचन्द्रिका नामक टीका मे अपना निवास स्थान और अपने पूर्वजो के तिकमापुर जा बसने का उल्लेख इन शब्दो मे किया है —

बसत त्रिविक्रमपुर नगर, कालिन्दी के तीर।
विरच्यौ वीर हमीर जनु, मध्य देश कौ हीर॥
भूषन चिन्तामनि तहाँ, कवि भूषन मतिराम।
नृप हमीर सम्मान ते, कीन्हो निज निज धाम ॥[2]

इससे स्पष्ट हो जाता है कि उक्त तीनो कवि सं० १७५८ वि० तक बनपुर मे रहते थे और शिवराज भूषण के निर्माण-काल के अवसर पर

---

[1] वृत्त कौमुदी प्रथम सर्ग छन्द २१

[2] विक्रम सतसई की रसचन्द्रिका टीका प्रथम शतक तथा माधुरी पत्रिका ज्येष्ठ सं० १९८१ वि० शिवराज भूषण, छन्द २६

वे स० १७७३ वि० से पूर्व तिकमापुर में जा बसे थे। भूषण ने भी इसका उल्लेख किया है—

द्विज कनौज कुल कस्यपी, रतनाकर सुत धीर।
बसत त्रिविक्रमपुर सदा, तरनि तनूजा तीर॥

इससे स्पष्ट हो जाता है कि भूषण का जन्म स्थान बनपुर था और फिर निवास स्थान तिकमापुर को बना लिया था।

वंश-परिचय

महाकवि भूषण (मनिराम) का जन्म त्रिपाठी कुल मे हुआ था जो कि कान्यकुब्ज ब्राह्मण कश्यप गोत्र मनोह के तिवारी[1] थे। इनके पिता रत्नाकर बडे ही सात्विक ब्राह्मण और तपस्वी वृत्ति से समय यापन करते थे। तथा शिव के उपासक होते हुए भी दुर्गा के परम भक्त थे। इसी-लिये वे एक मठिया बनवा कर उसी मे ध्यान-मग्न हो दुर्गा सप्तशती के पाठ और दूसरे अनुष्ठानो मे निरत रहते थे। सस्कृत के विद्वान होते हुए भी ब्रजभापा मे कविता करना अपना गौरव समझते थे। परन्तु उनकी कविता का कोई उदाहरण अब तक नही मिला। रत्नाकर के दो पुत्र थे ज्येष्ठ चिन्तामणि और छोटे मनिराम थे।

चिन्तामणि का जन्म स० १७२६ वि० मे बनपुर मे हुआ था। इन्होने भी सस्कृत साहित्य, कोश और व्याकरण आदि का अच्छा अध्ययन किया था, तथा अलकार व पिगल शास्त्र का अध्ययन कर ब्रजभापा मे कविता का अभ्यास करने लगे। उन दिनो बनपुर मे अनेक उच्चकोटि के कवि रहते थे अतः उनका प्रभाव इन दोनो भाइयो पर भी बिना पडे नही रहा। फिर पैतृक वृत्ति भी यही बन रही थी।

मनिराम (भूषण) का जन्म स० १७३८ वि० मे आपाढ वदी १३ रविवार के दिन हुआ था इस प्रकार से भूषण अपने बडे भाई चिन्तामणि से नौ वर्ष छोटे थे। चिन्तामणि क्रमश. उत्कर्ष करते हुए औरगजेब के दरबार मे जा पहुँचे थे। परन्तु भूषण की मनोवृत्ति इससे भिन्न पथ का अनुसरण कर रही थी। इन्होने भी संस्कृत का अच्छा अध्ययन किया

---

[1] चिन्तामणि कवि कृत रामाश्वमेध की पुष्पिका।

[2] शिवसिह सरोज पृ० ४१२।

था तथा वेद, कोश, व्याकरण, साहित्य, दर्शन, अलकार एव पिगल शास्त्र का गभीर अध्ययन के पश्चात् ब्रज-भाषा मे कविता करने लगे ।

इनकी भावना परिस्थिति के प्रभाव से कुछ प्रतिकार की ओर बढ रही थी तथा औरंगजेब के अत्याचारो के कारण ये उससे घोर घृणा करते थे । साथ ही अत्याचार के प्रतिरोध के लिये उत्साह, उत्तेजना, और साहस अपेक्षित था । अतः इन्हे स्वाभाविक ही शृंगार से उपेक्षा होने लगो थी । फिर भी समय के प्रवाह मे बहे बिना न रह सके अतः इन्होने भी कुछ रचनाएँ नायिकाभेद आदि पर रची है । परन्तु इनमे भी विशेपता इस बात की पाई जाती है कि गहरा और अश्लील शृगार उनमे नही आने पाया है ।

इनके बचपन के सबध मे कई किवदन्तियाँ प्रचलित है परन्तु उनमे से कोई भी विश्वास के योग्य नही है अतः उनकी चर्चा करना यहाँ व्यर्थ प्रतीत होता है । इनके पूर्वजो के बारे मे अधिक वृत्त ज्ञात नही है और न खोज से हो कुछ पता लग पाया है । इन दोनो भाइयो ने भी इस विषय मे कुछ अधिक प्रकाश डालने का प्रयत्न नहीं किया अतः हम भी कुछ वर्णन करने मे असमर्थ है । फिर भी आश्रयदाता और जन्म-स्थान तथा समय के बारे मे जो कुछ ज्ञात हो सका है उसी पर सतोष करना पड़ता है । भविष्य के लिये प्रयत्न जारी रखने की आवश्यकता है ।

वास्तविक नाम

हमारे चरितनायक को 'कविभूषण' की उपाधि चित्रकूट नरेश हृदय-राम सुरकी द्वारा मिली थी। अतः 'भूषण' कवि का असली नाम नही है जैसा कि स्वय भूषण के कथन से स्पष्ट है —

> कुल सुलक चित्रकूट पति साहस सील समुद्र।
> कवि भूषण पदवी दई, हृदयराम सुत रुद्र॥
>
> शि० भू०, छन्द २८

इस असली नाम की खोज मे भी विद्वानो ने बहुत-से कुलावे मिलाये, परन्तु सभी असफल हुए। किसी ने इनका नाम मतिराम के वजन पर 'पतिराम' ठहराया किसी ने 'कनौज' और किसी ने कुछ और नाम दिया कोई कोई भूषण ही कवि का मूल नाम मानते है। परन्तु ये सब अनुमान अशुद्ध प्रमाणित हुए है।

सुरकी वशावली जो पटेहरा से मिली है उसमे रुद्रराम का नाम प्रथम आता है और हृदय राम का उसके बाद अतः अनुमान से ऐसा प्रतीत होता है कि हृदयराम सुरकी रुद्रराम के पुत्र थे। ऐतिहासिक काल भी इसी से मेल खा जाता है हृदयराम का समय स० १७५५ वि० के लगभग पडता है अतः इसी के आस पास हमारे चरितनायक को 'भूषण' की उपाधि मिली थी।

पं० बद्रीदत्त पाडे कृत कुमाऊँ के इतिहास मे एक घटना का उल्लेख मिलता है, उसमे वर्णित है —

"कहते है सितारा गढ नरेश साहू महाराज के राजकवि 'मनिराम' राजा के पास अलमोडा आये थे। उन्होने राजा की प्रशंसा मे यह कवित्त बनाकर सुनाया था। राजा ने दस हैजार रुपये और एक हाथी इनाम मे दिया। वह छन्द इस प्रकार है —

पूरण पुरुष के परम दृग दोऊ जानि,
'कहत पुरान वेद बानि जोरि रढ़ि गई।
दिन पति ये निशापति ज्यो,
दुहुन की कीरति दिशानि माँझि मढ़ि गई॥
रवि के करण भये महादानि यह,
जानि जिय आनि चिन्ता चित्त मांझि चढ़ि गई।
तोहि राज बैठत कुमाऊँ श्री उदोत चन्द,
चन्द्रमा की करक करेजेहू ते कढ़ि गई॥'[1]

चूँकि साहू महाराज के दरबारी कवि केवल 'भूषण' ही थे अन्य कोई नही, अतः मनिराम हमारे चरित नायक भूषण का ही वास्तविक नाम था। यह निर्विवाद रूप से सिद्ध हो जाता है।

भूषण और मतिराम

महाकवि भूषण के भाई कौन-कौन थे यह भी एक विवादग्रस्त विषय है। शिवसिंह सरोज मे चिन्तामणि, मतिराम, भूषण और नीलकठ (जटाशङ्कर) ये चार भाई बतलाये गये है। सरोजकार ने चिन्तामणि को बडा भाई बतलाया है। अमीरअली बिलग्रामी ने अपने फारसी के ग्रथ 'तजकिरए सर्व आजाद' मे चिन्तामणि को बडा भाई मतिराम को मझला और भूषण को छोटा भाई ये तीन ही भाई लिखे हैं। सूर्यमल ने अपने 'वंशभास्कर' मे भूषण को बडा भाई चिन्तामणि को मँझला तथा मतिराम को सब से छोटा भाई कहा है हिन्दी के इतिहासकारो ने 'सरोज' का सहारा लेकर उक्त चार भाइयो का ही उल्लेख करना ठीक माना है। इस विषय पर उन्होने कोई ऊहापोह नहीं की। मतिराम के पॉच आश्रयदाता ये हैं —

---

[1] कुमाऊँ का इतिहास, पृ० ३०२

[2] भूषण विमर्श, पृ० ७

(१) फतहशाह (श्रीनगर, गढवाल नरेश) स०१७४१ से १७७३ तक

(२) उद्योतचन्द व ज्ञानचन्द (कुमाऊँ पति) स० १७४५ वि० से २७६५ वि० तक

(३) स्वरूपसिह बुन्देला (कुडारपति) स० १७५८ वि० के लगभग

(४) भगवन्त राय खीची (असोथर नरेश) स० १७७० वि० से १७९२ वि० तक

इन पॉच आश्रयदाताओ मे न० ३ को छोड कर शेप चार आश्रय-दाता भूषण के भी ह । अतः भूषण और मतिराम का समकालीन होना तो निर्विवाद है। अब विचारणीय विपय यह है कि क्या ये दोनो कवि सहोदर बन्धु भी है । इस सबध मे उक्त दोनो कवियो के कथनो पर ही विचार करना श्रेयस्कर होगा । मतिराम ने अपने वश का वर्णन करते हुए निम्न पद्य दिये है —

तिरपाठी[1] बनपुर बसैं, वत्सगोत्र सुनि गेह ।
विबुध चक्रमणि पुत्र तह, गिरिधर गिरिधर देह ।।२१
भूमिदेव बलभद्र हुव, तिनहि तनुज मुनिगान ।
मडित पडित मडली, मडन मही महान ।।२२
तिनके तनय उदार मति, विश्वनाथ हुअ नाम ।
दुतिधर श्रुतिधरकौ अनुज, सकल गुननिकौ धाम ।।२३
तासु पुत्र मतिराम कवि, निज मति के अनुसार ।
सिह स्वरूप सुजान कौ बरन्यौ सुजस अपार ।।२४

महाकवि भूषण ने अपने वंश का परिचय इन शब्दो मे दिया है —

द्विज[2] कनौज कुल कश्यपी, रतनाकर सुत धीर ।
बसत त्रिविक्रमपुर नगर, तरनि तनूजा तीर ।।

---

[1] छन्द सार पिगल (वृत्त कौमुदी) व खोज रिपोर्ट सन् १९२०-२२ न० १५

[2] शिवराज भूषण छन्द नं० २६

इन दोनो कथनो से स्पष्ट हो जाता है कि मतिराम वत्सगोत्री विश्वनाथ के पुत्र थे और भूषण कश्यप गोत्री रत्नाकर के तनय बतलाये गये है अतः ये दोनो कवि सहोदर बन्धु कदापि न थे। जब पिता ही दोनो के अलग है और गोत्र भी एक नही है तब सहोदर बन्धुत्व कैसा ! हॉ फूफा-मामा के नाते से बधु रहे हो तो सभव है। फिर भी दोनो मे गहरी घनिष्टता थी इसमे सन्देह नही, अतः अन्य समकालीन लेखको ने यदि बन्धुत्व की कल्पना कर ली हो तो सभव है। परन्तु यथार्थता का अश इसमे कुछ भी नही है।

नीलकठ (जटाशंकर) के सबध मे तो और भी स्पष्टता है कि वे इनके सहोदर बन्धु न थे। क्योकि इनके समकालीन साहित्यकारो मे से किसी ने इन्हे भूषणादि का सहोदर बन्धु नहीं कहा। अतः चिन्तामणि और भूषण ये ही दो सहोदर बन्धु थे, यह निश्चित है।

यहॉ पर यह बात स्पष्ट कर देना उचित प्रतीत होता है कि मतिराम नाम के दो कवि उसी काल मे हो गये हैं जिनमे से प्रथम मतिराम अब्दुल रहीम खानखाना, बादशाह जहॉगीर, राजकुमार गोपीनाथ (बूँदी) महाराजा भाऊसिंह (बूँदी) तथा राजा भोगनाथ (जबू नरेश) के आश्रित थे इन मतिराम का समय द्वितीय मतिराम तथा भूषण से पहले पडता है जिनकी शैली, भाव और भाषा सभी मे स्पष्ट अन्तर दृष्टिगोचर होता है। अत दोनो मतिराम को एक नही किया जा सकता। यदि ये एक ही मतिराम हो तो इनका रचनाकाल स०१६६० वि० से १७९० वि० तक १३० वर्ष का पडता है जो कि सभव नहीं है। अत. हम दो[1] मतिराम अलग अलग मानने के लिये बाध्य है।

चिन्तामणि कवि ने पिगल की रचना स० १७७६ वि० मे की थी इस सबध मे यह दोहार्द्ध नारनौल से प्राप्त पिगल मे दिया हुआ है—

---

[1] 'भूषण विमर्श' मे भूषण-मतिराम शीर्षक पृ० १४ से ३० तक।

"कहत अक मनि दीप द्वै जानि बराबर लेउ।"

इससे हमे चिन्तामणि और भूषण के समय निर्धारण मे अच्छी सहायता मिलती है।❀

❀श्री भालेराव जी को भी यह पिगल खोज मे मिला है उन्होंने इस पिगल का नाम "छंद सार पिंगल" बतलाया है। लश्कर से मेरे अनुज प० शिवदयाल दीक्षित द्वारा एक पत्र भेजकर उन्होंने सूचित किया है कि इस पिगल से भूषण, चिन्तामणि और छत्रपति साह के सबंधों एवं समय पर अच्छा प्रकाश पड़ता है।—(लेखक)

आश्रयदाता

हमारे चरित नायक महाकवि भूषण ने (राजनीतिक तथा साहित्यिक) दोनो मार्गो का अवलबन ले रखा था एक ओर तो वे काव्य-रचना द्वारा राज दरबारो, सैनिको, सरदारो और जनता मे उत्तेजना उत्साह और नव-जीवन का सचार कर नवोद्भाविनी स्फूर्ति भरने का प्रयत्न करते थे। दूसरी ओर वे सजीव ओजस्विनी मौखिक वाणी द्वारा तथा राजनीतिक प्रणाली से उत्तेजना भरकर समाज के नेताओ को आलोडित करने मे लगे थे। इस प्रकार से मौखिक और लिखित दोनो प्रकार से जागृति की जा रही थी। इसका स्वाभाविक प्रभाव पडा कि हिन्दुओ मे वैराग्य, अनुत्साह, निर्जीवता, अकर्मण्यता एव मन्दता का जो प्रबल सचार हो रहा था वह दूर हो गया। वे अनुभव करने लगे कि हम भी अपने पुराने गौरव को प्राप्त हो सकते है।

इसके साथ ही औरङ्गजेब विरोधी मुसलमान भी हिन्दुओ के सहयोग की इच्छा करके अपने राज्यो को वापिस पाने की अभिलाषा से इनके साथ हो गये थे। इससे स्वाभाविक ही दोनो मे राष्ट्र-निर्माण की प्रवृत्ति बढने लगी थी और अकबर बादशाह द्वारा निर्मित राष्ट्रीय भावना का पुन. विकास होने लगा था। भूषण ने इस महान कार्य के लिये बाबर, हुमायूँ अकबर, जहाँगीर और शाहजहाँ इन पाँचो मुगल बादशाहो का सहारा लिया था जिनकी चर्चा अपनी रचनाओ मे उन्होंने बार-बार की है तथा औरङ्गजेब की भर्त्सना करते हुए "बब्बर अकब्बर के विरद बिसारे तै" जैसी पंक्ति स्थान-स्थान पर आपको उनकी रचनाओ मे मिल सकती हैं।

शत्रु पर आक्रमण के समय सन्नद्ध सैनिक समूह के सम्मुख इस महाकवि की उत्तेजक रचनाए अपनी वाणी द्वारा ऐसी प्रबल आग उनके हृदय मे उत्पन्न कर देती थी कि विरोधी दल को कच्चा खा जाने तक

की भावना उनमे पैदा हो जाती थी। उस स्थिति मे सैनिको का शत्रु के सामने से भागना अथवा पैर पीछे रखना कभी सभव ही नही था। फिर जो सज्जन स्थायी रूप से उनकी रचना का अध्ययन करते रहते थे उनका तो कहना ही क्या था? इस प्रकार से सारे देश मे उत्साह की एक लहर दौडा देना भूषण की रचना का प्रमुख कार्य बन गया था।

इस महान कार्य के लिये वैसा ही प्रबल आदर्श और सजीव देवता भी अपेक्षित था जिसे भूषण ने अनुभूति द्वारा अपने हृदयगत कर लिया था। वह था हमारा राष्ट्र नायक छत्र पति 'शिवाजी', जिसके प्रबल प्रताप और साहस को देखकर औरङ्गजेब के छक्के छूट जाते थे। अतः भूषण ने सारे भारत के जन-जन को शिवाजी का प्रतिरूप बना देना चाहा था जिसमे वह बहुत अश मे सफलीभूत हुआ था इसमे सन्देह नही। इसके लिये तत्कालीन इतिहास साक्षी है। इस आदर्श की स्थापना करने मे भूषण को कितनी सफलता मिली थी इसे भी आप उन्ही के शब्दो मे अवलोकन कीजिये। वे कहते हैं—

नृप समाज मे आपनी होन बड़ाई काज।
साहि तनै सिवराज के करत कवित कविराज॥

शि० भू०, पृ० २७८

तथा—

को कविराज सभाजित होत,
सभा सरजा के बिना गुन गाये।

शिवराज भूषण, छन्द १५३

इन कथनो से तत्कालीन स्थिति का कुछ दिग्दर्शन हो जाता है साथ ही यह भी अनुभासित हो जाता है कि भूषण की प्रतिभा ने कितना महत्व पूर्ण कार्य कर डाला था। इस भावना को देश मे भरने का कार्य २१५० वर्ष से क्षीण पडा हुआ था उसको सजग करके नवजीवन का विस्तार कर देना ही इस रचना की विशेषता है।

शिवराज भूपण के निर्माणकाल तक किन-किन दरबारो मे भूषण जा चुके थे इसका उल्लेख स्वय कवि ने एक छन्द मे कर दिया है। वह छन्द यह है—

मोरग जाहु कि जाहु कुमाऊँ,
सिरी नगरे कि कवित्त बनाये।
वान्धव जाहु कि जाहु अमेरि कि,
जोधपुरै कि चितौरहि धाये॥
जाहु कुतुब्ब कि एदिल पै कि,
दिलीसहु पै किन जाहु बुलाये।
भूषन गाय फिरौ महि मे,
बनिहै चित चाहि सिवाहि रिझाये॥

शि० भू०, पृ० ७५०

इससे स्पष्ट है कि भूषण कवि मोरग, कुमाऊँ, श्रीनगर, रीवाँ, जयपुर, जोधपुर, चित्तौड, कुतुबशाह, और आदिलशाह के वशजों के दरबारो मे जा चुके थे तथा दिल्ली के बादशाह से इन्हे बुलाने का निमत्रण भी मिल चुका था। इनके अरिरिक्त प्रारभ मे ही चित्रकूट पति हृदय-राम सुरकी द्वारा हमारे चरितनायक मनिराम को 'कविभूषण' की उपाधि प्राप्त हो चुकी थी। अतः उक्त दरबारों मे उनका आना-जाना निर्विवाद है। शिवराज भूषण का निर्माण स० १७७३ वि० मे हुआ था तथा साहू, बाजीराव पेशवा एव चिमना जी के दरबारों मे रह कर ही शिवराज भूषण की रचना की इसके पश्चात् ये मैहू नरेश अनिरुद्ध सिह, चित्रकूट पति बसतराय सुरकी, पन्नानरेश छत्रशाल तथा असोथर नरेश भगवन्त राय खीची के भी दरबारो मे गये थे। इन सब स्थानो मे भूषण का जाना केवल जागरण और सगठन की दृष्टि से ही हुआ था नही तो इतने दरबारो मे भूषण को जाने की कदापि आवश्यकता न थी। फिर सवाई जयसिंह, छत्रपति साहू और महाराजा छत्रशाल के दरबारो मे जाने के बाद मैहू आदि छुद्र राज्यों मे कोई क्यो मारा-मारा फिरता!

कुमाऊँ नरेश उद्योतचन्द के दान को त्यागते हुए उन्होंने कहा था कि मै तो केवल यह देखने आया था कि यहाँ तक शिवा जी का यश विस्तृत हुआ है या नही और उनकी शैली पर कार्य होता है या नही। छत्रशाल को बगस के आक्रमण पर बाजीराव पेशवा द्वारा सहायता दिलवाना भी उसी लक्ष्य का द्योतक है। इस प्रकार से रचना, वाणी और कार्य द्वारा सभी प्रकार से भूषण की भावना एक ही बात की ओर प्रधावन करती हुई दिखलाई देती है कि देश मे राष्ट्रीय जागरण और सगठन को पूर्ण कर दिया जाय और जीवन भर वे इसी की पूर्ति मे तन-मन से संलग्न रहे।

भूषण की उपाधि

'शिवराज भूषण' मे महाकवि मनिराम ने अपनी उपाधि का भी कथन किया है। वे कहते हैं—

कुल सुलंक चित्रकूट पति, साहस सील समुद्र।
कवि भूषन पदवी दई हृदय राम सुत रुद्र॥

शि० भू०, छ० २८

अत: मनिराम को 'कवि भूषण' की उपाधि हृदयराम ने दी थी, यह स्पष्ट हो जाता है। 'रीवा राज दर्पण' के पृ० ४६८ पर पवैयों की सूची दी हुई है उसकी तालिका न० ४ मे लिखा है—

"नं० ४ गहोरा परगना (बाँदा) के अधिकारी सुरकी राजा हृदयराम ग्राम संख्या १०४३½ बास लाख का इलका जो अंग्रेजी राज्य मे शामिल हो गया है।"

इस खोज के लिये मुझे पटेहरा (रीवाँ) राज्य की भी यात्रा करनी पडी थी जहाँ पर सुरकियो की एक वशावली भी प्राप्त हुई थी। उसमे रुद्रराव का नाम तो मिलता है परन्तु हृदयराम का नाम उसमे नहीं है।

चित्रकूट की यात्रा मे वहाँ के एक वृद्ध सुरकी क्षत्रिय ने बतलाया कि हृदयराम भागलपुर वाली शाखा के पूर्वज थे। हृदयराम के बाद चित्रकूट की गद्दी पर सागरराव अधिकृत हुए प्रतीत होते हैं जो कि रुद्रराव के पुत्र थे। सागर राव के पुत्र बसन्त राय थे जो स० १७८१ वि० मे राज्यच्युत हो गये थे। इनकी भी प्रशसा मे भूषण का एक पद्यांश मिलता है—

"बसन्तराय सुरकी की कहूँ न वाग मुरकी"

छन्दांश भूषण का ही रचा बतलाया जाता है। बसन्तराय का उक्त समय पटेहरा के एक महजरनामे से लिया गया है जो बसन्तराय के पोते रामसिंह

ने बृटिश सरकार को दिया था। इस तारतम्य से यह स्पष्ट हो जाता है कि हृदयराम और सागर राव भाई-भाई थे। इसी से हृदयराम के पश्चात् सागरराव राजा हुए थे। अतः बसन्तराय से एक पीढी पहले हृदयराम का शासन काल स० १७५५ वि० के आस-पास पड़ता है। स० १७६० वि० मे चित्रकूट तथा रीवा का राज्य छत्रशाल बुदेला ने छीन लिया था जिसे इन्होने स० १७६८ वि० मे वापिस ले लिया था। उसी समय हृदयराम को रीवा राज्य की ओर से उक्त इलाका जागीर मे मिला था।

भूषण कवि अनुमानतः सं० १७५५ तथा १७६० वि० के बीच किसी समय चित्रकूट गये थे तभी उन्हे उक्त उपाधि हृदयराम ने दी थी। वशावली तथा महजरनामा दोनो ही इसके साक्षी है। इसके पश्चात् इनका राज्य छीने जाने तथा पुनः विजय करने का उल्लेख 'छत्रप्रकाश' तथा अन्य इतिहास ग्रथो मे वर्णित है। हृदयराम और अवधूत सिह (रीवा नरेश) दोनो ही घनिष्ट मित्र थे तथा दोनो की ही सयुक्त शक्ति और बादशाह की सहायता से भूषण के उत्साह वर्द्धन द्वारा इन दोनो ने अपना अपना राज्य वापिस पाया था। इसके उपलक्ष मे जो विजयोत्सव मनाया गया था उसमे महाकवि भूषण भी सम्मिलित हुए थे। 'शिवा बावनी' मे भी इन दोनो की प्रशंसा के छन्द भूषण ने साहू को सुनाये थे।

भ्रमण और राज्याश्रय

मोरंग और कुमाऊँ

औरगजेब के आक्रमणो से यह दोनो राज्य ध्वस्त हो चुके थे और वहाँ के नरेशो को पहाडो मे शरण लेनी पडी थी। अतः शक्ति सवर्द्धन, सगठन, उत्साह और उत्तेजन देने के लिये भूषण ने पहले मोरग फिर कुमाऊँ की यात्रा की थी। मोरग के विषय मे तो कवि सबधी विशेप विवरण अभी नही मिल पाया है इसके लिये अन्वेषण की अपेक्षा है परन्तु कुमाऊँ जाने का सप्रमाण विवरण प्राप्त है। वहाँ पर उद्योतचन्द्र की प्रशसा मे भूपण ने यह कवित्त कहा था—

> पूरण पुरुष के परम द्दग दोऊ जानि,
> चन्द्रमा की करक करेजहूते कढ़ि गई[1]

कवि द्वारा बतलाये पथ पर चलकर मोरग नरेश एव कुमाऊँ के राजा उद्योतचन्द्र ने अपना राज्य फिर वापिस ले लिया था। इस प्रकार से भूपण को सफलता का श्रेय यहीं से प्रारभ होता है। मोरग के विषय मे इतिहास-कार स्पष्ट रूप से उल्लेख करते हैं कि अलीवर्दी खा नवाब के समय मे यह राज्य बगाल मे मिला लिया गया था। अतः औरंगजेब के चगुल से छुड़ाकर मोरग नरेश ने उस पर अपना अधिकार कर लिया था यह स्वतः सिद्ध हो जाता है। भूपण का उल्लेख भी इसी बात की साक्षी दे रहा है।

उद्योतचन्द्र के दरबार मे मतिराम कवि का भी रहना पाया जाता है। जिन्होने राजकुमार ज्ञानचन्द्र के लिये 'अलङ्कार पंचाशिका' नामक ग्रथ की रचना की थी। भूपण कवि को उद्योतचन्द्र ने एक हाथी और दस हजार रुपया पुरस्कार दिया था परन्तु दान देते समय राजा के मुख से निकल गया कि "ऐसा दान आप को अन्यत्र नही मिला होगा।" इससे

---

[1] महाकवि भूषण, पृ० १२

भूषण रुष्ट हो गये और यह कहते हुए कि "ऐसा त्यागी ब्राह्मण भी आपने न देखा होगा। मै तो यह देखने आया था कि यहॉ तक शिवाजी का यश विस्तार हुआ है या नही और उनकी शैली का निर्वाह कहॉ तक होता है।" इस प्रकार से दान को त्यागते हुए वे गढवाल की ओर चले गये। इससे हम भूषण की स्वाभिमान और त्याग की वृत्ति का अनुमान लगा सकते है। उस समय तक भूषण को अधिक धन नही मिल पाया था तथा वह उनकी प्रारभिक अवस्था थो। अतः उनका यह त्याग और भी महत्वपूर्ण बन जाता है।

श्रीनगर (गढ़वाल) नरेश फतहशाह

कुमाऊॅ के दान को लात मारकर भूषण श्रीनगर के दरबार मे जा पहुॅचे। राजा फतहशाह ने इनका अत्यन्त आदर किया। इनके दरबार मे अनेक उच्चकोटि के कवि रहते थे। रतन कवि कृत फतहप्रकाश नामक ग्रथ मे महाकवि भूषण के दो छन्द उद्धृत हैं उनको पढ़कर आप उत्साह और आनन्द को अनुभव कीजिये। वे छन्द ये है—

लोक ध्रुव लोकहू ते, ऊपर रहैगो भारो,
भानुते प्रभानि की निधानि आनि आनैगो।
सरिता सरिस सुर सरितै करैगो साह,
हरिते अधिक अधिपति ताहि मानैगो।
ऊरध परारध लौ गिनती गनैगो गनि,
वेदते प्रमान सो प्रमान कछू जानैगो।
सुयश ते भलो मुख, भूषण भनैगो बाढ़ि,
गढ़वार राज पर राज जो बखानैगो॥

फतहप्रकाश, सर्ग ४, छ० ५६

इस कवित्त मे कवि ने फतहशाह की अच्छी प्रशंसा की है। उसने पहाडो मे गगा की धारा को सरल और सुचारु रूप दे दिया था इसीलिये उसे हरि रूप बतलाया है वैदिक भावना का अनुगामी होने से उसके

कथन को प्रमाणीभूत कहा है। और अनेक गुणो का समन्वय होने से उसकी महत्ता उच्चकोटि की बतलाई है, अन्त मे जनता के हृदय मे कुछ दुर्भावना राजा के प्रति देखकर वे कहते हैं कि जो कोई गढवाल राज्य को शत्रु राज्य समझेगा उसका सुयश नष्ट हो जायगा। इस प्रकार से इस हमारे चरित नायक ने एक ही छन्द मे राज्य की सारी धारणा को नया रूप दे दिया और जनता राजा को अटल भक्ति मे निमग्न हो गई थी। इसके बाद ही प्रजा के बल पर फतहशाह ने सहारनपुर तक का औरगजेबी इलाका अपने राज्य मे मिला लिया था। इसका इतिहास साक्षी है। इससे यह भी सिद्ध होता है कि यह राजा प्रबल समाज सुधारक और राष्ट्र वादी व्यक्ति था। जिसे भूषण के सहयोग से गहरा बल मिला था।

दूसरा छन्द भी देखिए—

देवता कौ पति नीकौ, पतनी शिवा कौ हर,
श्री पति न तीरथ विरथ उर आनियो।
परम धरम को है सेइबो न व्रत नेम,
भोग को सँजोग त्रिभुवन जोग जानियो।
भूषन कहा भगति न कनक मनि ताते,
विपति कहा वियोग सोग न बखानियो।
सम्पति कहा सनेह न गथ गाहिरो जहां,
सुखकौ निरखिबोई मुकुति न मानियो* ॥

इस छन्द मे कवि ने इन्द्र, महादेव तथा दुर्गा की प्रशसा करते हुए वैष्णव धर्म, तीर्थ, व्रत, नियमादि को व्यर्थ बतलाया है। साथ ही सासारिकता की महत्ता दिखलाते हुए तीनो लोको का उपयोग उचित ठहराया है। सोने एव मणियो के सहारे की भक्ति को तुच्छ बतलाते हुए विपत्ति, वियोग और शोक को अचिन्तनीय कहा गया है। जहाँ स्नेह नही होता

---

*फतहप्रकाश, सर्ग ४, छन्द १६४।

वहाँ पर सम्पत्ति की प्राप्ति तुच्छ ही है, इसी प्रकार से सासारिक सुखो को मुक्ति का स्वरूप मानना भी ठीक नही है। इन उदाहरणो से भूषण की भावना पर अच्छा प्रकाश पडता है। साथ ही इसमे कुमाऊ नरेश के दान के त्याग का कारण भी स्पष्ट कर दिया गया है। इन्ही मे हमे कवि की स्पष्टोक्ति और महत्ता के दर्शन होते है।

भूषण मे समाज-सुधार, राष्ट्र-निर्माण और सदाचार पूर्ण जीवन की कितनी उत्कट भावना थी इसे हम ऊपर के कथन से भलीभाँति समझ सकते हैं। इसके साथ ही हमे उनकी वाणी के ओजस्वितामय वर्णन, उत्तेजक एव उत्साह पूर्ण चित्रण तथा आध्यात्मिकता से ओतप्रोत सरस जीवन का भी अच्छा दिग्दर्शन मिल जाता है। इस पहाडी यात्रा के पश्चात् वे अपनी जन्म भूमि बनपुर को लौट आये थे। श्रीनगर मे भी भूषण का बहुत ही सम्मान हुआ था। तथा राजा फतहशाह ने अच्छी भेट देकर सप्रेम बिदाई दी थी।

रीवाँ नरेश अवधूतसिंह

बाँधवाधीश अवधूतसिह सं० १७५७ वि० मे गद्दी पर बैठे थे। रीवाँ के जागीरदार और चित्रकूट नरेश हृदयराम सुरकी ने ही मनिराम को 'कवि भूषण' की उपाधि दी थी। इससे इन दोनो मे काफी घनिष्ठता बढ गई थी। जब रीवाँ और चित्रकूट दोनो राज्य महाराजा छत्रशाल से अपना राज्य वापिस लेने मे प्रयत्नशील थे तभी दोनो की शक्ति को उत्कर्ष और सगठित रूप देने मे भूषण ने भी अपनी वाणी का उपयोग किया था। स० १७६० वि० में उक्त दोनो राज्य छीन लिये गये थे जिन्हे स० १७६८ वि० मे ८ वर्ष तक कठिन परिश्रम करके दिल्ली नरेश तथा राजा प्रताप गढ की सहायता से पुनः प्राप्त कर सके थे। इस युद्ध यात्रा के समय हृदयराम की सेना के सम्मुख भूषण ने यह छन्द सुनाया था—

बाजि बब चढ्यौ साजि बाजी जब कला भूप,
गाजी महाराज राजी भूषण बखानते।

चडी की सहाय महिमंडी तेज ताई ऐड़,
छडी राय राजा जिन दडी औनि आनते।
मदी भूत रवि रज बंदी भूत हठ धर,
नन्दी भूत पति भौ अनन्दी अनुमान ते।
रको भूत दुवन करं की भूत दिगदन्ती,
पकी भूत समुद सुलकी के पयान ते।*

इस विजय यात्रा से रीवाॅ राज्य, तरौहा और चित्रकूट राज्य मे उत्साह का पारावार लहराने लगा था। भूषण की उत्तेजनात्मक तथा उत्साह पूर्ण रचनाओ ने सजीवता की एक लहर सैनिको के हृदयो मे दौडा दी।

अवधूत सिह की सेना के सामने जो कवित्त भूषण ने सुनाया था उसने तो उन मे जोश का एक उबाल ही ला दिया होगा। देखिए कैसा ओजस्वी कथन है—

जादिन चढत दल साजि अवधूतसिह,
तादिन दिगन्त लौं दुवन दाटियतु है।
प्रलै कैसे धाराधर धम कै नगारा धूरि,
धारा तै समुद्रन की धारा पाटियतु है।
भूपन भनत भुव डोल कौ कहर तहाॅ,
हहरत तगा जिमि गज काटियतु है।
काच से कचरि जात सेस के असेस फन,
कमठ की पीठि पै पिठी सो बांटियतु है।

यह रचना कितनी उत्तेजक और सजीव है इसे उत्साही वीर ही अनुमान लगा सकता है। पुरुपत्व हीन, जीवन तत्व से रहित प्राणी इसके

---

*समालोचक, भाग १, अंक १, पृ० ६८, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, भाग १३ अंक १-२ तथा 'रीवाँ राज्य दर्पण' पृ० ४६८।

आनन्द को क्या अनुभव कर सकता है ! युद्ध यात्रा के अवसर पर तेग युक्त सैनिक ही इसकी महत्ता समझ सकता है जिस पर भूषण जैसे प्रतापी कवि की वाणी पाकर जो भाव उन मे भर दिये गये होंगे वह वाणी से कथन की वस्तु नही रह जाती। हृदय ही उसकी सत्ता को उचित मान दे पाया है। भूषण की रचना का एक एक शब्द वीर रस की साक्षात प्रतिमा बन जाता है। इसमे सन्देह नही। भाषा और भाव व्यजना दोनों ही एक दूसरे की स्पर्द्धा करते से जान पडते है। इस रचना मे जैसा उत्तेजना पूर्ण वीर रस का परिपाक हुआ है वैसा अन्यत्र शायद ही कही दृष्टि गोचर हो सके।

राजस्थान का भ्रमण

भूषण कवि का सगठन कार्य चल ही रहा था कि उसको विस्तार देने के लिये वे राजस्थान की ओर चल पड़े। सबसे प्रथम उन्होंने जयपुर पहुँच कर सवाई जयसिह से भेंट की। जयपुर नरेश बडे ही प्रतिभा सम्पन्न, उद्योगशील, देशोत्थान की भावना रखने वाले समाज-सुधारक व्यक्ति थे। भूषण को ऐसे उच्चकोटि के नरेश से मिलकर बडी प्रसन्नता हुई। जयपुर नरेश भी ऐसे महान राष्ट्रीय कवि, देशोद्धारक, प्रतिभावान व्यक्ति को पाकर मुग्ध हो गये। दोनो का मिलन सोने मे सुगध का मिश्रण बन गया। भूषण ने उत्तरी भारत के नेतृत्व की बागडोर जयपुर नरेश के हाथ मे दे दी। भूषण कवि जयपुर नरेशो के राष्ट्रीय विचारो और कार्यों से पूर्ण परिचित थे उसी को आधार बना कर हमारे चरितनायक ने जयसिह की इन शब्दो मे प्रशसा की है अवलोकन कीजिये—

अकबर पायो भगवन्त के तनै सो मान
बहुरि जगतसिह महा मरदाने सों।
'भूषण' त्यों पायो जहाँगीर महासिह जू सों,
शाहजहाँ पायो जयसिह जग जाने सों।

अब औरगजेब पायो रामसिह जू सो,
औरहू दिन दिन पैहै कूरम के माने सो।
के ते राव राजा मान पावै पात साहन सो,
पावै बादसाह मान मान के घराने सो।

इस छन्द मे महाकवि भूषण ने सवाई जयसिह के पूर्वजो का चित्रण कर यह दिखला दिया है कि जयपुर वश से मुगल बादशाहो का कितना अधिक महत्व बढ गया था। साथ ही रावराजा का उल्लेख कर बूँदी नरेश की तुच्छता भी दिखला दी है जो कि जयपुर राज्य के प्रबल विरोधी थे। इससे हम भूषण के राजनीतिक चातुर्य, कार्य दक्षता एव व्युत्पन्न मतित्व का अच्छा आभास पाते हैं। इस छन्द से उनके राष्ट्रीय सगठन, हिन्दू-मुसलिम मेल तथा समाज-सुधार की विचारधारा की पुष्टि होती है जो कि महाराजा मानसिह के सहारे से स्थापित की गई थी। ये पहले भारतीय नरेश थे जिन्होने अकबर बादशाह से विवाह सबध कर के राष्ट्रीयता की जड जमाई थी। उसी का उल्लेख इस कवित्त मे किया गया है।

अब सवाई जयसिह की विशेषताओ पर भी ध्यान दीजिये जिन्हे इस महाकवि ने इन शब्दो मे व्यक्त किया है—

भले भाई भासमान भासमान भान जाको,
भानत भिखारिन के भूरि भयजाल है।
भोगन कौ भोगी भोगीराज कैसी भाति भुजा,
भारी भूमि भार के उबारन कौ ख्याल है।
भावतो सभानि भूमि भामिनी कौ भरतार,
भूषण भरतखड भरत भुआल है।
विभौ कौ भडार औ भलाई कौ भवन भासै,
भाग भरे भाल जयसिह भुवपाल है॥

इस प्रकार से सवाई जयसिह के कार्यो मे वेधशाला निर्माण, बूँदी राज से अपने राज्य को वापिस लेने, जयपुर नगर निर्माण करने, तथा अत्यन्त ऐश्वर्यशाली होने का कवि ने बडे ही प्रभावशाली ढग

से चित्रण किया है। उसे भरतखड के निर्माता भरत के रूप मे अकित किया है। इस प्रकार से भूषण और जयसिह मे एक गहरी मित्रता हो गई थी। यही नही भारत के महान पडितो द्वारा राष्ट्रीय व्यवस्था दिलवा कर मस्तानी पेशवा के विवाह को जयपुर नरेश द्वारा ही उचित ठहराया गया था। इसके पश्चात् महाकवि भूषण जोधपुर गये थे परन्तु जोधपुर नरेश की मनोवृत्ति औरगजेब की दासता की ओर झुकी थी। अतः भूषण से उनका मन न मिल सका और वे वहाँ से उदयपुर को चल दिये। राणा उदयपुर ने इनका बहुत सम्मान किया और वे सवाई जयसिह के सहयोगी बन गये। इस तरह वे राजस्थान का दौरा समाप्त कर अपनी जन्मभूमि को लौट आये। जोधपुर नरेश के विरोध के कारण ही भूषण ने शिवराज भूषण मे जसवन्तसिह की निन्दा की है और उन्हे 'गीदड' तक कह डाला है, यथा—

"जाहिर है जग में जसवन्त लियो गढ़ सिंह में गीदड़ बानों।"
भूषण ग्रथावली, पृ० ११४

इसके विपरीत राणा जयसिह का ध्यान करके अमरसिह चन्दावत के विषय मे भूषण कहते है—

"हिन्दू बचाय बचाय यही, अमरेस चँदावत लौ कोइ टूटै।"

इससे स्पष्ट हो जाता है कि भूषण की भावना किस प्रकार से राष्ट्रीय सगठन मे व्यस्त थी।

राजस्थान से लौट आने पर बनपुर मे निवास करना भूषण ने सुरक्षित नही समझा। अतः वे बनपुर से तिकमापुर (कानपुर) चले आये इनके साथ ही चिन्तामणि और मतिराम भी यही आ बसे थे। तीनो कवि अपनी-अपनी हवेलियाँ बना कर आनन्द पूर्वक निवास करने लगे थे। इन हवेलियो के भग्नावशेष आज भी उन महाकवियो की स्मृतियो को ताजा कर देते हैं।

दक्षिण की यात्रा

महाकवि भूषण ने १२-१३ वर्ष तक उत्तरी भारत मे सगठन कार्य

किया । औरगजेब के दक्षिण मे व्यस्त रहने के कारण उन्हे उत्तरी भारत मे अच्छी सफलता मिली थी और अनेक राजाओ को पथ-प्रदर्शन देकर उत्कर्ष की ओर अग्रसर करते हुए सगठन की शक्ति को प्रबलतर रूप दे दिया था। इसी बीच अनेक प्रकार की असफलताओं के कारण औरगजेब का हृदय टूट गया था। वृद्धावस्था से कार्य की क्षमता भी जाती रही थी। इसी से सशकित एव भयत्रस्त रह कर सभी को सन्देह की दृष्टि से देखने लगा था अन्त मे सवत् १७६४ वि० मे दक्षिण मे ही वह परलोक सिधारा। छत्रपति साहू को अपनी मृत्यु से पूर्व ही उसने जेल से मुक्त कर दिया था। अतः वे धूमधाम से सितारा मे सवत् १७६५ वि० मे सिहासनासीन हुए।

इन्होने बालाजी विश्वनाथ को अपना पेशवा (मत्री) बनाया जिसने बडी दक्षता से शासन का कार्य-सचालन किया। इसके बड़े बेटे बाजीराव भी उसे शासन मे अच्छी सहायता देते थे। भूषण ने सितारा जाते हुए गोलकुडा और बीजापुर के शीया राजकुमारों से भी भेंट की थी और उन्हे भी अपने सगठन मे सम्मिलत कर लिया था जिसका उल्लेख कवि ने अपने शिवराज भूषण के छन्द स० २५० मे भी किया है।

यहाँ से चल कर भूषण सितारा पहुँचे। वहाँ पहुँच कर राजकीय मदिर में अपने डेरे डाल दिये। रात के समय छत्रपति साहू शिकार से लौट कर उसी मन्दिर पर आ पहुँचे। साहू और भूषण मे बातचीत होने लगी। साहू को जब ज्ञात हुआ कि ये कवि हैं तो अपनी रचना सुनाने के लिये इनसे अभ्यर्थना की गई। महाकवि भूषण ने सबसे पहले यह छन्द सुनाया—

इन्द्र जिमि जम्भ पर बाड़व सु अम्भ पर,
रावन सदभ पर रघुकुल राज हैं।
पौन बारि बाह पर शभु रति नाह पर,
ज्यों सहस्र बाहु पर राम द्विज राज है।

दावा द्रुम दड पर चीता मृग झुण्ड पर,
भूषण वितुड पर जैसे मृगराज है।
तेज तम अस पर कान्ह जिमि कस पर,
त्यो मलेच्छ बंस पर शेर शिवराज है।

एक तो भूषण की वर्णन शैली बहुत ही आकर्षक एव हृदय-ग्राही थो उस पर अपने पूर्वजो की प्रशसा से वे मुग्ध हो गये और बराबर सुनाने के लिये आग्रह करते गये। भूषण भी बडे प्रेम से ओजस्विनी भाषा मे कवित्त पर कवित्त और दूसरे छन्द सुनाते गये यहाँ तक कि ५२ कवित्त भूषण ने सुना डाले जिन्हे सुनकर सभी सरदार और साहू तन्मय हो झूमते जाते थे। उत्तर भारत मे १८-२० वर्ष लगातार कैद रहने तथा शाही दरबार की साहित्यिक शिक्षा के प्रभाव से साहू जी हिन्दी भाषा से भलीभाँति परिचित थे। अन्त मे और सुनाने का आग्रह देखकर भूषण ने कहा कि अब छत्रपति के लिये भी कुछ रख छोडे या आप को ही सब सुना दे अतः साहू और अन्य सरदारो ने भूषण की प्रशसा करते हुए विदाई ली और प्रातः दरबार के समय आने का आमत्रण करते गय। जब दूसरे दिन वे दरबार मे पहुँचे तो रात वाले सज्जन को ही गद्दी पर अधिष्ठित देखकर दग रह गये। उस समय छत्रपति साहू ने उनसे कहा कि मैंने कल ही निश्चय कर लिया था कि आप जितने छन्द सुनावेगे उसी के अनुसार आपको पुरस्कार दूँगा अतः उन्हे ५२ गाँव ५२ हाथी, ५२ लाख रुपये, ५२ शिरोपाव आदि भेंट मे दिये गये। इसे पाकर भूषण कृत-कृत्य हुए और दरबारी कवि की हैसियत से वही रहने लगे। ये ही ५२ छन्द शिवा बावनी के नाम से प्रसिद्ध हुए। इनमे से पाँच छन्द छत्रपति साहू, हृदयराम सुरकी, बाजीराव पेशवा तथा रीवाँ नरेश अवधूतसिंह की प्रशसा मे थे तथा अनेक छन्दो मे ऐतिहासिकता का रूप साहू के समय का है परन्तु वे शिवाजी की प्रश सा मे कहे गये है। जैसा कि कुछ छन्दों मे शिवाजी की विजय रूप से उज्जैन, भेलसा, और सिरोज मे मरहठो की छावनी डाले जाने का उल्लेख है परन्तु ये घटनाएं साहू और बाजीराव

पेशवा से सबंध रखती है। इससे हम सरलतया यथार्थता का अनुमान लगा सकते हैं। छत्रपति साहू की प्रशंसा मे यह कवित्त उपस्थित है—

बलख बुखारे मुलतान लौं हहर पारै,
काबुल पुकारै कोऊ धरत न सार है।
रूम रूदि डारै खुरासान खूँदि मारै,
खाक खादर लौं झारै ऐसो साहू की बहार है।
सक्खर लौं भक्खर लौं मक्कर लौं चले जात,
टक्कर लिवैया कोऊ वार है न पार है॥
भूषन सिरोज लौं परावने परत फेरि,
दिल्ली पर परत परदन की छार है।

शि० बा० ४९

इस छन्द मे मरहठो का प्रभाव कितना विस्तृत हो गया था इसका अन्यन्त प्रभावशाली ढग से कवि ने चित्रण किया है। अब बाजीराव पेशाव के संबंध मे भी एक कवित्त इसी शिवा बावनी से अवलोकन कीजिए—

सारस से सूबा कर बानक से साहजादे,
मोर से मुगल मीर धीर में धँचै नहीं।
बगुला से बंगस बलूचिये बतक ऐसे,
काबिली कुलंग याते रन ये रचै नहीं।
भूषण जू खेलत सितारे में शिकार साहू,
सभा कौ सुअन जाते दुअन बचै नहीं।
बाजी राव बाज की चपेटैं चंगु चहूं ओर,
तीतर तुरक दिल्ली भीतर बचै नहीं।

शि० बा० छन्द ४८

इस छन्द मे भूषण ने बाजीराव पेशवा की तुलना बाज से करके औरङ्गजेबी सरदारो को अन्य पक्षियों के रूप मे कथन किया है इस प्रकार से पेशवा की महत्ता व्यक्त करते हुए मरहठो के शासन और प्रभाव के विस्तार का भली प्रकार से चित्रण कर दिया है। इस कवित्त मे कवि की

मौलिकता के साथ उत्तेजक भावना भी पर्याप्त मात्रा मे भरी हुई है। जिसे वह मरहठो मे भर देना चाहता है ताकि दिल्ली की साम्राज्यशाही को ध्वस्त किया जा सके। इन्ही दिनो मे साहू की आज्ञा से भूषण ने शिवराज भूषण की रचना की थी। फिर वहाँ से लौटकर तिकमापुर चले आये थे।

यहाँ से वे दिल्ली नरेश से मिलने को चल दिये और बूंदी के हाडा नरेश बुद्ध सिह, दिल्ली के बादशाह और मैड्ड के राजा अनिरुद्ध सिंह से मिल कर तथा सम्मानित होकर अपने निवास स्थान को लौट आये थे। इन लोगो की प्रशंसा के छन्द भी पाये जाते है जिनसे विदित होता है कि भूषण का इन स्थानो पर काफी अच्छा सम्मान मिला था। बादशाह की ओर से इन्हे यशोहरा (जिला मेरठ) नामक ग्राम पुरस्कार मे मिला था जिसे परेलिया (जिला हरदोई) के पाठक उपयोग कर रहे हैं। उस गॉव के वाजीबुल अर्ज मे कवि का नाम मनिराम बतलाया गया है परन्तु इसका मै स्वय निरीक्षण अब तक नही कर पाया हूँ।*

पौरच नरेश अनिरुद्ध सिह के दरबार मे मैड्ड (हाथरस के पास एक साधारण नगर) जाने के विषय मे भूषण के सौ वर्ष पश्चात् भी वहाँ के दरबारी कवि जयराम बडी श्रद्धा से अपनी रचना मे उल्लेख करते है, देखिए—

भूषनादि कवि आइ कैं, पायौ बहु सम्मान।
जस बरनन जिन कौ कियौ बहु कवि जान जहान॥

यह कृष्ण जन्म खड जिसमे उक्त उद्धरण आया है स० १८६७ वि० मे लिखा गया था। जब कि अनिरुद्ध सिह की मृत्यु सं० १७७३ वि० के कुछ काल पश्चात् ही हो गई थी। इन बातों से यह बात विदित होता है कि छत्रपति साहू, सवाई जयसिंह तथा दिल्ली के बादशाह से सम्मान पाने

---

*परेलिया के पाठक भूषण को पाठक मानते है इसका एक वंश-वृक्ष भी उन्होंने तय्यार कर लिया है जो कि नितान्त कल्पित है। दे० भूषण विमर्श की प्रस्तावना, पृ० २३।

पर भी भूषण कवि मैडू जैसे छोटे जागीरदारो के यहाँ जाने मे भी नहीं हिचकते थे। इसी से उनका संगठन सफल और जोरदार था। राष्ट्रीय सगठन के लिए इसकी अत्यन्त आवश्यकता थो। भूषण की प्रतिष्ठा इतनी अधिक बढ गई थो कि छोटे-बडे राजा महाराजा सभी उनको बुला कर अपने को गौरवान्वित मानते थे। यहाँ तक कि उन के १०० वर्ष पश्चात् भी उनके नाम को लोग आदरणीय मान कर उल्लेख करते थे।

भगवन्तराय खीची

स० १७७० वि० के पश्चात् ही असोथर नरेश भगवन्तराय खीची ने अपना राज्य विस्तार करना प्रारम्भ कर दिया था। खीची के आमत्रण पर ही भूषण असोथर गये थे। प्रारम्भ मे खीची की जागीर ३५० रु० वार्षिक आय की थी। परन्तु भूषण के प्रोत्साहन से इसने पूरा लाभ उठाया और थोडे काल मे ही अपना राज्य विस्तार इतना अधिक कर लिया था कि उससे करोड-डेढ करोड रुपये की वार्षिक आय होती थी। बनपुर असोथर के समीप होने से उक्त खीची नरेश अपने शासन के प्रारम्भ मे ही भूषण के सम्पर्क मे आ गए थे। खीची स्वय अच्छा कवि था और बहुत से कवियो का आश्रयदाता था। अनेक उत्तम कवि उसके दरबार की शोभा बढाते थे। भूषण का आना-जाना था ही। इसी से दोनों मे प्रगाढ मैत्री हो गई थी। जब खीची ने कोडा जहानाबाद का विजय किया और वहाँ के मुसलमान सूबेदार को मार कर किले पर अधिकार कर लिया उस समय सूबेदार की १५ वर्षीया लडकी लूट मे मिली थी। भूषण की सलाह से खीची ने उसका विवाह अपने राजकुमार रूप सिंह के साथ कर लिया था। इससे दोनो की समाज-सुधारक-भावना का भी अच्छा परिचय मिल जाता है। जब सवत् १७६७ वि० मे भगवन्तराय खीची नबाब सहादत खॉ से युद्ध करते हुए मारे गए थे तो भूषण को महान दुख हुआ था उस समय के दो छन्द इस महाकवि के रचे मिलते हैं। उनमे से एक यहाँ उद्धृत है—

उठि गयो आलम सो रुजुक सिपाहिन कौ,
उठिगौ बँधैया सबै वीरता के बाने कौ।
भूषन भनत उठि गयो है धराते धर्म,
उठिगौ सिगार सबै राजा राव राने कौ।
उठिगौ सुकवि सील उठिगौ जसीलौ डील,
फैलौ मध्य देश में समूह तुरकाने कौ।
फूटे भाल भिक्षुक के जूझे भगवन्त राय,
अरराय टूट्यौ कुल खंभ हिन्दुआने कौ।

कैसी हृदय ग्राहिणी और मर्मवेधी रचना है! इसे पढकर किसका हृदय ऐसा है जो द्रवीभूत न हो इसके एक-एक शब्द से मर्म वेदना फूटी पडती है!! इन छन्दो से खीची के उत्कर्ष, उदार भाव, उत्साह एवं महत्ता का अच्छा परिचय मिलता है। भूषण की इसी विशेषता ने उन्हे इतना गौरव प्रदान किया था। इस युद्ध मे भी खीची ने अच्छा वीरत्व प्रदर्शन किया था और हरावल को छिन्न-भिन्न कर उसके सेनापति अबूतुराव खॉ का बध कर डाला था। इसी आतक से सशकित हो सहादत खॉ हाथी से उतर कर घोडे पर सवार हो सेना के बीच मे चला गया था। खीची की सेना केवल २००० थी जब कि नवाब के पास ५०००० सेना दल था। भूषण को इस घटना से महान दुख हुआ था जैसा कि उक्त कवित्त से स्पष्ट है।

छत्रपति छत्रसाल

महाराज छत्रसाल बुंदेला ने शिवाजी की शिक्षा मान कर स्वराज्य स्थापन का आयोजन किया। उन्होने बुंदेलखंड मे औरङ्गजेबी सेना से अनवरत युद्ध करके अपनी छोटी-सी जागीर को एक विस्तृत राज्य के रूप मे परिणत कर दिया था। परन्तु सं० १७८० वि० के लगभग मोहम्मद खा बगस ने पन्ना राज्य पर आक्रमण कर दिया। महाराजा छत्रसाल अति वृद्ध हो गये थे। उनके पुत्रो मे कोई भी योग्य न था।

अतः वे इस आक्रमण को न सम्हाल सके और किले में बैठकर आत्म-रक्षा करते रहे ।

अन्त मे जब कोई उपाय चलता न देखकर भूषण महाकवि से सहायता की याचना की । ये तुरन्त दक्षिण की ओर चल दिये पूना पहुँच कर छत्रसाल की ओर से बाजीराव पेशवा से यह प्रार्थना की—

"जो गति ग्राह गजेन्द्र की, सो गति मेरी आज ।
बाजो जात बुदेल की, राखौ बाजी लाज ॥"

अन्त मे भूषण ने बाजीराव पेशवा को सहायता देने के लिये राजी कर लिया तथा मरहठो की एक सुशिक्षित एव मॅजी हुई सेना के साथ पेशवा को अपने साथ बुँदेलखड मे लिवा लाये । पेशवा ने झाँसी में अपना कैम्प स्थापित किया फिर व्यूह रचना कर एक ओर से मरहठो ने और दूसरी ओर से बुंदेलो ने बगस पर हमला बोल दिया । बंगस मरहठो के आक्रमण को सहन न कर सका और मैदान छोड़ भागा । और उसकी सेना तितिर वितर हो गई । इस प्रकार से विजय श्री बाजीराव पेशवा के हाथ लगी । उस समय भूषण ने पेशवा की प्रशसा मे यह छन्द सुनाया—

बाजे बाजे राजे से निवाजे हैं नजरि करि,
बाजे बाजे राजे काढ़ि काटे असि मत्ता सो ।
बाके बाके सूबा नाल बदी दै सलाह करैं,
बांके बांके सूबा करे एक एक लत्ता सों ।
गाढ़े गाढ़े गढ़ पति काढ़े राम द्वार दै दै,
गाढ़े गाढ़े गढ़पति आने तरैं कत्ता सों ।
बाजीराव गाजी ने उबार्‌यौ आइ छत्रसाल,
आमिल बिठायौ बल करि कैं चकत्ता सों ।

भू० ग्रथावली, फुटकर छन्द ४१

युद्ध की समाप्ति पर महाराजा छत्रसाल ने भूषण की सलाह से अपनी कन्या मस्तानी का विवाह बाजीराव पेशवा से कर दिया और अपना एक-

तिहाई राज्य दहेज मे दे दिया। मस्तानी मुसलमान वेश्या से उत्पन्न हुई थी। यह एक अत्यन्त वीराङ्गना, युद्धकला मे दक्ष और सौन्दर्यशालिनी विदुषी थी। इसके चातुर्य और रूप-लावण्य की प्रशसा सारे भारत भर मे व्याप्त थी। यह शस्त्र-सचालन, गान-विद्या एवं चित्रकला आदि गुणो मे भी अत्यन्त पारंगत थी। पेशवा ने ऐसी रमणी रत्न को पाकर अपने को कृत-कृत्य समझा इसके पश्चात् महाराजा छत्रशाल और महाकवि भूषण ने सानन्द सप्रेम पेशवा को बिदा किया अब छत्रसाल ने महाकवि भूषण को सम्मानार्थ अपने दरबार मे बुलाया। भूषण पालकी मे सवार जा रहे थे और उनका नाती आगे-आगे घोडे पर जा रहा था। महाराज छत्रसाल पेशवाई के लिये आगे बढे। नाती को सजे-सजाये हाथी पर सवार कराके स्वय महाकवि भूषण की पालकी मे एक कहार को हटा कर उसकी जगह लग गये यह देखते ही भूषण तुरन्त पालकी से कूद पडे और ये छन्द उनकी प्रशंसा मे सुनाये—

दोहा—नाती को हाथी दयो, जापै ढुरकत ढाल।
　　साहू के जस कलस पर, धुज बांधो छत्रसाल॥

कवित्त—राजत अखड तेज छाजत सुजस बड़ौ,
　　　गाजत गयन्द दिग्गजन हिय साल को॥
　　जाहि के प्रताप सो मलीन आफताब होत,
　　　ताप तजि दुर्जन करत बहु ख्याल को॥
　　साजि साजि गज तुरी पैदरि कतार दीन्हे,
　　　भूषन भनत ऐसो दीन प्रतिपाल को।
　　और राव राजा एक मन मैं न ल्याऊँ, अब,
　　　साहू को सराहौं कै सराहौं छत्रसाल को॥

इस प्रकार से भूषण ने महाराजा छत्रसाल की प्रशसा मे १०-१२ कवित्त सुनाये जिनकी तुलना मे अन्य छन्द बहुत कम प्रभावशाली दिखलाई देते हैं।

भूषण की इस सहायता मे एक अत्यन्त उदार भावना मिश्रित है जिसकी ओर ध्यान दिलाना उचित प्रतीत होता है। भूषण के आश्रयदाता हृदयराम

सुरकी तथा अवधूत सिह का राज्य छत्रसाल ने छीन लिया था जिसे वे भूषण की सहायता से ही ले पाये थे अतः छत्रसाल के प्रति उनके हृदय मे कुछ विरोध होना स्वाभाविक है। परन्तु इतना होते हुए भी भूषण से सहायता की याचना करने पर व्यक्तिगत द्वेष को भुला कर वे सहायता दिलाने को दक्षिण मे जा धमके थे। इससे हम सरलतया उनकी राष्ट्रीय भावना एव उदाराशयता का अनुमान लगा सकते हैं। भूषण ने कुछ दिनो तक बडे प्रम से वहाँ निवास किया फिर सप्रेम बिदा हो तिकिमापुर को चले आये थे। इस प्रकार से भूषण के कार्यो का क्षेत्र कई मार्गों मे विभाजित था। सगठन, उत्तेजन, उत्साह, और सदाचारिक भावनाओ का विस्तार उनका प्रमुख लक्ष्य था। साथ ही औरगजेबी अत्याचारो से मुक्ति दिलाना जो कि औरङ्गजेब की मृत्यु के पश्चात् भी उसके सरदारो द्वारा अशतः चलते रहे थे।

भूषण विषयक खोज मे दो व्यक्तियो के नाम और मिलते हैं जिनके यहाँ इस कवि के जाने के प्रमाण मिलते हैं। प्रथम चिमनाजी (चिन्तामणि) बाजीराव पेशवा के छोटे भाई और दूसरे बसन्तराय सुरकी चित्रकूटपति जिनका राज्य अवध के नवाब ने छीन लिया था। इन मे वसन्तारायं* सुरकी के लिए "बसन्तराय सुरकी की कहूँ न बागमुरकी" पद्याश भूषण का रचा बतलाया जाता है।

इनके अतिरिक्त उदयपुर राणा जयसिह, जोधपुर नरेश अजीत सिह मोरग नरेश, तथा बीजापुर एव गोलकुडा नरेशो के वशजो के लिये भूषण ने कुछ प्रशसात्मक छंद अवश्य रचे होगे जिनके यहाँ जाने का उल्लेख कवि ने स्वय किया है। परन्तु अब तक इनके सबध के कोई छन्द प्राप्त नही हो सका है और न उक्त सुरकी विषयक छन्दाँशाही पूरा हो पाया है। इसी प्रकार से बादशाह मोहम्मद शाह के लिये भी कोई छन्द प्राप्त

***देखो, सुधा वर्ष ३ खंड १ सं० ४ पृ० ४३०**

नहीं है अतः भूषण विषयक खोज अभी बहुत अपूर्ण है। आशा है हिन्दी प्रेमी समाज इसकी पूर्ति अवश्य करने का प्रयत्न करेगा।

आश्रयदाताओं की सूची

(१) चित्रकूटपति हृदयराम सुरकी वि० स० १७५०-५६ तक[1]
(२) कुमाऊँ नरेश उद्योतचद्र वि० स० १७३१-५५ तक[2]
(३) श्रीनगर (गढवाल) नरेश फतहशाह वि० स० १७४१-७३ तक[3]
(४) रीवाधिपति अवधूत सिह वि० स० १७५७-१८१२ तक[4]
(५) जयपुर नरेश सवाई जयसिह वि० स० १७५६-१८१२ तक[5]
(६) सितारा नरेश छत्रपति साहू वि० स० १७६५-१८०५ तक[6]
(७) बूँदी नरेश रावराजा बुद्धसिह वि० स० १७६४-६८ तक[7]
(८) दिल्ली नरेश जहादर शाह वि० स० १७६६[8]
(९) मैड़ नरेश अनिरुद्ध सिह पौरच वि० स० १७७० के लगभग[9]
(१०) असोथर नरेश भगवन्तराय खीची वि० स० १७७०-९७ तक[10]
(११) बाजीराव पेशवा वि० स० १७७७-९७ तक[11]
(१२) चिमना जी चिन्तामणि वि० स० १७८० के आसपास[12]

---

[1]. सुधा वर्ष २ खंड १ सं० २ पृ० २३२ [2] कुमाऊँ का इतिहास पृ० २९६ [3] गढवाल गज़ेटियर पृ० १८८-९ [4] इम्पीरियल गज़ेटियर जिल्द २१ पृ० १८२ तथा रीवां राज्य दर्पण [5] टाड राजस्थान भाग १ पृ० २८८-२९८ तक [6]. पारसनीस का मराठा इतिहास, भाग १ पृ० ११७

[7]. टाड राजस्थान पृ० ३९०-३९४ तक [8]. माधुरी, असाढ़ सं० १९८१ वि०, इलियट हिस्ट्री जिल्द ७ पृ० ४६२ [9] अलीगढ़ गज़ेटियर का इतिहास भाग तथा माधुरी, चैत्र १९९० वि० [10] नागरी प्रचारिणी पत्रिका, भाग १ अङ्क १ एव भगवतन्राय रासा पृ० १ [11] मराठा पीपिल पृ० २६२ और डफकृत मराठा इतिहास भाग एक पृ० ७२६ [12] ग्रांट डफकृत मराठा इतिहास भाग १ पृ० ४२७ तथा २०३ और भाग २ पृ० ४२६

(१३) चित्रकूट पति बसन्तराय सुरकी वि० स० १७८० के लगभग[1]
(१४) पन्ना नरेश छत्रशाल वि० सं० १७२८-६१ तक[2]

इस से स्पष्ट है कि भूषण का कार्य-क्षेत्र बहुत विस्तृत था और सारे भारतवर्ष मे सगठन के लिए बराबर चक्कर लगाते रहते थे। इसके अतिरिक्त सहायतार्थ राजदूत का भी कार्य करते थे छत्रसाल के लिये पेशवा के यहाँ दौडे जाना इसी बात को सूचित करता है। मस्तानी के लडकों को समाज मे लेने के लिए सवाई जयसिह से एक पडितों की सभा कराके व्यवस्था दिलवाई थी।

मालवा की सूबेदारी तथा साहू का अधिकार स्थापित कराने के लिए पेशवा वाजीराव और सवायी जयसिह के बीच बातचीत का दौर भूषण की मध्यस्थता मे उन्ही के द्वारा हुआ था। हिन्दू मुसलमान विवाह परस्पर मे स्थापित कराना भूषण की प्रमुख योजना थी जिस पर उन्होने अपना कार्य क्रियात्मक रूप मे आगे बढाया था। अछूतों को उठाना, हिन्दुओ की छुआछूत तथा ऊँच-नीच भावना को दूर करना उनका दैनिक कार्य बन गया था जिस पर वे जीवन भर आरूढ रहे थे। उनके कथनो मे इस प्रकार के पर्याप्त प्रमाण मिलते हैं। राष्ट्रीय योजना के लिये जितना महत्व-पूर्ण कार्य भूषण ने किया था उतना उस समय तक किसी के द्वारा नही हुआ दिखलाई देता। आलोचना विषयक भाग मे इस पर पर्याप्त प्रकाश डालने का प्रयत्न किया जायगा।

भूषण के सबध मे कितनी ही भ्रान्तियों को तत्कालीन शासकों ने तो फैलाया ही था अग्रेजो के पिट्ठुओं और खुशामदी टट्टुओ ने और भी गहरा रूप दे दिया था। उन्होने भूषण जैसे राष्ट्रोद्धारक महाकवि को भिखमॅगा तथा घोर श्रृगारी तक कह डाला था। इसी प्रकार से इस कवि को जाति-विद्वेषी तथा राष्ट्रीयता विरोधी कहने मे भी नही चूके थे। इसके संबधित

---

[1] **सुधा वर्ष ३ खंड १ स० ४ पृ० ४३०** [2] **छत्रसाल का जीवन चरित्र, साहित्य भवन लिमिटेड प्रयाग, छत्र प्रकाश**

इतिहास को विकृत रूप देने मे तो लगभग सभी प्राचीनता पक्षपाती साहित्यको ने पूरा भाग लिया था जिसकी ऊहापोह मे २५ वर्ष का लम्बा समय लग गया था। कुछ साहित्यिक गुप्त रूप से ही उक्त प्रतिक्रिया-वादियो को बल दे रहे थे। परन्तु अन्त मे तिमिराच्छन्न मेघ क्रमशः हटते गये और सत्य का प्रकाश बढता गया। फिर भी भूषण विषयक बहुत बडा कार्य शेष है।

२. रचना खण्ड

रचनाओं की विचारधारा

महाकवि भूषण की रचनाए अपना विशेष महत्व रखती हैं। इनके द्वारा जो राष्ट्र का महान कार्य सम्पन्न हुआ है इसकी तुलना भारत के इतिहास मे नही मिलती। फिर भी काल की थपेड़ो ने उनका बहुत बडा अश लोप कर दिया है। यहाँ तक कि 'भूषण हजारा' के सहस्र छन्दो मे से केवल सौ के लगभग कवित्त सवैयो का अब तक खोज से पता लग सका है। कालिदास त्रिवेदी ने अपने हजारा मे 'भूषण हजारा' के ७५ कवित्त सवैये उद्धृत किए हैं। परन्तु उक्त कालिदस हजारा भी अब तक प्रकाश मे नही आ पाया है। इस दशा मे भूषण हजारा की कथा ही क्या कही जा सकती है।

भूषण के ग्रथो मे से केवल एक ही रचना प्रकाश मे आ सकी है वह है 'शिवराज भूषण' जिसे कवि ने साहू के दरबार मे रहकर रचा था। इसके अतिरिक्त अन्य कोई ग्रथ अब तक अन्वेषण द्वारा प्राप्त नहीं हुआ। इसके सिवाय भूषण उल्लास एव दूषण उल्लास नामक ग्रन्थो की चर्चा शिवसिंह सेंगर ने अपने सरोज में की है। परन्तु इन ग्रन्थों का भी कहीं पता नही चल रहा है शिवा बावनी के ५२ छन्द एक विशेष घटनापूर्ण होने से दक्षिण मे ही प्राप्त हुए हैं। उत्तरी भारत मे यद्यपि भूषण का कार्य क्षेत्र था जीवन मरण भी यहीं हुआ। फिर भी उनकी रचनाए इधर नही मिल रही हैं इस का एक कारण तो यह प्रतीत होता है कि अन्य अनेको कवियो ने भूषण के कवित्तो को अपना कह कर प्रसिद्ध कर दिया है। इनमे से दत्त, इन्दु, भूधर, सारंग, गङ्ग, और नेवाज के नाम पर भूषण के छन्द 'प्रचलित' पाये गए है जिन पर पत्र-पत्रिकाओ मे भली प्रकार से विचार विनिमय करके निराकरण किया जा चुका है। यहाँ पर उनमे से हम एक

उदाहरण नमूने के रूप मे देकर पाठको को दिखलाना चाहते है कि किस प्रकार से इन पिछले खेवे के कवियो ने भूषण के छन्दो को अपना कर अपने नाम से प्रसिद्ध कर दिया है। भूषण कवि का यह छन्द शिवा बावनी मे दिया हुआ है—

केतिक देश दले दल के बल,
दच्छिन चगुल चापि कै राख्यौ।
रूप गुमान हर्यौ गुजरात कौ,
सूरति कौ रस चूसि कै नाख्यौ।
पजन पेलि मलेच्छ मले सब,
सोई बच्यौ जेहि दीन है भाख्यौ।
सो रग है सिवराज बली जेहि,
नौरङ्ग मे रङ्ग एक न राख्यौ।

(शिवा बावनी)

यही छन्द दत्त कवि के नाम पर श्रृंगार सग्रह मे इस प्रकार से दिया हुआ है—

केतिक देश जिते छल के बल,
चापि धरा धर चूरि कै नाख्यौ।
रूप गुमान हर्यौ गुज रात कौ,
सूरति कौ रस चूसि कै नाख्यौ।
जट्ट की हद्द लिखी कवि दत्त ने,
झूठ नही यह साच कै भाख्यौ।
सो रग है सिवराज बली जेहि,
नौ रग में रग एक न राख्यौ।

उक्त छन्द के इन दोनो रूपो पर ध्यान देने से स्पष्ट हो जाता है कि प्रथम छन्द मे मौलिकता है और भूषण के पूर्ववर्ती होने के कारण परवर्ती दत्त ने ही उसे चुराकर अपना लिया है यह स्पष्ट प्रमाणित होता है।

दक्षिण का शिवाजी से विलेप सबध है। वहाँ पर उन्होने अपना पूरा आधिपत्य जमा लिया था। दत्त कवि ने दक्षिण शब्द हटा कर 'धरा' शब्द उसके स्थान पर रख दिया है। इससे इस छन्द की ऐतिहासिकता नष्ट हो गई है तथा शिवाजी का साक्षात् सबध उससे दूर हो गया है।

दत्त कवि ने इसमे "जट्ट की हद्द" जोडकर अपने आश्रयदाता भरतपुर नरेश की प्रशसा करने का प्रयत्न किया है। परन्तु औरगजेब के छक्के छुडाने वाला शिवाजी ही था जाट नहीं। जाट तो औरङ्गजेब की मृत्यु के पश्चात् क्षेत्र मे आये हैं अतः अन्तिम पक्ति को ज्यो का त्यो शिवाजी के नाम पर ही रहने दिया है यथार्थ मे देखा जाय तो यही अतिम पक्ति इस सवैया की जान है इसके एक भी शब्द का हटना सारे छन्द को विकृत कर देता है। इसी से वे ऐसा न कर सके। गुजरात और सूरत की विजयों का जाटो से कोई सबंध न था। उनका राज्य विस्तार यू० पी० के पूरे प्रान्त पर ही नहीं हो पाया था फिर दक्षिण विजय की चर्चा तो एक झूठा प्रलाप ही मानना पड़ेगा। इसीलिये कवि ने "झूठ नहीं यह साँच कै भाख्यौ।" के वाक्छल द्वारा झूठी सौगध खाकर अपने कथन की पुष्टि करनी चाही है जिसमे सत्य नाम को भी नहीं है।

उक्त विजयो और लूट का सीधा सबध शिवाजी तथा मरहठो से है अतः स्पष्ट हो जाता है कि छन्द भूषण का ही रचा है अन्य का नही। छन्द के दक्षिण मे पाये जाने के कारण इस पर भूषण कृत होने की और भी पुष्टि हो जाती है। शिवसिह सरोज ने भी इस छन्द को भूषण का ही रचा माना है। इसी प्रकार से अन्य कवियो के बारे मे भी यही बात घटित हुई है जिनका स्थान सकोच से विवेचन करना उचित नहीं जान पडता। कवि परम्परा मे दूसरो का भावापहरण ही एक अपराध माना जाता रहा है। यदि कोई कवि दूसरे कवि के छन्द अथवा पद्याश को चुराकर अपना कहने लगे तब तो वह उसका अक्षम्य अपराध कहा गया है।

दूसरा कारण भूषण की रचना के लुप्त होने का उसकी राष्ट्रीयता है। इस महाकवि ने अपनी कविता द्वारा राष्ट्र का सगठन करके औरगजेबी साम्राज्य को ध्वस्त कर दिया था अतः बाद के मुसलमान शासक तथा अग्रेज अधिकारी इस राष्ट्रीय भावना को पनपने नही देना चाहते थे। यही कारण है कि ग्रियर्सन, ग्रीव्स, की, तथा गार्मा द तासी आदि अग्रेज तथा फ्रेन्च लेखको ने भूषण कवि की कही चर्चा नही की तथा शृगारी और साम्प्रदायिक कवियो के बारे मे खूब विस्तार से प्रचार किया। मुसलमान शासको ने भी झूठी किवदन्तियो द्वारा यथार्थता का लोप करने का प्रयत्न किया था। इसी से हम भूषण के विषय मे इतिहास को आज भी अधिक अधकार मे फँसा पाते है। अब भी यही प्रयत्न किया जा रहा है। कवि की मर्मज्ञता और जीवनदायिनी शक्ति समझने का प्रयत्न बहुत कम देखने को मिलता है।

भूषण के पश्चात् उत्तरी भारत और दक्षिण मे सर्वत्र उथल-पुथल मची हुई थी। जीवन सघर्ष और साम्प्रदायिक स्पर्द्धा भी खूब बढी-चढी थी। मराठों के प्राबल्य से दोनो सम्प्रदायो मे तुलनात्मक रूप समकक्षता को पहुँच गया था। भूषण के प्रयत्न से इस रूप के आने मे अधिक सहायता मिली थी। इसीलिये देश मे आपाधापी तीव्र गति से बढ रही थी। इस स्थिति मे काव्याराधना के लिये स्थान रह ही कहाँ जाता है! अतः कविता का मानदड बहुत गिर चुका था। इसी से अठारहवीं शताब्दी के बाद हमे उच्च कोटि के कवियो का नितान्त अभाव दिखलाई देता है। इस काल मे अज्ञानता का प्रसार भी अधिक जान पड़ता है यह भी एक प्रमुख कारण था जिससे भूषण की कविताओ का लोप होता गया था। भूषण कवि जो राष्ट्रीय भावना देश मे लाना चाहते थे उसके न तो समर्थक ही देश मे रह गये थे और न ऐसे आश्रयदाता ही दिखलाई देते थे जिनके द्वारा इस कार्य को बढाया जा सके।

डा० पीताम्बर दत्त जी बडथ्वाल ने भूषण के नायिकाभेद सबधी २५ कवित्त सवैये नागरी प्रचारिणी पत्रिका मे प्रकाशित किये थे। इन

छन्दों से विदित होता है कि महाकवि भूषण ने नायिकाभेद पर भी कोई ग्रथ रचा था। संभव है ये छन्द भूषण उल्लास अथवा दूषण उल्लास में से किसी के भाग हो अथवा किसी अन्य ग्रथ का ही यह एक अंश हो। अतः इनके विषय में निश्चित रूप से कुछ भी नहीं कहा जा सकता।

शिवा बावनी

जब भूषण कवि दक्षिण की यात्रा में बीजापुर तथा गोलकुंडा होते हुए सितारा पहुँचे तो जिस प्रकार से छत्रपति साहू और बाजीराव से भूषण ने भेंट की और वहाँ पर सम्मानित हुए थे उसकी चर्चा पहले ही की जा चुकी है। भूषण-साहू की यह भेंट अनजान में हुई थी अतः भूषण ने अपनी रुचि के ही छन्द उन्हें सुनाये थे। इनमें से अधिकांश छन्द शिवाजी की प्रशंसा में ही कहे गये हैं। अनेक छन्द ऐसे हैं जो शिवाजी की प्रशंसा में कहे गये हैं परन्तु उनकी ऐतिहासिकता साहू और बाजीराव पेशवा से संबंधित है। शिकार से ये लोग लौटे थे अतः भूषण ने तत्संबंधी भी एक कवित्त उन्हें सुनाया था। साथ ही मुरकी नरेश तथा अवधूतसिंह की प्रशंसा में भी एक-एक कविता कही थी। उस समय औरङ्गजेब राष्ट्रीय शत्रु के रूप में प्रतिपादित हो रहा था अतः उसके संबंध में कवित्व का रूप वही हो सकता था जैसा कि भूषण ने दिया था। राष्ट्र-निर्माण के लिये इसी एक मात्र भावना से काम लेने की आवश्यकता थी। इसके बिना न तो उत्साह का सम्पादन हो सकता था और न शीघ्र सफलता पाने के लिये उत्तेजना की देन ही समाज को दी जा सकती थी।

उक्त सजीवता को स्थायी रुप देने के लिये औरंगजेब के बाद भी भूषण ने उस शासन को उसी रूप में प्रतिपादित किया था जैसा कि शिवाजी के पश्चात् साहू और बाजीराव पेशवा के शासन और महत्ता को उन्होंने शिवाजी की देन समझ कर उन्हीं के नाम से अभिहित किया है। शिवा बावनी की रचना से भूषण की इस भावना का स्पष्ट पता चल जाता है। भूषण की इस प्रणाली का जो अध्ययन नहीं कर पाता वह इस कवि

की महत्ता और प्रभाव को समझने मे भी असमर्थ रहेगा। राष्ट्र-निर्माण के लिये उत्तेजना और उत्साह दोनो की ही आवश्यकता होती है। कब किससे किस प्रकार का काम लेना चाहिए यह रचयिता के निर्णय पर निर्भर रहता है। भूषण इस विषय का सबसे अच्छा ज्ञाता था, इसमे सन्देह नही। उसकी सफलता ही इस बात की द्योतक है। उत्तेजना उत्साह का ही एक रूपान्तर है जो परिस्थिति के अनुसार काम मे लाया जाता है प्रयोग कर्त्ता की समन्वयात्मक बुद्धि ही इसकी निर्णायिका है।

शिवा बावनी का पहला छन्द ही इस भावना को व्यक्त करता है कि शिवाजी का आतक औरगजेब पर कितना छाया था भूषण ने इसे ११ उपमाओ द्वारा पुष्ट करके पाठको के सम्मुख रखा है जिनम इन्द्र का प्रभाव जंभासुर पर, बडवानल का पानी पर, राम का रावण पर, पवन का बादल पर, शिव का कामदेव पर, परशुराम का सहस्रबाहु पर, वन की आग का लकडियो पर, चीता का हिरणो पर, सिह का हाथियो पर, प्रकाश का अंधकार पर, और श्रीकृष्ण का कस पर है, वैसा ही प्रभाव शिवाजी का औरगजेब पर है। इस प्रकार शिवाजी का आदर्श उपस्थित कर जनता मे नवजीवन देना कवि का लक्ष्य था।

भूषण एक छन्द द्वारा प्रश्न करता है कि कौन बडा है कौन साहसी है? वीरत्व और लज्जा किसमे है? चकवा और सुमनो (सुन्दर मनो) को सुख देने वाला कौन है? उदार कौन है? इसका उत्तर कवि देता है कि दक्षिण नरेश शाहजी का पुत्र शिवाजी है।

भूषण ने शिवाजी की सेना का बडा ही विशद् वर्णन किया है। उसकी चतुरङ्गिनी सेना का सचालन युद्ध के लिये बडे ही मार्के का होता था उसके धौसा की धुकार बेहद थी। मस्त हाथियो के मद से नदी-नदो मे बाढ आ जाती थी। ऐसे हाथियो की रेल-पेल से पहाड उखड जाते थे। सेना सचालन के कारण धूल इतनी अधिक उठती थी कि सूर्य तारे जैसा लगता था और पृथ्वी पर समुद्र ऐसे हिलते थे जैसे थाल मे रखा

हुआ तारा हिल रहा हो। वीर रस की भावना लाने मे ऐसा ही साहित्य उत्कर्ष दे सकता था।

इसी प्रकार कविभूषण ने सवारो की झडियो और हाथिया के घटो का बडा ही वीरता स परिपूर्ण चित्रण किया है। उनके आतंक से पहाडवासी घबडा गये थे, ग्राम और नगर वाले भाग गये थे। घर को भागते हुए हाथियो के हौदे उकस गये थे तथा भौरे जो मस्तक पर घूमते थे वे मार्ग मे ही रह गये थे। शिवाजी की सेना के दबाव से कच्छप भगवान की पीठ टूट गई और शेपनाग के फन केरा के पत्ते से फट गये थे।

औरगजेब और उसके सरदारो के परिवार पर शिवाजी का कितना आतक था कि बादलो की घटाओ को हाथियो की सेना मान कर त्रस्त हो जाते थे। बिजली को खुली तलवार, तीज के चन्द्रमा को सवारो के सिर को छाप बतलाते थे। इस प्रकार से हरम मे बेगमे हवा न ही सेना का आगमन मान कर त्रस्त हो जाती थी। भूषण की इन रचनाओ से औरगजेब की प्रतिस्पर्द्धी भावनाओं को अच्छा बल मिला था। किसी-किसी छन्द मे त्रस्त बेगमो के भागने का भी चित्रण किया गया है जिस मे अपडर की ही प्रधानता थी। शिवाजी की सेना ने कभी उन पर अत्याचार नही किया था। शिवाजी की सेना के लिये इस संबंध मे कडो आज्ञा थी कि मसजिद, क़ुरान और मुसलिम स्त्री किसी को हानि न पहुँ-चाई जाय और न अपमान किया जाय।

भूषण ने औरगजेब का सब राजाओ पर दबाव पडने का फूलो तथा भौरे के रूपक से अच्छा चित्रण किया है उसमे शिवाजी को चम्पा का रूपक देकर भौरे के आघात से उसे बचाया है। इसमे साहित्यकता का गहरा पुट होते हुए भी राजनीति का भी अच्छा विश्लेपण कर दिखाया है।

शिवाजी के दक्षिण विजयो का वर्णन करते हुए भूपण ने औरग-को (नौरग) नाम देकर उसकी आभा को कैसे मलीन कर दिया था

इसे सूरत की लूट तथा गुजरात की विजय के सहारे से बड़ा ही हृदयग्राही चित्रण किया है। हिन्दी साहित्य मे इस कोटि की रचना अन्यत्र शायद ही देखने को मिल सके।

भूषण ने पक्षियो के शिकार के आधार पर साहू की शिकार खेलने की प्रवृत्ति का तो चित्रण किया ही है इसके साथ ही बाजीराव पेशवा को बाज के रूप मे चित्रित कर मुर्गालिया सरदारो को पक्षी रूप मे अकित किया गया है इससे कवि की भावना को हम सरलतया समझ सकते हैं। बाजीराव ने दिल्ली राजधानी तक अपना अधिकार करके मुगलसत्ता को समाप्त ही कर दिया था।

साहू की विजयो तथा आतक को कवि ने बलखबुखारा, मुल्तान, रूस खुरासान, सक्खर, भक्खर तथा मकराना तक विस्तृत करने का वर्णन किया है जो कि यथार्थता का ही द्योतक है। शिवा बावनी मे भूषण ने साहू को अनजान मे हृदयराम सुरकी एव अवधूतसिह सोलकी की भी प्रशसा सुनाई थी जो भूषण की दक्षिण यात्रा से पूर्व ही रीवा पर अधिकृत हुए थे। इस छन्द मे कवि ने बडा ही प्रभावशाली चित्रण किया है। साथ ही हाथियो को तेग से काटने का उल्लेख कर बडा ही गभीर वीरत्व प्रदर्शन किया है। इस छन्द मे ओज कूट-कूट कर भर दिया गया है।

कुछ छन्दो मे कवि ने औरगजेब की निन्दा भी की है तथा अपने बाप शाहजहाँ को कैद करने एवं परिवार को नष्ट कर डालने का बडा ही गभीर विवेचन किया है। इस अन्याय पूर्ण ढग से बादशाही पाने के लिये उसे तिरस्कृत भी किया है फिर उसके छल छंदो की चर्चा करते हुए बगुला भगत बन कर माला जपने के ढोग का पर्दाफाश कर "सौ-सौ चूहे खाय कै बिलाई बैठी तप के।" का कैसा सटीक विश्लेपण किया है। एक दूसरे छन्द मे भूषण ने औरगजेब द्वारा मदिर गिराने तथा हिन्दुओ पर अत्याचार करने का बहुत ही विस्तार पूर्वक कथन किया है और बतलाया है कि पीर-पैगबरों का इसने कैसा विस्तार कर डाला था। कही पर भूषण औरंगजेब को कुभकर्ण के रूप मे चित्रित करते है तथा काशी मे विश्वनाथ

का मदिर और मथुरा मे केशवराय का देहरा गिरा कर मसजिद के रूप मे परिणत कर डालने की चर्चा करते हैं।

कुछ छदो मे शिवाजो की विजयो का बडा ही विशद् वर्णन किया गया है सल्हेर के युद्ध मे जो महान विजय औरगजेबी सेना पर शिवाजी को मिली थी उससे शत्रुओ पर कैसा आतक भर गया था तथा युद्ध मे कैसी उनकी दुर्दशा हुई थी इसका वर्णन बहुत ही सुन्दर हुआ है। इसमे २२ बडे सरदार मारे गये थे। इसमे विदित होता है कि युद्ध का चित्रण करने मे भूषण बडे ही दक्ष थे। इस भावना मे उनकी सजीवता दर्शनीय है। भूषण ने साहू और बाजीराव पेशवा की विजयो का उल्लेख भी शिवाजो के नाम पर ही कर दिया है। भेलसा और सिरोंज में छावनी डालना तथा गुजरात की विजय और दिल्ली तक अधिकार कर लेना शिवाजी के सबध की घटना नही है फिर भी कवि ने इन्हे शिवाजी के नाम पर ही कथन किया है। उक्त विजय बाजीराव पेशवा ने की थी। इसका मुख्य कारण यही था कि इन विजयों को भी भूषण शिवाजी के आदर्श की विजय समझते थे।

शिवा बावनी मे कर्नाटक, मलाबार, जिंजी, तजौर, गोलकुडा और मदुरा नरेशो के शिवाजी के आतंक से 'दब कर' त्रस्त होने का चित्रण किया गया है। साथ ही यूरोपियनों की सूरत में बस्ती लूटने, हबशियो को हराने एव बीजापुर के इलाके लेने का उसमे आकर्षक वर्णन मिलता है। इस विषय मे अफजल खॉ के बध की चर्चा जितने महत्त्वपूर्ण ढङ्ग से की गई है वह अन्यत्र कठिनता से ही मिल सकेगी।

भूषण ने अपने चित्रण मे पौराणिक भावो का भी पर्याप्त सहारा लिया है। इसी से शिवाजी को अवतार रूप मे अकित किया है तथा इन्द्र जैसे वैदिक देवता को तुलसी की तरह गिराने का प्रयत्न न कर उसके आदर्श की पूर्ण रक्षा की है। कंस-कृष्ण, कैटभ-कालिका, अत्याचारी—इन्द्र, रावण-राम जैसे रूपक भूषण ने खूब लिखे हैं। इसी आधार पर उन्होने शिवाजी को हिन्दुत्व का रक्षक ठहराया है और मन्दिरो मे

देवताओं की और समाज मे धर्म की रक्षा करने वाला ठहराया है। साथ ही पापियो को दण्ड देने वाला कह कर देश मे सभी काम काज वालो को निश्चिन्त कर दिया गया बतलाया है। इस प्रकार से शिवा बावनी की रचना अपना एक विशेष महत्व रखती है।

भूषण विषयक जितनी सामग्री उपलब्ध है उसमे सबसे महत्व-पूर्ण स्थान शिवराज भूषण का है। यह एक अलकार ग्रन्थ है। जिसके लक्षण दोहो मे कहे गये है और उदाहरण कवित्त सवैयो मे दिये गये हैं। ये सब उदाहरण शिवाजी की प्रशसा मे ही रचित है जिनमे साहित्यिक गरिमा के साथ ऐतिहासिक वर्णन यथार्थ रूप मे चित्रित किया गया है।

इस ग्रथ मे जो मङ्गलाचरण दिया गया है वह एक गभीर वीर रस की भावना के अनुरूप चित्रित किया गया है। कवि ने गणेश का ब्रह्म के रूप मे वर्णन किया है जिनके गडस्थल अलिकुल से मडित हैं और आनन्द रूपी नदी मे स्नान करना जिसे प्रिय है। वे गणेश पाप वृक्ष के नाश करने वाले विघ्न रूपी किलो को तोडने वाले तथा ससार का मनोरजन करने वाले है ऐसे दो दन्त वाले गणेश का गान कीजिए। मध्यकालीन युद्धो मे हाथियो से किलो के तोडने का काम लिया जाता था। वृक्षो के तोडने मे इन्हे रुचि है। गॉव वालो का हाथो से मनोरंजन होता ही है अत' यह कथन वीर रस के नितान्त अनुकूल है इस पर भूषण ने एक दन्त वाले गणेश की प्रार्थना नही कराई जो कि हार की निशानी है। परशुराम ने गणेश का एक दॉत तोड दिया था। अतः विश्व विजयी दो दन्त वाले गणेश को वन्दनीय माना है इससे हम सरलतया भूषण की महत्वपूर्ण भावना का अनुमान कर सकते हैं।

दुर्गा की प्रार्थना भी उसी विजयिनी विचारधारा को लेकर व्यक्त की गई है जिसने शक्ति के रूप मे मधु कैटभ, महिषासुर, चड-मुड, भंडासुर, रक्त बीज तथा विडालाक्ष को बध किया था। यही भावना वीरत्व को उत्कर्ष दे सकती है शिवाजी का आदर्श विस्तार के लिये इसी साधना से काम लिया गया है।

तीसरी प्रार्थना सूर्य की की गई है जो कि ज्ञान और प्रकाश का दाता है ससार रूपी समुद्र के पार करने के लिये इसे ही नौका रूप माना गया है। वैदिक मुख्य प्रार्थना भी गायत्री रूप मे इसी भावना को लेकर चली है। इसी से सूर्य को आनन्द का घर कहा गया है तथा सविता रूप मे यही प्रतिपाद्य विषय था।

राजवश वर्णन मे सीसोदिया, सरजा, भौसला और खुमान की जो व्युत्पत्ति की गई है वह वैदिक प्रणाली पर ही व्यक्त हुई है।

भूषण ने शिवाजी को ईश्वरावतार रूप मे राम-कृष्ण के समकक्ष मानकर ही चित्रित किया है। इसी लिए प्रारभ मे ही वे स्पष्ट कर देते है —

दशरथ जू के रामभे, बसुदेव के गोपाल।
सोई प्रगटे साहि के श्री सिवराज भुआल॥
(शिवराज भूषण, छं० ११)

भूषण ने शिवराज भूषण मे रायगढ का बडा ही विशद् वर्णन किया है। यह किला बीच की तीन गढियो से युक्त होने के कारण 'माची' कहा गया है। महाराष्ट्र मे यह 'माची' शब्द गढ़ी के अर्थ मे ही प्रयुक्त होता है। उसकी सजावट से इन्द्रपुरी की तुलना की गई है। दस छन्दो मे उसके वृक्षो, महलो, बगीचो तथा दरबारों का अत्यन्त ही आकर्षक चित्रण किया गया है।

कवि वश वर्णन मे भूषण ने अत्यल्प बाते कही हैं। केवल पिता का नाम वश, गोत्र और निवास स्थान का उल्लेख भर कर दिया है। राजा बीरबल ने उसी तिकमापुर के पास कानपुर हमीरपुर रोड पर एक बिहारीश्वर का मन्दिर बनवाया था जिसकी चर्चा भी भूषण ने की है।

अलङ्कारो का प्रारम्भ करते हुए इस महाकवि ने 'उपमा' को सर्वोत्कृष्ट माना है अतः उसी से अलङ्कारो का प्रारभ कर क्रमशः अलङ्कारो का विस्तार किया है। इसमे १०५ अलङ्कारो के उदाहरण और परिभाषा देकर अन्त मे आशीर्वाद के साथ इस ग्रंथ की समाप्ति की गई है।

प्रथम उदाहरण मे ही कवि की विशेषता का परिचय मिल जाता है इसमे कवि दिखलाता है कि जैसे इन्द्र ने श्रीकृष्ण को द्विविधा मे डाल दिया था वैसे ही शिवाजी ने औरगजेब को चकित कर दिया था। यह उपमा साधारण रूप से कुछ विकृत सी मालूम होती है तथा लोकाचार के अनुकूल नही जान पडती परन्तु जब हम भूषण की वैदिक भावना पर दृष्टि डालते हैं जिसमे इन्द्र सबसे प्रमुख देवता गिना गया है तब इसका ठीक-ठीक समन्वय होने मे देर नही लगती और कवि की महत्ता का रूप स्पष्ट हो जाता है। हमे इसी शैली पर भूषण की रचना का निर्णय करना चाहिए।

रूपक के चित्रण मे भूषण ने औरङ्गजेबी अत्याचारो को कलियुग के अधर्म मय काल से तुलना करते हुए बडा ही विशद् वर्णन किया है तथा इन अत्याचारो को समुद्र के रूप मे घटित कर तरगो को अधर्म, लाखो म्लेच्छो व अत्याचारियो को मगर-मच्छ का समूह, राजाओं का आश्रित होना नदी-नद के तुल्य मान करके कलियुग रूपी समुद्र मे जामिलने से नीरस बनजाना बडी ही सटीक भावना है। इस प्रकार से औरङ्गजेब रूपी कलियुग ने सारी भूमि को अपने आधीन कर रखा था इस समुद्र से पार हो जानेवाले शिवाजी ने वादवान रूपी तलवार से यश रूपी जहाज को आगे बढाया था। कैसा प्रभावशाली कथन है। इसी रूपक के दूसरे उदाहरण मे कलियुग का शारीरिक चित्रण कर औरङ्गजेब को सिर के रूप मे, अब्बास खॉ उसका हृदय, आदिलशाह एव कुतुब शाह उसकी दो भुजायें, म्लेच्छ उमराव इसके पैर तथा अन्य म्लेच्छतुर्क उस कलियुग के शरीर के अन्य अङ्ग है। इस कलियुग ने संसार मे अत्याचार तथा अनाचार भर दिया जिसका खण्डन शिवाजी ने साहस के साथ तेग लेकर कर दिया था। कैसा प्रभावशाली विश्लेषण है!

भूषण ने ऐतिहासिक विवरणो को अलङ्कार के रूप देकर जैसी हृदय ग्राही एव आकर्षित सामिग्री प्रस्तुत की है उसका भी अवलोकन कीजिए।

अफजल खॉ याकूत खॉ और अकुश खा को साथ लेकर १२००० सेना के सहित शिवाजी को पकड़ने आया था जिसे देखकर महाराष्ट्र

प्रान्त मे खलबली मच गई थी और लोग घबडा कर भागने लगे थे, तब शिवाजी ने बघनखॉ के सहारे उसे पटक कर समाप्त कर दिया इस पर आकुतरूपी महावत अफजल रूपी गज के बिना होकर अंकुश (खॉ) के साथ भाग गया । कैसी उच्चकोटि की हृदयग्राही व्यजना है !

भूषण ने पौराणिक भावनाओ का सहारा लेकर भी अनेको आकर्षक चित्रण किये है । इन्द्र ने पहाडों के पख काट दिये थे अतः सभी पहाड़ अपनी रक्षा शिवाजी की शरण मे देखकर उनके पास चले आते हैं अर्थात् शिवाजी उन्हे विजय कर लेता है । जो कि पृथ्वी का इन्द्र है । तब यह इन्द्र पहाडो पर किले बनवाकर उन्हे फिर सपक्ष शक्तिवान तथा पखयुक्त बना देता है । भूषण की रचना मे ऐसी उद्भावनाएँ और उक्तियो की भरमार है जिनमे मौलिकता तो है ही उत्साह के नवीन श्रोता का आकर भी है । ऐसी ही रचनाए समाज मे नवजीवन और उत्साह भरने मे समर्थ हो सकती है । कवि ने अनेको छन्दो मे बीजापुर, गोलकुडा औरंगजेब 'दिल्लीनरेश' आदि को हराने, उनपर विजय पाने तथा ब्राह्मण रक्षा की चर्चा की है । इसके साथ ही शिवाजी की तलवार रूपी सूर्य से सारी भूमि को तपित करने की चर्चा करके कुमुदिनी रूपी तुर्किनियो (अत्याचारिनी) को मलिन एव हिन्दू स्त्रियो रूपी कमलिनियो के खिलाने का उल्लेख कर राष्ट्रीय भावना का चित्रण किया है । कही पर भूषण कवि बादलों की वर्षा रूपी उदारता से दरिद्रता रूपी दावानल के नष्ट कर देने का उल्लेख करते हैं । इस रचना मे ऐसी ही भावनाए सर्वत्र ओत प्रोत हैं ।

कही पर उल्लेख अलकार के उदाहरणो मे शिवाजी को भिन्न-भिन्न रूपो मे अङ्कित किया है । कहा वह कल्पद्रुम बनाया जाता है । कही मनोज का अवतार कह कर सौन्दर्यशालो कहा जाता है कही पृथ्वी का चन्द्रमा और कही नृसिह रूप मे दिखलाया जाता है ।

इन कथनो से ऐतिहासिक तथ्य भी बडी ही सुन्दरता से आलकारिक रूप मे वर्णन किया गया है । इसीलिये आदिलशाही उसे गजब ढानेवाला, कुतुबशाही उसे मौजलहरी तथा बहरीनिजाम उसे जीतनेवाला

देव (भयंकर) कहकर पुकारते हैं। बीजापुर पर अधिक आक्रमण होने से कहरी कहा है। मधुना पन्त की मित्रता से गोलकुंडा वाले मौजलहरी (मित्र) रूप में तथा समुद्री सेना वाले निजाम उसे भयंकर मानते हैं। इन पदों में ऐतिहासिकतथ्यों का जैसा सुन्दर विश्लेषण मिलेगा वैसा विश्व के किसी कवि में शायद ही मिल सके।

कहीं भूषण कवि बहादुर ख़ाँ को बेगमों से शिक्षा दिलवाते हैं। इसमें शिवाजी को सिंह के रूप में तथा दिल्ली के अमीरों को गाय के रूप में अङ्कित कर भारतीय संकुचित विचार धारा को तिरस्कृत करने की भी ओर पद बढ़ाया गया है।

शिवाजी के औरंगजेब की जेल से भागकर दक्षिण में पहुँचने का भी कवि ने बहुत सुन्दर वर्णन किया है। उसे गंधर्व तथा देवता के रूप में वर्णन किया है। कहीं शिवाजी शिव (महादेव) को प्रसन्न करने के लिये म्लेच्छों का शिरच्छेद करते दिखलाये गये हैं।

शिवाजी की उपाधि सरजा (सिंह) थी इस पर भी कवि ने बड़ी ही आकर्षक व्यंजनाएँ की हैं। औरङ्गजेब जंगल में शिकार खेलने जाता है सिंह के आजाने पर शिकारी लोग 'सरजा' (शिवाजी) के आने का उल्लेख कर बादशाह को भयभीत कर देते हैं। इससे वह बेहोश हो जाता है। तब साथी सिंह बतलाकर उसे चेतना देते हैं भूषण कवि ने शिवाजी की धाक का सबसे अधिक वर्णन किया है। मुख्यतया अफजल खाँ की दुर्दशा, शायस्ता खाँ की आपत्ति, और बहलोल खाँ की विपत्ति का महत्वपूर्ण वर्णन करके सारी म्लेच्छ सेना पर ही शिवाजी का आतंक जमाकर उसके सहारे से पूरे राष्ट्र में जागरण, उत्तेजना और उत्साह की एक प्रबल धारा बहा दी थी। कहीं इन घटनाओं को मृगेन्द्र व हाथी के रूपक में तथा कहीं बाघ और मृग के सहारे से अङ्कित किया है इसी कारण भूषण का चित्रण बहुत ही सुन्दर बन पड़ा है और सर्वत्र उसमें मौलिकता तथा नवीनता का आभास मिलता है।

पहाड शिवाजी के पास क्यो आते हैं ? इस संबध मे कवि की एक अनोखी उक्ति का दिग्दर्शन कीजिए—

चूँकि अन्य कोई इन पहाडो की रक्षा नही कर सकता इसीलिये ये पहाड शिवाजी से प्रीति करते हैं और उनके पास चले आते हैं। हे शिवा जी ! तू इन्द्र के छोटे भाई विष्णु के अवतार है इसी से तेरी भुजाओं का सहारा पाने के लिये वे तुझसे सलाह करते हे तब तू उन्हे अपनी शरण मे लेकर सरक्षण रूप मे निडर बसने के लिये उन पहाडो पर किले बनवा देता है। अर्थात् उनके सिर पर पाग बाँध देता है। इस प्रकार से शिवाजी द्वारा पहाडी किले बनवाने का बडा ही भव्य चित्रण किया गया है जैसा अन्यत्र कही नही दिखलाई देता।

शिवाजी के सरदार ताना जी मौलसरे को सिंहगढ विजय के लिये भेजा था जहाँ पर उदयभान राठौर औरङ्गजेब की ओर से गढपति था। ताना जी ने रात्रि मे आक्रमण करके किले पर कब्जा कर लिया। परन्तु इसी आक्रमण मे तानाजी मारा गया था। अन्त मे शिवाजी को सूचित करने के लिये घास के ढेर मे आग लगा दी गई थी। भूषण ने इसका बडी ही आलकारिक भाषा मे चित्रण किया है। उसे प्रभात की प्रभा के रूप मे अकित किया है परन्तु भूषण ने तानाजी के मारे जाने का उल्लेख नही किया क्योकि इससे उत्साह उत्पादन मे बाधा पड़ने की सभावना थी।

भूषण ने औरङ्गजेबी बहुत से सरदारो का विस्तार से वर्णन किया है। इसी से खानदौरा, जोरावर, सफदरजग, कार तलब खाँ, आदि को लूटने का विस्तार से उल्लेख किया है तथा सल्हेर की विजय का तो अनेक छन्दो मे चित्रण किया है। वह विजय थी भी बहुत महत्व पूर्ण, जिसमे औरङ्ग-जेब के २२ बडे सरदार मारे गये थे। उन्ही मे अमरसिह चन्दावत भी था। इस युद्ध मे लूट भी बहुत मिली थी जिसे औरङ्गजेब द्वारा शिवाजी को खिराज भेजने के रूप मे कवि ने कथन किया है।

इसी प्रकार से कवि ने मावली सेना का बडा ही वीरत्वपूर्ण वर्णन

किया है। वे किस प्रकार से शत्रुओ के किलो पर रात मे अँधेरे मे ही चढ जाते हैं और उन्हे विजय करलेते है। इसो प्रकार से परनाले के किले तथा अन्य विजयो का भी विशद् वर्णन मिलता है जिससे जनता मे उत्साह की अच्छी वृद्धि हो सकती है तथा किलो का भी गभीर विश्लेषण करने से हम कवि की प्रतिभा का अनुमान कर सकते हैं जिनमे राष्ट्रीयता कूट-कूट कर भरी गई है तथा नवजीवन का अच्छा उद्रेक होता है।

कवि ने रूपकातिशयोक्ति का आधार लेकर शिवाजी के चित्रण मे इन्द्र, विक्रम आदि की महत्ता को तुच्छ ठहराया है। और शत्रु नारियो के रुदन को स्वर्णलता के चन्द्र रूपी मुख के कमल नेत्र से मकरद की बूंदे टपकती हैं कहकर बड़े ही मनोहर रूप मे भाव प्रदर्शन किया गया है।

कवि ने औरङ्गजेब के शासन का चित्रण कर श्रीनगर, नैपाल, आदि राज्या के कर देने तथा मेवाड, जयपुर, उदयपुर, बुन्देलखड, उडीसा, रीवॉ आदि के नौकरी करने से देश की गिरावट का दिग्दर्शन कराते हुए शिवाजी की स्वतन्त्र वृत्ति का अच्छा चित्रण किया है और बतलाया है कि शिवाजी की प्रणालो अन्यो को अपेक्षा बिल्कुल भिन्न है अर्थात् वे औरङ्गजेब से कुछ भी भयभीत नही हैं।

शिवाजो को ईश्वरावतार रूप मे चित्रित करते हुए बतलाया गया है कि मत्स्य, कूर्म, राम, कृष्ण आदि के रूप मे ब्रह्म ही शिवाजी के रूप मे है। इसी भॉति इन्द्र से उत्कृष्ट शिवाजी को ठहराते हुए व्यतिरेक अलङ्कार के सहारे बहुत ही आकर्षक चित्रण किया है।

शिवाजी के व्यवहार, राजनीति आदि के वर्णन भी कवि ने सागोपाग किये हैं। विवेक मे नाम को भी लालच नहीं है, प्रेम मे कपट नही है व्यवहार मे अनीति नही है, तथा कार्य करने मे अपयश नही हैं। इस प्रकार से भूषण ने शिवाजी को विशेषताओं एव सद्गुणो का अच्छा विश्लेषण किया है। साथ ही बीजापुर, गोलकुंडा और दिल्ली के बादशाह शिवाजी से कितने सशकित रहते थे और त्रस्त थे कि अनेक सरदारो के मारे जाने पर भी बदले का साहस नहीं कर पाते थे। जिस शिवाजी

रूपी सिंह का यश कुमाऊँ, मोरङ्ग तथा ओनगर तक पहाड़ो मे फैला हुआ है बिदनूर एव उडीसा तक विस्तृत हो रहा है तथा बगाल एवं गुजरात तक पूर्व-पश्चिम मे सर्वत्र जिसने शत्रुओं के स्थानो को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया है। यही नहीं जो सदैव खूब प्रभावशाली था तथा जोश-खरोश दिखलाता रहता था वह मस्त हाथी रूपी औरङ्गजेब भी जिस सिंह (शिवाजी) के डर से अपनी उच्च पदस्थता को भूल कर मद से रहित हो गया। इस प्रकार से सिंह के रूप मे शिवाजी का ही मार्के का चित्रण किया गया है।

भूषण ने जहाँ उत्तेजनात्मक तथा उत्साहवर्द्धक बहुत-सा चित्रण किया है वहाँ शत्रु पर आतक भरने वाले कथन भी पर्याप्त मात्रा मे किये हैं। इसीलिये वे बहलोल को सबोधन कर कहते हैं कि तू शिवाजी से मत झगड नही तो अब्दुल कादिर बहलोल सी ही तेरी दुर्दशा होगी। इस प्रकार के वाक्यो से अन्य औरङ्गजेबी सरदारो पर आत क भरने का प्रयत्न किया था। एक छन्द मे दिल्ली की सूबेदारी को वेश्या रूप मे चित्रित किया है।

इस महाकवि ने शिवाजी के दान और कृपाण दोनो का बड़ा ही आकर्षक वर्णन किया है। शिवाजी के विषय मे आगरे से औरङ्गजेबी कैद से भागने का भूषण ने बहुत ही प्रभावशाली चित्रण किया है तथा औरङ्गजेब को सलाम न करके उसके अपमान का उत्तर दिया था। इस प्रकार से बिना सेना के ही सफलता प्राप्त की थी।

शिवाजी ने २०० सिपाहियों से शायस्ता खाँ को पूना मे हराया था। उसके घर पर आक्रमण कर उसके लड़के को मार डाला था तब शायस्ता खिड़की से कूदकर भागा था परन्तु कूदने मे ही उसकी अँगुलियाँ काट दी गई थी। उस समय इसकी वहाँ १ लाख सेना पड़ी थी।

शिवाजी ने औरगजेबी परिवार और सेना की कैसी दुर्दशा कर डाली थी। इसे भूषण ने बहुत ही सुन्दरता से वर्णन किया है। उसने शत्रु सेना की अहम्मन्यता लोप कर दी। भयत्रस्त शत्रु घरो से भाग गये तब उनमे जगली जानवर वास करने लगे।

कवि ने शिवाजी की अनेक विजयो का विस्तार से वर्णन किया है। जावली, सिगारपुरी, जवारि, रामनेर आदि विजयो को ओजस्वनी शब्दो मे कथन किया है। बीजापुर के मत्री खवास खॉ ने जब बैर किया तो शिवाजी की सेना के नगाडे बीजापुर के द्वार पर धमकने लगे। जब शिवाजी आलमगीर को कुचल देता है तब आदिलशाह का क्या महत्व है। अतिम दिनो मे शिवाजी ने परनाले का किला लेकर कर्नाटक तक सब देशो को गैद डाला था। इससे शत्रु परिवार त्रस्त हो गये थे।

शिवाजी ने वीदर, कल्याण, परेम्फा आदि किले बीजापुर से छीने थे तथा कुतुबशाह से रामगिर पर्वत को ले लिया था। इस प्रकार से ३५ किले जीते थे परन्तु वे सब जयसिह मिर्जा को भेट कर दिये थे इस प्रकार से पारस्परिक सलाह रखने का प्रयत्न किया गया था। इसी प्रकार से शिवाजी के दान की भी भूपण ने खूब प्रशसा की है। बडे-बडे हाथी, सोने का ढेर और घोडे, भूमि आदि दान मे देते थे।

भूपण ने अनेको छन्दो मे शिवाजी को ईश्वर अवतार हरि के रूप मे वर्णन किया है तथा दान एव कृपाण दोनो का ही उनकी रचना मे विशद कथन मिलता है।

कवि ने परिसख्या के आधार पर वर्णन करके बतलाया है कि शिवाजी के राज मे मदवाले केवल हस्ती ही होते हैं चचलता केवल घोडों मे ही मिलती है। (पर) पख केवल बाणो मे लगते है शत्रु कोई नही। गुणी केवल चित्त को चुरा लेते है वहॉ चोर नही थे। किसी को बधन नही था प्रेम बंधन मात्र था। कपन केला मे था जलविन्दु बादल मे ही थे, अन्यत्र नही।

एक छन्द मे भूपण ने अपने आश्रयदाताओ का उल्लेख कर शिवाजी को सर्वोपरि माना है वे मोरग, कुमाऊँ, श्रीनगर (गढवाल) रीवॉ, जयपुर, जोधपुर, चित्तौड, कुतुबशाह, आदिलशाह, तथा दिल्लीश्वर के दरबारो मे गये थे। अतः उनका उल्लेख किया है। लोहगढ एव सिहगढ

मे औरंगजेबी सरदार गोर तथा राठौर थे उन्हे मार कर शिवाजी ने उन पर अधिकार कर लिया था वे रात के समय आक्रमण करके लिये गये थे।

शिवाजी के दरबार मे अग्रेज, पुर्तगाली, फ्रासीसी नजराना भेजते थे। कर्नाटक भूमि उसके भय से त्रस्त थी। एक अन्य छन्द मे राम ने रावण को तथा अर्जुन ने विराट मे कौरव सेना को हराया था वैसे ही गुसलखाने मे उसने औरगजेब का घमंड हर लिया था। इसी प्रकार से भूषण ने बाबर और अकबर की मेल भावना का आदर्श बतलाते हुए औरगजेब को अच्छी फटकार बतलाई है।

भूषण ने रायगढ के किले की प्रशसा विस्तार स की है। तथा उसमे तालाबो के समूह पपासर एव मानसरोवर के रूप मे थे जिसकी पेडियो मे पच्चीकारी हो रही थी राजपथ बहुत बढिया था, उस किले पर सूर्य चन्द्र विश्राम-सा करते थे तथा रत्नो के कारण सूर्य किरणे अनेक रगो का बदलती रहती थी। भूषण ने वाल्मीक तथा व्यास द्वारा रामायण-महाभारत रचने पर वाणी पवित्र मानी है परन्तु अन्य कवियो ने कलियुग के राजाओ का चित्रण कर वाग्देवी को अपवित्र कर दिया था। अतः भूषण ने शिवाजी का वर्णन कर वाणी को फिर शुद्ध रूप दे दिया है। इस प्रकार से भूषण ने बडा ही उत्कृष्ट एव मौलिक चित्रण करके राष्ट्रोद्वार का महत्वपूर्ण कार्य कर डाला था।

शिवाजी की विजयो से औरङ्गजेब ने जो भ्रष्टता देश मे भर दी थी उसका रूपान्तर हो गया और सर्वत्र धर्म कार्य एव वेद चर्चा होने लगी थी। यश का रूप सफद माना गया हे इसके आधार पर कवि ने बड़ा ही सुन्दर चित्रण किया है। उस सफेदी मे इन्द्र का ऐरावत हाथी सफेद होने से खो गया अतः वे ढूँढ़ते फिरते हैं। विष्णु क्षीर समुद्र को खोज रहे हैं हँस आकाश गगा को, ब्रह्मा हस को, चकोर चन्द्रमा को महादेव कैलाश को तथा पार्वतीजी शिव को ढूढ रही हे कैसी सुन्दर उक्ति है।

अहमद नगर के किले मे नौसेरी खॉ का शिवाजी से युद्ध हुआ था उस घमासान युद्ध मे पक्ष-विपक्ष का पता नही लगता था तब भूषण

उसकी पहिचान बतलाता है कि शिवाजी के वीर हाँक लगाते बढते और मोर लोग हटते देखकर पहिचाने जा सकते थे।

व्याजोक्ति के सहारे से भूषण ने शिवाजी की प्रशसा करते हुए लिखा है कि सरजा ने बादशाह के उमरावो को लूट लिया इससे वे दीन हो गये और विदेश चले गये। जब लोग पूछते है कि दक्षिण नाथ शिवाजी ने यह दशा कर दी है क्या ? तब वे उत्तर देते है कि हमी दुनियाँ से उदासीन हो गये हैं।

भूषण ने बहादुर खाँ की बहुत ही मट्टी पलीत करवाई है। सूबेदारी पद पर उसे युद्ध संचालन के योग्य न मानकर बकरी की पीठ पर हाथी का झप्पर रख देना मानते है। इस प्रकार से "कालि के जोगी कलीदे के खप्पर" की कहावत कह कर वे मज़ाक उडाते हैं।

भूषण ने सूरत की लूट का विस्तार से वर्णन किया है। साथ ही शिवाजी के दान का वर्णन कर 'लाल' रत्न पाने से दिन और नील मणि पाने से रात का दृश्य सामने आ जाना दिखलाया है।

कवि शिवाजा को विष्णु रूप मे प्रतिपादन करने के लिये कहता है और बतलाता है कि हिरनाकुश को मारने के लिये नृसिह अवतार हुआ था, रावण को मारने को राम हुए थे कस-वध के लिये कृष्ण हुए इसी प्रकार म्लेच्छो को वध करने के लिये शिवाजी का अवतार हुआ है, राम को रघुकुल सरदार कृष्ण को वसुदेव कुमार तथा शिवाजी को अवतार कहकर अपनी भावना का अच्छा समन्वय किया गया है।

भूषण ने छः अमृतध्वनि छन्दो मे डिगल प्रणाली पर शिवाजी की प्रशसा की है जिनमे सूरत तथा भडौच की विजय, दिलेर खाँ एव बहादुर खाँ को हराले मोहकम सिह तथा राजकुमार किशोर को कैद करने तथा मुगलो पर अन्य युद्धो की विजयो का बडा ही ओजिस्विनी भाषा मे महत्वपूर्ण चित्रण किया है। इन छन्दो मे जितनी तीव्रता है उतनी ही भयकरता भी है साथ ही ऐतिहासिक चित्रण सटीक रूप मे अङ्कित किया है तथा परनाला का किला और बहलोल पर विजय का गहरा एव भावपूर्ण वर्णन किया है।

फिर कवि शत्रुओं के घरों की दुर्दशा चित्रित कर उनमें बन्दर, बाघ, बिलार, भेड़िया, बाराह, भालू, नीलगाय, लोमड़ी, हाथी, गैंडे, गोहे आदि का निवास अङ्कित करता है। इसी प्रकार अन्य छन्दों में तुरुमुती तीतर, कूकर हिरन, पाढ़े, खरगोस आदि का निवास तहखानों आदि में बतलाता है।

इस प्रकार का अत्यन्त आकर्षक, महत्वपूर्ण एवं ओजस्वी वर्णन कर भूषण ने संवत् १७७३ वि० में शिवराज भूषण की समाप्ति की है।

फुटकर कविताएँ

भूषण कवि अपने राष्ट्रीय संगठन के लिये सारे भारत मे चक्कर लगाते रहे थे, अतः उन्होने अनेक राजाओ से भेंट की थी। उनमे से बहुतो की प्रशसा मे इस महाकवि की रचनाए प्राप्त हो चुकी है। इनमे से छत्रसाल, सबाई जयसिंह तथा साहू के विषय मे जो रचनाएँ मिलती है, उनसे विदित होता है कि इनमे भूषण का विश्वास और प्रोत्साहन दोनो ही पर्याप्त मात्रा मे मिला हुआ था।

छत्रसाल महाराज ने तो उनकी पालकी मे कधा भी लगाया था, उसका कारण भी था। जिस परिस्थिति मे भूषण ने छत्रसाल की सहायता की थी उसके प्रति कृतज्ञता प्रकाशन का यही रूप हो सकता था। क्योकि भूषण को धन की कमी न थी जिसे देकर वे उन्हे पुरस्कृत करते, अतः इस मार्ग का अवलम्बन लेना पडा था। इस महाराज की प्रशंसा भी कवि ने बडी ही ओजस्विनी भाषा मे की है। कही वे भुजाओ को शेषनाग और सांग को सर्पिणी के रूप मे अकित कर शत्रु सेना को भक्षण करने का कथन करते है। कही उस साग को मछली के रूप मे चित्रित कर बख्तरो के भीतर ऐसा घुसते हुए वर्णन करते है जैसे मछली पानी के प्रवाह मे पार हो जाती है। इस प्रकार से छत्रसाल की बरछी का कवि ने बहुत ही आकर्षक वर्णन किया है।

इसी प्रकार से महाराज की तलवार को भी महत्वपूर्ण कहा है। उसे वर्षा के बादलो मे बिजली का रूप दिया है। शत्रु पर इसकी कडक भयानक आतंक भर देती है जिससे खान, राव, राजा आदि त्रस्त हो जाते है। फिर कवि कहता है कि अबुल समद आदि सेनापति समुद्र के समान हैं जिसे बड़वानल रूपी तेग बिल्कुल भस्म कर डालता है। इसी प्रकार के अनेक वर्णन मौलिक रूप मे मिलते है। छत्रसाल की धाक का भी कवि ने बहुत

आकर्षक वर्णन किया है। साथ ही भूषण को जो हाथी-घोडे आदि भेंट किये उनका भी कवि ने बहुत प्रभावशाली कथन किया है। इसके सिवाय साहू और छत्रसाल मे किसे अधिक प्रशसनीय मानूँ। इस दुविधा से वे अपने को नही निकाल पाये है। कहीं कवि छत्रसाल द्वारा मोहम्मद अमी खॉ की सेना और खजाना लूटने का उल्लेख करता है और कही चकत्ता औरगजेब पर उसके आतक का चित्रण बडे ही आकर्षक ढग से करता है। भूषण ने छत्रसाल द्वारा मरहठी सेना के प्रवाह को बुन्देलखड मे घुसने से रोकने की भी चर्चा की है तथा पठानो को उसके द्वारा भयत्रस्त करने का भी विशद् वर्णन मिलता है। ये रचनाएँ उत्तेजक एव उत्साहवर्द्धक दोनो रूप मे कही गई है। शिवाजी की प्रशसा के छन्द शिवराज भूषण और शिवा बावनी मे तो वर्णित हैं ही अन्य अनेक छन्दो मे भी कवि ने शिवाजी की प्रशसा की है जिनमे से कुछ खोज मे प्राप्त हो चुके हैं।

बाजीराव पेशवा ने भी दिल्ली का आम खास जला डाला था। परन्तु इसे भी भूषण ने शिवाजी के नाम पर कथन किया है इसे लेखक तथा पाठक ठीक रूप मे नही समझ पाते अतः उसे शिवाजी के दरबारी कवि के रूप मे मानने की भूल कर बैठते हैं। वे भूषण और शिवाजी के सम्बन्ध को भी नहा अनुभव कर पाते इसी से भूल हो जाती है। अनेक छन्दो मे कवि ने शिवाजी को औरंगजेब के लिये इसी रूप मे कहा है जैसा सिधु के लिये अगस्त, चूहे को बिलाव, एव रावण के राम है।

कही कवि औरगजेब, एव बीजापुर, गोलकु डा नरेशो को त्रिपुरासुर बना कर शिवाजी को शिव के रूप मे अकित करता है। कहीं हबशी और फिरगियो पर उसकी धाक का वर्णन करता है। कहीं हाथी घोड़ो के सिर उसकी तलवार कलीदे से तरासती है। कवि ने काश्मीर, काबुल, उडीसा कर्नाटक और कलकत्ता पर शिवाजी की धाक आँधी-सी हहराती है इस का ओजस्वी वर्णन किया है।

भूषण ने भिन्न-भिन्न जातियों के स्वभाव का भी अच्छा चित्रण किया है। रूसियो मे प्रबलता होती है, खुरासान वाले तलवार के धनी होते हैं।

इगलैण्ड वालो मे कूटनीति अधिक है । चीन वालो मे उद्योग एवं हुनर की विशेषता है । रूस वालो मे अभिमान की मात्रा अधिक मानी जाती है हबशियो मे डरपोकपना अधिक होती है । अरबियो मे भलाई करना तथा शान और अदबियत ईरान मे विशेष है, इसी प्रकार से हिन्दुओ मे साहस और शिवाजी मे वीरता विशेष रूप मे दिखलाई देती है । भूषण ने हिन्दुओ की पारस्परिक फूट का विशेष रूप मे वर्णन किया है और उसे घातक बतलाया है । भूषण ने पेशवाओ की चर्चा वेद-पाठी के रूप मे भी की है ।

कवि ने रावराजा बुद्धसिह की प्रशसा मे भी दो छन्द कहे है जिसमे से एक मे उसकी तलवार की और दूसरे मे कटारी की प्रशसा की गई है ।

भूषण ने शृगार और वीर रस का एकत्र रूपक देकर बडा ही प्रभावशाली चित्रण किया है । बादलों को कवच रूप मे, पवन को सवारी रूप मे, बिजली को तेग के समान कहा है, जो कि नारियो के मान को नाश कर देता है । बगुलो की पाति पैदल सेना के रूप मे तथा बादलो के ध्रुवो की भडियो के समान कहा गया है । इस प्रकार से कवि स्त्रियो को मान त्याग कर पति से मिलने की सलाह देता है ।

भूषण ने सवाई जयसिह के पूर्वजो की भी प्रशंसा की है और बतलाया है कि अन्य सभी राजा-बादशाहो द्वारा सम्मान पाते है परन्तु मानसिह तथा उनके वंशजो से बादशाह को सम्मान मिलता है । मान से अकबर को, जहाँगीर को महासिह से, शाहजहाँ ने मिर्जा जयसिह से तथा औरगजेब ने रामसिह से सम्मान पाया था ।

इसी प्रकार से कवि ने सवाई जयसिंह के कार्यों की भूरि-भूरि प्रशसा की हे । उसकी वेध-शालाए जो उसने दिल्ली, उज्जैन, जयपुर और काशी मे बनवाई थी उनका अच्छा वर्णन किया है । जयपुर नगर बसाने, उसके उत्कृष्ट सौन्दर्यमय शरीर तथा अपने राज्य के उद्धार का भूषण ने परिष्कृत रूप मे वर्णन किया है ।

इसी प्रकार से कवि ने मैडू के राजा अनिरुद्ध सिह की भी प्रशसा

की है। यह एक बहुत छोटा-सा राजा था फिर भी उसके आमंत्रण पर भूषण उसके दरबार मे गये थे और प्रशसा की थी।

भूषण ने श्रृगार रस का भी विस्तार से चित्रण किया है। फुटकर छन्दो मे उनकी बहुत-सी रचनाएँ खोज मे मिल चुकी है जिनसे उनकी सर्वतोमुखी प्रतिभा का अच्छा परिचय मिलता है।

कवि ने देह के नाशवान को चर्चा करते हुए पुनर्जन्म मे किस रूप मे रहे इसकी चिन्ता त्याग कर इससे उत्कृष्ट रूप और परोपकार मे संलग्न रहने की शिक्षा दी है। अतः धन की चिन्ता न कर उक्त कार्यों मे निरत रहना चाहिए। तथा राजाओ का निर्माण कर उन्हें ऊँचा उठाना लक्ष्य रखना चाहिए। मृत्यु के पश्चात् नगो की तुच्छता स्पष्ट है।

भूपण ने हिन्दू-मुसलिम मेल पर सबसे अधिक बल दिया है। इसके लिये वे शिवाजी का आदर्श लेते हैं जिसने मसजिद, कुरान एव मुसलिम स्त्री को सरक्षण दिया था और सेना को इनकी पवित्रता कायम रखने के लिये आज्ञा दे रखी थी। वह औरगजेब को, बाबर, अकबर, हुमायूँ, शाह-जहाँ तथा जहाँगीर के अनुसरण पर चलने को कहता है साथ ही इनके शासन को सतयुग, त्रेता, द्वापर और कलयुग के राजाओ मे सबसे उत्तम माना है। इन्होने प्रेम से राज्य शासन किया था इसी से वह इन्ह प्रशसनीय कहता है। इसी प्रकार से बाजीराव गाजी की प्रशसा करते हुए छत्रसाल की रक्षा और उद्धार करने की विशेप चर्चा की है।

भूपण हजारा के लोप हो जाने से इस महाकवि की बहुत-सी रचनाएँ अप्राप्त हैं। उनके कई ग्रथ भी नही मिल रहे है जो अब तक मिले हैं उनसे उनकी रचना-योग्यता, प्रतिभा तथा राष्ट्रीय भावना का अच्छा परिचय मिलता है। राष्ट्रोद्धार के लिये ये अमोघ शस्त्र है।

भूषण कवि ने श्रृगारिक रचनाएं भी पर्याप्त मात्रा मे की थी। डा० पीता-म्बर दत्त जी बडथ्वाल ने एक भूषण कृत छन्दो का सग्रह प्रकाशित कराया है जो सब श्रृगारिक है। इनमे २२ छद नये हैं जो अबतक खोज मे नहीं मिले थे। इनसे यह अवश्य प्रतीत होता है कि इनकी श्रृगारिक

रचनाए भी पर्याप्त मात्रा मे होंगी । इन रचनाओ से विदित होता है कि ये किसी नायिका भेद के अग है । उनकी दो रचनाओ का उल्लेख शिव सिह सेंगर ने अपने सरोज मे किया है । उन नामो से अनुमान होता है कि ये किसी नायिका भेद ग्रथ के ही भाग होगे । इनमे जो वर्णन मिलते है उनसे भी यही प्रतीत होता है कि ये नायिका भेद से ही लिये गये है ।

यह सभव है कि भूषण ने प्रारभ शृगारी रचनाओ से ही किया हो क्योंकि तत्कालीन विचारधारा इसी रूप मे बह रही थी जिनका इतना प्राधान्य था कि किसी को उससे बाहर निकलने का साहस नही होता था । फिर भी भूषण परिस्थिति से बाध्य थे । औरङ्गजेबी अत्याचार देश भर मे तहलका मचाये हुए था । अत. भूषण के हृदय पर भी उसका गहरा प्रभाव पडा और वे प्रतीकार का उपाय सोचने लगे थे जिसने भूषण को नया रूप दे दिया ।

इन शृगारी रचनाओ मे न तो उतनी मौलिकता जान पडती है और न भाषा का उभाड ही महत्वपूर्ण दिखाई देती है । अब तक उनकी जितनी शृगारिक रचना मिली है उससे हम इसी परिणाम पर पहुँचते हैं । भूषण पर यौवन से बुढापे की ओर जाने के कारण शृङ्गार से वीर की ओर अग्रसर होने की बात ठीक नहीं जॅचती जैसा कि डा० बडथ्वाल ने चर्चा की है उस दशा मे वे वैराग्य की ओर बढ सकते थे, वीर की ओर नही । अतः यह रूप-परिवर्तन परिस्थित के ही कारण हुआ प्रतीत होता है । फिर भी उनसे यह अनुमान तो लगाया ही जा सकता है कि उनकी प्रतिभा सर्वतोगामिनी थी अतः उनकी शृङ्गारमयी रचना भी अच्छी बन पड़ी है और वे नवरसो के उत्तम कवि थे । इस विषय मे यह भी सभव है कि उनकी इस प्रकार की रचनाए भी दूसरे कवियो ने अपना ली हो । जब कि एकमात्र वीर रस की रचनाओ को ही अन्य कवियो ने अपने नाम से प्रकाशित कर लिया है तब शृगारिक कविताओ का हरण तो एक साधारण सी बात मानी जायगी ।

इन शृगारिक रचनाओ से जनता का अच्छा मनोरजन नही हो

सकता और न वे उपयोगी ही मानी जा सकती है अतः उनके विषय मे इस ग्रथ द्वारा अधिक प्रकाश डालना उचित प्रतीत नही होता। फिर उससे कलुष भी बढने की सभावना है। इनमे भी हम स्वय दूतिका, विप्रलम्भ शृङ्गार, सयोग शृगार आदि के वैसे ही चित्रण पाते है जैसे अन्य शृगारी कवियो ने अकित किये हैं। प्रोषितपतिका आदि के रूप भी वैसे ही मिलते हे। फिर भी हम इससे भूषण की मर्यादा एव महत्ता की हानि नहीं समझते। हॉ, इसमे सन्देह नही कि यदि वे वीर रस की रचना न करते तो उन्हे वह स्थान न प्राप्त हो पाता जो इन्हे आज मिला हुआ है तथा राष्ट्रोद्धारक के रूप मे वे हमारे समक्ष न आ पाते। इससे हम भूषण की वीर रस की रचना को ही महत्व देते हैं। मुख्यतया एक आदर्श जीवन शिवाजी का सबके सामने रख कर राष्ट्र के जागरण का जो सन्देश उन्होने दिया है वही हमारे हृदय मे एक प्रमुख स्थान बनाता है। इसलिये उनके ग्रंथो की खोज तो सभी की होनी चाहिए परन्तु उनमे से ऐतिहासिक तथा आदर्श वीर रस की रचनाओ का प्रमुख स्थान मानना चाहिए। सम्पूर्ण रचनाएं प्राप्त होने पर हम उनके विकास-क्रम और राष्ट्रीयता की ओर अग्रसर होने की क्रमश: भावना को भी जॉच कर सकते है।

अभी भूषण सबंधी खोज बहुत अपूर्ण है। वे मोरंग, जोधपुर, चित्तौड, बीजापुर गोलकुडा तथा अन्य कुछ राज्यो मे भी गये थे। उनकी प्रशसा के छन्द भी अवश्य होगे परन्तु वे अभी तक अप्राप्त है। हिन्दी के किसी भी कवि की अपेक्षा भूषण की रचनाओ की खोज की अधिक आवश्यकता है क्योकि यह राष्ट्र-निर्माण मे हमारी अधिक सहायता कर सकती हैं। मुख्यतया साहित्यिको एव अन्वेषका का सबसे अधिक उत्तर दायित्व है।

आलोचना

भूषण के विषय मे विद्वानो मे घोर मतभेद दिखलाई देता है। लगभग ३० वर्ष मे इस महाकवि के बारे मे भिन्न भिन्न बातो को लेकर पक्ष-विपक्ष मे सैकडो लेख पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित हुए हैं जिनके आधार पर कुछ तथ्य निर्णयात्मक रूप मे पाठको एव साहित्यको के सम्मुख रखी जा सकी है।

पिछली कई शताब्दियो के अज्ञानाधकार मे ज्ञान-दीपिका का ऐसा धुँधला प्रकाश अवशेष रह गया था कि विवेक नाम की वस्तु नाम को भी नही थी। इन्ही कारण से भारतीय इतिहास भ्रान्ति पूर्ण भावो का भाण्डार बन गया था। पिछले पचास वर्ष से ऐतिहासिक अन्वेषण ने कुछ प्रगति अवश्य की है, परन्तु साहित्यिको एवं कवियो की ओर किसी ने दृष्टि पसार कर नही देखा। यहाँ तक कि अग्रेज लेखको ने भी प्रगतिशील एवं राष्ट्रीय भावना से ओत-प्रोत कवियो की घोर उपेक्षा की तथा साम्प्रदायिक एवं शृंगारिक रचनाओ पर ही अपनी ऊहापोह की भावना सीमित कर रखी थी। इसी कारण डा० ग्रियर्सन, ग्रीव्स, केयी, गार्सा द तासी आदि अग्रेज तथा फ्रेंच विद्वान लेखको ने महाकवि भूषण के नाम तक का उल्लेख करना उचित नही समझा था।

भूषण के जन्म और शिवराज भूषण के निर्माण-काल पर साहित्यिको मे गहरा मतभेद रहा है। भूषण तथा शिवाजी का सबध और समकालीनता के विषय मे भी यही बात पाई जाती है। भूषण के कौन-कौन भाई थे? उनका असली नाम क्या था? उनका जन्म-स्थान तथा निवास-स्थान के बारे मे भी पाठको मे गहरी अज्ञानता भरी हुई है। उनके आश्रयदाता कौन-कौन थे? भूषण का उपाधिदाता कौन था? उसका समय क्या था? ये सब बाते आलोचना के लिये उपस्थित है।

३. आलोचना खण्ड

अतः इस खड मे इन्ही सब विषयो पर विवेचनात्मक विचार उपस्थित करना अभीष्ट है। साथ ही भूषण की भाषा, भाव, तथा समाज सुधारक विचारधारा पर प्रकाश डालने का भी प्रयत्न किया जायगा। सबसे पहले यहाँ शिवराज भूषण के निर्माण-काल पर विचार करते हैं।

शिवराज भूषण का निर्माण-काल

शिवराज भूषण मे वह प्रणाली ही नही है जो दरबारी कवि प्रयुक्त किया करते है, न इसमे इतिहास-क्रम है न घटना-चक्रो का कोई तारतम्य। जीवन चरित्र का क्रम-विकास भी नही दिखलाई देता अत: इस से दरबार मे रह कर रचने की बात व्यक्त नही होती। दरबारी कवियो ने जो ग्रन्थ रचे है उनमे से विद्यापति ठाकुर रचित कीर्तिलता, केशवदास कृत वीरसिह देवचरित, गोरेलाल कवि का छत्रप्रकाश, तथा सूदन विरचित सुजान चरित्र प्रमुख ग्रथ है। इनमे घटनाओ का जैसा तारतम्य और जीवन-क्रम मिलता है शिवराज भूषण मे वह बात नाम को भी नही है। इसमे तो अलङ्कारो के उदाहरण फुटकर रूप मे मिलते हैं जिनमे प्रारम्भ की घटनाएँ अन्त मे और अतिम घटनाएँ प्रारम्भ या मध्य मे वर्णित है। कुछ घटनाएँ तो शिवाजी की मृत्यु के पीछे की भी आ गई है। अतः इसके आधार पर भूषण को शिवाजी के दरबार मे घसीट ले जाना सरासर अशुद्ध चित्रण होगा।

भूषण ने शिवराज भूषण के निर्माण-काल का दोहा भी रच दिया है। परन्तु भूषण को शिवाजी के दरबार मे सिद्ध करने के लिये उस दोहे मे अनेक परिवर्तन होते गये। इस समय जो पाठान्तर प्रस्तुत है वे इस प्रकार हैं —

(१) सवत सतरह तीस पर, सुचि बदि तेरसि मान।
भूषण शिव भूषण कियौ, पढियो सुनौ सुज्ञान ॥
काशीराज के पुस्तकालय की हस्तलिखित प्रति, छद ३८०

(२) शुभ सत्रह सै तीस पर, बुध सुदि तेरसि मान ।
भूषण शिव भूषण कियौ, पढियो सुन्यौ सुजान ॥
नागरी प्रचारिणी सभा, काशी की प्रति, छद ३६०

(३) सवत सत्रह तीस पर, सुचि वदि तेरसिभान ।
भूपण शिव भूपण कियौ, पढ़ियो सकल सुजान ।
साहित्य सेवक कार्यालय, काशी की प्रति

(४) सम सत्रह सैंतीस पर, सुचि बदि तेरसि भान ।
भूषण शिव भूपण कियौ, पढ़ियो सुनौ सुजान ॥
नवल किशोर प्रेस, लखनऊ से प्रकाशित प्रति

उक्त चारो निर्माण के दोहे भिन्न-भिन्न स्वरूपो का दिग्दर्शन कराते हैं। अब विचारना यह है कि इस दोहे के चार-पाच स्वरूप कैसे हो गये । इसके भीतर कौन-सी प्रधान भावना काम कर रही थी । इस पर गम्भीरता पूर्वक विचार करने से प्रकट होता है कि परिवर्तन का मुख्य कारण भूपण को शिवा जी के दरबार मे खीच ले जाना ही है ।

शुद्ध और यथार्थ भाव को व्यक्त करने वाला दोहा चौथा है जिसमे भूपण की एक गम्भीर भावना निहित है। यह दोहा अबसे ७०-८० वर्ष पूर्व छपी प्रति से लिया गया है जिसे एक अति प्राचीन हस्तलिखित प्रति के आधार पर प्रकाशित किया गया है। इसमे श्लेप मे दो भाव लिए गए हैं जो इस प्रकार से व्यक्त होते है —

सम = दो वस्तुओ की तुलना मे समानता के लिये कहा गया है । जो 'सत्रह' के दोनो समयो मे सम्मिलित होने तथा जन्म-काल एव निर्माण काल के रूप को व्यक्त करने के लिये कहा गया है।

पर = पश्चात् तथा विरोधी रूप को प्रकट करता है। इस प्रकार मे ३७ के पश्चात् ३८ सवत् जन्म काल को तथा ३७ के उल्टे ७३ निर्माण-काल को प्रकट करता है। तब इस दोहे का यह अर्थ होता है। सवत् १७३८ वि० मे आपाढ बदी १३ रविवार के दिन शिव भूपण देवाधि देव महादेव ने भूषण कवि को उत्पन्न किया तथा श्लेप से

दूसरा अर्थ यह होता है कि संवत् १७७३ वि० मे आषाढ बदी तेरसि रविवार के दिन भूषण कवि ने शिवराज भूषण की रचना की गणना करने एवं ज्योतिष के विचार से उक्त दोनो संवतो मे आषाढ बदी तेरसि को रविवार पडता है। अतः यही चौथा दोहा सर्वतोभावेन शुद्ध है और यही भूषण का रचा माना जा सकता है। भूषण की शैली भी इसके अनुकूल है अत. यह निर्विवाद रूप से भूषण का रचा हुआ है, इसमे सदेह नही। अन्य दोहे ज्योतिष से अशुद्ध ठहरते हैं।

मिश्र-बंधुओ ने द्वितीय दोहे को शुद्ध माना है। परन्तु उसमे वार का नाम नही है अतः जाँच की कोटि मे नहीं आता। सुधाकर द्विवेदी से पञ्चाङ्ग बनवा कर जो लीपा-पोती की गई है उससे भी तथ्य सामने नही आ पाई। प० अम्बिका प्रसाद जी वाजपेयी ने महाराष्ट्र प्रणाली का सहारा लेकर उक्त पञ्चाङ्ग के आधार पर तीसरे दोहे को ठीक बतलाया था। परन्तु पञ्चाङ्ग ने तो मिश्र-बंधुओ द्वारा प्रतिपादित 'बुधवार' को श्रावण मे बदी १३ को उक्त बुधवार ठहराया था, रविवार नही। अतः इस भूल से वाजपेयी जी का निर्णय भी अशुद्ध हो जाता है।

प० विश्वनाथ प्रसाद जी मिश्र 'त्रिनेत्र' ने शुचि का अर्थ ज्येष्ठ बतलाते हुए मेदिनी कोश तथा कुमार सम्भव का सहारा लिया था। परन्तु उक्त दोनो उदाहरणो मे शुचि शब्द ग्रीष्म के अर्थ मे आया है ज्येष्ठ के अर्थ मे नही। अमर कोश ने स्पष्ट रूप से ही शुचि शब्द 'आषाढ' के अर्थ मे लिया है, देखिए—

वैशाखे माधवो राधो, ज्येष्ठे शुक्र शुचि स्त्वयम्।
आषाढ़े श्रावण तुस्यांन्नभ· श्रावणि कश्च सः॥

इसमे उक्त 'शुचि' शब्द आषाढ के ही अर्थ मे आया है। यदि कोई इसे ज्येष्ठ के अर्थ मे लेना चाहे तो 'त्वन्ता था दिन पूर्वभाक्' के कथनानुसर इसका खुला निषेध किया गया है। अत. भूषण की वास्तविक भावना का स्वरूप स्पष्ट हो जाता है। साथ ही निर्माण-काल के दोहे की परिवर्तित कल्पना भी साक्षात् रूप से सामने आ जाती है।

भूषण कवि स० १७५८ वि० तक बनपुर ही मे रहते थे जैसा कि मतिराम ने वृत्त कौमुदी मे स्पष्ट उल्लेख किया है। शिवराज भूषण के निर्माण-समय स० १७७३ वि० मे वे तिकमापुर मे चिन्तामणि एव मतिराम के साथ जा बसे थे। इस दोहे मे गूढार्थ एवं श्लेष होने के कारण ही महाकवि भूषण पाठकों को सावधान करते हुए कहते है कि इसको अच्छे ज्ञाता ही समझने का प्रयत्न करें। प्रत्येक का काम नही। भूषण को शिवाजी का दरबारी कवि मानने तथा अर्थ की दुरुहता से इस दोहे मे परिवर्तन होता गया। पहले 'सम' को 'शुभ' कर दिया गया उसके पश्चात् शुभ निरर्थक मानकर 'सवत्' धर दिया गया था। साथ ही मास और दिनो को भी खॅचोटा गया पर सफलता किसी को भी नही मिली। वास्तव मे निर्माण काल सन् १७७३ वि० ही ठीक है।

साहित्य के इतिहासकार सभी स० १७३० वि० मे शिवराज भूषण की रचना मानते आये है और भूषण को शिवा जी का दरबारो कवि भी। परन्तु किसी ने उसके इतिहास, वर्णित विषय, उनके आश्रयदाता तथा भूषण की उपाधि देनेवाले हृदय राम के बारे मे जॉच-पडताल नही की।

कर्नाटक पर चढ़ाई

शिवराज भूषण के छन्द, २०७ मे कर्नाटक पर शिवाजी के आक्रमण की चर्चा आई है। यह छन्द यह है —

लै परनालो शिवा सरजा, करनाटक लौ सब देस बिगूँचे।
बैरिन के भगे बालक बृन्द, कहै कवि भूषन दूरि पहूँचे।
नॉघत नॉघत घोर घने बन, हारि परे यो कटे मनो कूँचे।
राज कुमार कहॉ सुकुमार, कहाँ विकरार पहार वे ऊँचे॥

इस छन्द पर विचार करने से पूर्व हमे कर्नाटक की सीमा निर्धारित कर लेनी चाहिए। 'सोर्स बुक आफ मराठा' नामक ग्रन्थ मे पृ० १२५ पर लेखक बतलाता है, "कर्नाटक प्रान्त तुंगभद्रा और कावेरी नदियो के

बीच मे बसा हुआ है ।” तु गभद्रा पूर्व की ओर बहती हुई कृष्णा नदी मे जा मिली है। इसके पश्चात् कर्नाटक की उत्तरी सीमा कृष्णा नदी बन जाती है। अतः यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि कर्नाटक का उत्तरी भाग तुंगभद्रा और कृष्णा नदी से पूर्व तक फैला हुआ है और दक्षिण की ओर कावेरी नदी उसकी सीमा बनाती है।

कैलूस्कर, तकाखब और राजबाडे सभी इतिहास कार कर्नाटक के आक्रमण की पुष्टि इसी रूप मे करते हैं। किसी इतिहासकार ने इसके पूर्व शिवाजी के कर्नाटक पर आक्रमण की चर्चा नही की।

'सोर्स बुक आफ मराठा' के पृ० ५८-६० मे कर्नाटक पर आक्रमण की चर्चा अवश्य आई है जिसका मुख्य कारण 'बिदनूर' को कर्नाटक प्रान्त मे समझने से ही ऐसा धारणा बनी जान पडती है। परन्तु बिदनूर राज्य कौकण के दक्षिणी भाग मे अवस्थित है, इसे कर्नाटक प्रान्त मे मानना सरासर भूल है।

शिवाजी का बिदनूर पर आक्रमण सन् १६५८ संवत् (१७१५ वि०) मे हुआ था और परनाले का किला अफजल खा के मारे जाने के पश्चात् स० १७१६ वि० मे पहली बार विजय किया था। अत' भूषण कवि को मंशा कर्नाटक पर आक्रमण के बारे मे स्पष्ट ही सन् १६७६ के आक्रमण से ही माननी पडेगी जब कि तीसरी बार परनाला लेने के पश्चात् गोल-कुडा होते हुए वे कर्नाटक मे पहुँचे थे।

छन्द पर विचार करते हुए प० कृष्ण बिहारी मिश्र तथा प० विश्व नाथ प्रसाद मिश्र दोनो ने ही "आङ् मर्यादाभिविध्यो" सूत्र का सहारा लेते हुए 'तेनविना मर्यादा' के रूप मे ही 'लौ' का अर्थ कर्नाटक की बाहरी सीमा स्वीकार किया है। परन्तु अन्त मे "तत्सहितोऽभिविधि" सूत्र से बाध्य हो इन दोनो सज्जनो को ही यह मानना पडा कि "कर्नाटक लौ सब देस बिगूँचे" का अर्थ उसके भीतरी प्रान्त पर आक्रमण भी लिया जा सकता है।

इसके साथ ही जब हम इतिहास पर दृष्टि डालते हैं तो इस घटना

का रूप स्पष्ट हो जाता है, क्योंकि सभी इतिहासकार इस पर एकमत है कि तीसरी बार परनाले का किला जीतने पर ही शिवाजी ने सन् १६७६ ई० (स० १७३३ वि०) मे कर्नाटक पर चढाई की थी जिसे भूषण ने डिडिम घोष से उल्लिखित किया है।

त्रिनेत्र जी ने इस 'लौ' की व्याख्या करते हुए कुछ ब्रजभाषा के उदाहरण भी दिये हे जिनमे एक यह है —

"है सखि सग मनोभव सोभट, कानलौं बान सरासन ताने।"

इसमे प्रयुक्त 'कानलौ' का अर्थ मर्यादा के रूप मे कान की बाहरी सीमा मानकर इस आलोचक ने असावधानता का गहरा परिचय दिया है। तीर चलाते समय सदैव धनुष की प्रत्यञ्चा कान के पीछे तक ही पहुँचती है।

इस से स्पष्ट है कि उक्त छन्द मे वर्णित घटना शिवराज भूषण के कल्पित निर्माण काल स० १७३० वि० से तीन वर्ष बाद की है, अर्थात् स० १७३३ की है। अतः इसे निर्माण-काल मानना युक्तियुक्त नही।

भडौंच पर आक्रमण

शिवराज भूषण के छन्द, ३५४ मे भूषण ने सूरत की लूट के पश्चात् शिवाजी द्वारा भडौच पर आक्रमण का उल्लेख इन शब्दो मे किया है —

दिल्लिय दलन दबाय कर शिव सरजा निरसङ्क।
लूटि लियो सूरत सहर बङ्कक्करि अति डङ्क।
बङ्क करि अति डङ्क क्करि अस सङ्क क्कुलि खल।
सोचच्चकित भडौंच च्चलिय विमोच च्चख जल।
तट्ठट्ठइ मन कट्ठट्ठिक सोइ रट्ठ ट्ठिल्लिय।
सद्दद्दिसि दिसि भद्दवि भइ रद्द द्दिल्लिय॥

कुछ साहित्यिकों ने इस अमृत ध्वनि मे वर्णित घटना सूरत के ही सबध मे मानी है। परन्तु भूषण ने प्रथम दो पक्तियो मे ही सूरत का वर्णन किया है शेष चार पक्तियो मे भडौन्च पर आक्रमण का कथन किया गया है। इस छन्द का भावार्थ यह है —

दिल्ली की सेना को दबा कर शिवाजी ने निर्भयता से डंका बजा कर सूरत शहर को लूट लिया। इससे सम्पूर्ण औरङ्गजेबी सेना एवं सरदार भयत्रस्त हो गये तथा भडौच अचम्भे मे आकर चिन्ताग्रस्त हो गया। साथ ही आँसू बहाता हुआ चलाय मान होने लगा। जब शिवाजी की सेना बढ कर भडौच के पास पहुँची तो ढेर के ढेर जनो को ठेल कर हटा दिया। इससे तुरन्त ही सर्वत्र दिल्ली का अपमान होने से वह बरबाद हो गई।

अत स्पष्ट है कि इस छन्द मे कवि ने भडौच के आक्रमण का ही कथन किया है जो कि सूरत नगर को लूटने के पश्चात् ही हुआ था। भडौच पर आक्रमण का उल्लेख तकाखब और कैलूस्कर ने अपनी रचना 'लाइफ आफ शिवाजी महाराज' के पृष्ठ ४११ पर किया है। वे लिखते हैं—

शिवाजी के सेनापति हमीरराव ने सन् १६७४ (स० १७३२ वि०) मे नर्मदा पार की और भडौच मे घुस गये और उसके आसपास का भाग अपने अधिकार मे कर लिया। ग्राटडफ ने भी इस की चर्चा अपने इतिहास मे की है। यह घटना भी सन् १७३० वि० के पीछे की है।

रामनगर विजय

भूषण ने अपने ग्रन्थ मे रामनगर विजय का भी चित्रण किया है। इस विजय के कारण शिवाजी को 'गाजी' की उपाधि भी दे डाली है। इसे भी आप भूषण के ही शब्दो मे लीजिए—

जावलि बार सिगार पुरी औ,
जवारि कौ राम के नेरि कौ गाजी।
भूषण भौंसिला भूपति तैं सब,
दूरि किये करि कीरति ताजी।

तथा शि० भू०, छन्द, २०६

भूषण भनत रामनगर जवारि तेरे,
बैर परवाह बहे रुधिर नदीन के।

शि० भू०, १५३

शिवाजी ने रामनगर को मई सन् १६७६ ई० (स० १७३३ वि०) मे लिया था।* शिवा जी नामक ग्रथ मे यदुनाथ सरकार पृ० २६२ के फुटनोट मे लिखते है—

"RamNagar was not conquered even up to 1678."

इसी का उल्लेख 'सोर्स बुक आफ मराठा' हिस्ट्री भाग २, पृ० ६१६ पर इन शब्दो मे किया है—

'Shivaji made a second raid on Surat and now lately has taken the Raja Shiva of Ram Nagar"

अत. स्पष्ट है शिवाजी ने सवत् १७३३ मे ही रामनगर का विजय किया था और वहाँ के राजा को कैद कर गाजी की उपाधि प्राप्त की थी। इन प्रमाणों से निश्चय हो जाता है कि शिवराज भूषण का निर्माण काल स० १७३० वि० अशुद्ध है।

बहादुर खाँ और दिलेर खाँ

औरगजेब ने शिवाजी के मरने के पश्चात् स० १७३७ वि० मे बहादुर खाँ को खानेजहाँ की उपाधि दी थी और उसे दक्षिण का सूबेदार बना कर भेजा था। भूषण ने निरुक्ति के उदाहरण मे इसका उल्लेख किया है—

(१) "निपट गँभीर कोऊ लाँघि न सकत वीर,
जोधन को रन देत जैसे भाऊ-खान को।
दिल दरियाव क्यों न कहै कविराव तोहि,
तो मे ठहरात आनि पानिप जहान को ॥*

(२) या पूना मे मत टिको, खान बहादुर आया।
ह्याई साइत खान कौं, दीन्हीं शिवा सजाय ॥

शि० भू०, ३४०

देखिये, ग्रेट शिवाजी, पृ० ३२० । शिवराज भूषण छन्द २४८।

(३) गतबल खान दलेल हुव, खानबहादुर मुद्ध ।

शि० भू०, ३५७

(४) दीनो मुहीम को भार बहादुर,
छागौ सहै क्यो गयन्द कौ झप्पर ।

....
कालि के जोगी कलीदे के खप्पर ।

फुटकर छन्द ४५

इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि बहादुर खॉ के विषय मे भूषण की एक विशेष राय थी और वे उसे शिवा जी के मुकाबिले मे अत्यन्त तुच्छ मानते थे ।*

निरुक्ति के उदाहरण मे खान और जहान शब्द खानेजहॉ के लिये ही प्रयुक्त हुए है जो बहादुर खॉ की उपाधि थी। इसका उल्लेख प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र आदि ने अपनी भूषण ग्रंथावली के पृष्ठ ३२० पर इस प्रकार से किया है—

खान = मुसलमानो की एक उपाधि । खॉजहॉ बहादुर (दे० बहादुर खॉ) ।

इसी ग्रथ के पृष्ठ ३२६ पर जहॉ बहादुर को व्याख्या करते हुए उक्त सम्पादको ने लिखा है—

जहॉ बहादुर = खॉ जहॉ बहादुर (देखो-बहादुर खॉ)

अतः स्पष्ट है कि शिवराज भूषण मे कवि ने शिवाजी के जीवन-काल की ही घटनाएँ नही ली, वरन् उसके मरने के पश्चात् की भी कुछ बाते इसमे आ गई हैं ।

भूषण कवि ने दिलेर खॉ सूबेदार की भी हार की चर्चा शिवराज

---

*औरंगजेब, जिल्द ४ पृ० १३६, तथा औरंगजेब, यदुनाथ सरकार, जिल्द ४, पृ० २४३

भूषण मे की है जैसा कि इस ग्रंथ के छन्द न० ३२७ मे उल्लिखित है।

दिलेर खाँ* को शिवा जी ने स० १७३२ वि० मे हराया था। शिवराज भूषण मे एक छन्द ऐसा भी है जिस मे उल्लिखित घटनाएँ शिवाजी की मृत्यु के बहुत पीछे की है। वह छन्द यह है—

उत्तर पहार बिधनोल खँडहर भार—
खडहू प्रचार चारु केली है बिरद की।
गोर गुजरात और पूरब पछांह ठौर,
जतु जगलीन की बसति मार रद की।
भूषन जो करत न जाने बिन घोर सोर,
भूलि गयो आपनी उँचाई लखे कद की।
खोइयो प्रबल मदगल गजराज एक,
सरजा सों बैर कै बड़ाई निज मद की।

शि० भू०, छ० १५६

इस छन्द मे भूषण ने समासोक्ति का उदाहरण देते हुए शिवा जी को सिह के रूप मे प्रशसा की है जिस सिह (शिवा जी) का यश उत्तर पहाडो, बिदनूर, तथा उडीसा तक फैला हुआ है तथा जिसने बगाल और गुजरात की पूर्वी-पश्चिमी जगली बस्तियो को भी उजाड डाला था। यही नही, जो हाथी रूपी बादशाह सदैव खूब जोर-शोर दिखाता था वह भी अपनी ऊँचाई (महत्ता) को खो बैठा इस प्रकार से (शिवाजी) शेर से शत्रुता कर गजराज (बादशाह) ने अपने मद को नष्ट कर दिया। इस प्रकार से भूषण ने इस छन्द द्वारा अनेक महत्वपूर्ण भावनाओ का उद्घाटन कर दिया है। बंगाल और गुजरात प्रान्तो को साहू के समय मे चिमनाजी तथा पेशवा ने विजय किया था। भूषण कवि ने ही शिवा जी के यश को मोरग, कुमाऊँ तथा गढवाल तक पहुँचाया था। बिदनूर को शिवाजी ने स १७१६ वि० मे जीता था। इस छन्द मे वर्णित अधिकाश

*यदुनाथ सरकार, शिवाजी पृ० २६२ : भूषण विमर्श, पृ० ६८

घटनाएं शिवाजी की मृत्यु के भी बहुत पीछे की है जिन्हे कवि शिवाजी के नाम पर व्यवस्थित करता है। इसका कारण हम शिवाबावनी पर विचार करते हुए पूर्व ही बतला चुके है। कि महाकवि भूषण महाराष्ट्र प्रान्त का उत्कर्ष शिवाजी की देन मानते थे। अतः साहू तथा पेशवा की विजयों को उन्होंने शिवाजी के नाम पर अभिहित किया है। इस कारण से भी साहित्यिकों ने भूषण की अवस्था, आश्रयदाता और शिवा जी से संबंध के विषय मे गहरा धोखा खाया है।

रायगढ़ और सितारा

शिवराज भूषण मे कवि ने रायगढ का विस्तार से चित्रण किया है तथा उसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की है। परन्तु शिवा बावनी तथा अनेक फुटकर छन्दो मे भूषण ने सितारा के ही उत्कर्ष का वर्णन किया है। शिवराज भूषण का एक भी छन्द ऐसा नही है जो शिवा जी से संबंध न रखता हो। परन्तु शिवा बावनी मे शिवाजी, साहू जी, बाजीराव पेशवा, रीवॉ-नरेश अवधूतसिह, तथा हृदयराम सुरकी, को प्रशंसा के भी छन्द आपको मिलेगे तथा उस समय की राजधानी के रूप मे सितारा का ही उल्लेख आया है, यथा—

"तारे लागे फिरन सितारा गढ़धर के।" शि० बा०, छन्द ७

" बाजत नगारे ये सितारा गढ़धारी के।" शि० बा०, छंद २८

तथा—"दिल्ली दुलहिन भई सहर सितारे को।" शि० बा०, छंद ३६

इन दोनो बातो के अन्तर को जब तक भली प्रकार से समझ नहीं लिया जाता, तब तक इन छन्दो के समझने और उनका तारतम्य बैठाने मे बहुत उलझन होती है। फलस्वरूप पाठक गण यथार्थ तथ्य की ओर नहीं पहुँच पाते।

छत्रपति साहू संवत् १७६४ मे औरंगजेब की जेल से छूटे थे। उसके पश्चात् हो वे सितारा की गद्दी पर बैठे थे और तभी उन्होंने इसे अपनी राजधानी बनाया था। भूषण भी यही साहू और बाजीराव पेशवा से मिले थे। इसी आधार पर उन्होंने कहा था—

"भूषणजू खेलत सितारे में सिकार साहू,
संभा कौ सुअन जातैं दुअन सचै नही।"
शिवा बावनी, छन्द ४८

तथा—"बाजीराव बाज की चपेट चंग चहूँ ओर,
तीतर तुरक दिल्ली भीतर बचै नही।"

इन उदाहरणो से हम सरलतया भूषण की विचार सरणी का अनुमान कर सकते है। जिसमे साहू और बाजीराव को आश्रयदाता के रूप मे तथा शिवाजी को आदर्श के रूप मे लिया गया है। इसी से इस कवि ने इन्हे अवतार रूप मे अंकित करने का प्रयत्न किया है और स्पष्ट तया विष्णु का अवतार बतलाया है। भूषण द्वारा स्वराज्य स्थापन के लिये इसी प्रणाली का अवलबन लिया गया है और यही भावना उनकी सफलता की कुजी समझनी चाहिए।

उपर्युक्त विवरणो से यह बात स्पष्ट हो जाता है कि कवि ने शिवराज भूषण की रचना स० १७७३ वि० मे की थी। इसीलिये इस ग्रथ मे कई घटनाएँ शिवाजी के जीवन के अतिम काल की तथा मृत्यु के बाद की भी आ गई है। यह ग्रथ सितारा मे ही लिखा गया था और शिवा बावनी के ५२ छन्द उससे पहले ही निर्मित हो चुके थे। अतः शिवराज भूषण का निर्माण-काल सवत् १७७३ वि० ही युक्तियुक्त है तथा भूषण के कथन से भी इसकी पुष्टि हो जाती है।

शिवा बावनी

शिवा बावनी की रचना एक विशेष घटना का द्योतक है जिसमे राष्ट्रीय भावना के रूप मे भूषण ने साहू के सामने उत्तरी और दक्षिणी नरेशो की प्रशंसा करते हुए शिवाजी का आदर्श चित्रण किया है और इसी आधार पर राष्ट्र-निर्माण की योजना प्रस्तुत की थी। इसमे भी ऐतिहासिक चित्रण जो शिवाजी के नाम पर अभिहित किया गया है उसमे से अधिकाश साहू और बाजीराव पेशवा की विजयो से सबध रखती हैं। इसे भी आप भूषण के ही शब्दों मे अवलोकन कीजिये—

(१) मालवा उज्जैन भनि भूषण भेलास ऐन,
सहर सिरोज लौं परावने परत हैं।
शि० बा०, छन्द १५

तथा—(२) भूषण सिरोज लौ परावने परत फेरि,
दिल्ली पर परत परदन की छार है।
शि० बा०, छन्द ४६

शिवाजी के समय मे उज्जैन, भेलसा व सिरोज मे मरहठो की छावनी कभी नही रही इन्हे साहू और बाजीराव पेशवा ने स० १७६६ वि० मे सैनिक कैम्प बनाया था, तभी वे उत्तर की ओर बढ़े थे और दिल्ली मे जा धमके थे। यही नही उत्तरी भारत की भी कई घटनाएँ इसमे उल्लिखित है, यथा—

(१) रकी भूत दुवन करकी भूत दिग दती,
पकी भूत समुद सुलंको के पयान ते।
शि० बा०, छन्द ५०

(२) जादिन चढ़त दल साजि अबधूत सिह,
तादिन दिगंत लौं दुवन दाटियतु है।
शि० बा०, छन्द ५१

(३) रूम रूँदि डारै खुरासान खूँदि मारै खाक,
खादर लौं झारै ऐसी साहू की बहार है।
शि० बा०, छन्द ४६

(४) बाजीराव बाज की चपेट चग चहूँ ओर,
तीतुर तुरक दिल्ली भीतर बचै नहीं।
शि० बा०, छन्द ४८

इन छन्दों मे हृदयराम सुरकी और अवधूतसिह के आक्रमण की चर्चा है जो राज्योद्धार के लिये स० १७६८ वि० मे किया गया था तथा साहू और बाजीराव पेशवा की विजयो का उल्लेख है जिन्हे भी इन्होने उन्ही दिनो प्राप्त की थी। इन्ही छन्दो से प्रभावित हो साहू ने

भूषण को अपना दरबारी कवि बनाया था और उन्हे खूब पुरस्कृत किया था। इसके बाद ही शिवराज भूषण की रचना हुई थी।

'शिवा बावनी' नाम पडने का कारण यही है कि इसके अधिकाश छन्द शिवाजी को प्रशसा मे कहे गये हैं और शिवाजी का आदर्श राष्ट्र को देने के लिये ही भूषण ने सारे भारत का दौरा किया था। इसी भावना के कारण भूषण कह बैठते है —

मोरग कुमाऊँ वौ पलाऊ बाधे एक पल,
कहाँ लौं गनाऊ जेऽव भूषन के गोत है।

शि० बा०, छन्द ४२

यहाँ पर भूषण कवि अपने द्वारा प्रवाहित आदर्श शिवाजी के चित्रण के सहारे मोरग और कुमाऊँ की रक्षा का उल्लेख करते है जिन्होने गुरिल्ला युद्ध करके औरगजेब से अपने राज्य वापिस ले लिये थे। शिवा बावनी की रचना इसी भावना को लेकर हुई है और पूर्णतया उत्तेजक विचारो एवं सदा सजीव चेतना भरने मे ये भली भॉति समर्थ है। भूषण का इनकी रचना मे उद्देश्य भी यही था कि राष्ट्र को जागृति प्रदान कर उद्बुद्ध कर दिया जाय। इस बावनी की रचना ऐतिहासिक तथ्य और निर्माण-काल के बारे मे भी अच्छा प्रकाश डालती है।

शिवा बावनी मे जो तथ्य निहित है उसकी ओर ध्यान न देने ही से साहित्यिको ने कुछ किवदन्तियाँ गढ डाली हैं। किसी ने कहा कि एक ही छन्द ५२ बार कहा गया है। किसी ने उसे १८ बार कहना माना तथा किसी ने उसके छन्द बदलने प्रारम्भ कर दिये इस प्रकार से इस बावनी की ऐतिहासिकता लोप करने का प्रयत्न किया गया; परन्तु यथार्थता प्रकट हुए बिना न रह सकी।

शब्द-साक्ष्य

भूषण ने कुछ शब्दो का ऐसा प्रयोग किया है जो अन्य द्वारा प्रयुक्त नही हुए थे, क्योकि शब्दो का विकास और ह्रास सामाजिक जीवन मे एक प्रमुख स्थान रखता है। ये शब्द कभी-कभी इतिहास की गुत्थी सुलझाने मे भी सहायक बन जाते है। भूषण ने ऐसे कुछ शब्द अपने शिवराज भूषण मे प्रयुक्त किये हैं। शिवराज भूषण का छन्द २२१ दृष्टिगत कीजिये—

"सरजा सवाई कासो करि कविताई तव,
हाथ की बड़ाई को बखान करि जात है।"

इसमे प्रयुक्त 'सवाई' शब्द एक विशेष भावना का द्योतक है। औरंगजेब ने यह उपाधि जयपुर नरेश जयसिह को दी थी जिसने जयपुर बसाया था। इसी से वे 'सवाई जयसिह' कहे जाते थे। परन्तु महाकवि भूषण औरङ्गजेब की दी हुई उपाधियो को कभी महत्व नही देते थे। इसी से आश्रयदाता होते हुए भी 'जयसिह' के साथ इस उपाधि का कभी प्रयोग नही किया। इसके विरुद्ध इन्होने उक्त छन्द मे 'सवाई' की उपाधि शिवा जी के लिये प्रयुक्त की है।

इसी प्रकार से शिवराज भूषण मे प्रयुक्त 'बखतबुलन्द' शब्द है जिसे भूषण ने अपने ग्रथ के छन्द नं० १०६ मे इस प्रकार से कथन किया हैं—

"बासव से बिसरत विक्रम की कहा चली,
विक्रम लखत वीर 'बखत बुलन्द' के।"

औरङ्गजेब ने सवत् १७५७ वि० मे जयसिह को 'सवाई' की उपाधि दी थी तथा 'बखतबुलन्द' की उपाधि नागपुर के गोंड राजा को सं० १७४० वि० मे प्रदान की थी। अतः इन उपाधियो का महत्व जयसिह और गोंड राजा को प्राप्त होने के पश्चात् ही बढा था और

तभी भूषण ने इनका प्रयोग शिवाजी के लिये किया था। अतः यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि इस ग्रथ का निर्माण स० १७५७ के पश्चात् ही हुआ है, पहले नही। इससे पूर्व किसी कवि ने 'सवाई' शब्द विशेषण रूप मे अथवा नाम एव उपाधि रूप मे कभी प्रयुक्त नही किया था। इस दशा मे इसका महत्व और भी बढ जाता है। 'बखत बुलन्द' शब्द का प्रयोग मतिराम ने अपने अलङ्कार पचासा मे तथा केशवदास ने वीरसिह देव चरित मे भी किया है। फिर भी भूषण का प्रयोग रूपकातिशयोक्ति के रूप मे होने से अधिक महत्वपूर्ण बन जाता है। आशा है विद्वत्समाज इसकी महत्ता को स्वीकार करेगा।

भूषण के सम्मुख घटित घटनाओं का अभाव

शिवा जी के दरबार मे भूषण के जाने का समय प्राचीन परिपाटी वाले स० १७२७ वि० तक मानते है। इस बीच मे कई महत्वपूर्ण घटनाएँ दक्षिण मे घटी थी। इनमे से निम्नलिखित बहुत ही प्रसिद्ध है—

(१) शिवाजी छत्रसाल भेट . सन् १६७१ (स० १७२७ वि०) था।

(२) भूपति सिह पँवार का पुरन्दर के किले मे मारा जाना ' सन् १६७० ई० (सवत् १७२७ वि०)

(३) रजोउद्दीन खाँ को किले मे कैद कर देना : सन् १६७० ई० (सवत् १७२७ वि०)

(४) महावत खाँ की हार : सन् १६७१ ई० (स० १७२८ वि०)

(५) विक्रम शाह से राज छीनना : सन् १६७२ (सवत् १७२६ वि०)

मिश्र-बन्धु महोदय शिवा जी के दरबार मे भूषण का जाना सं० १७२८ वि० मानते हैं। परन्तु पीछे उन्होने इस विचार को बदल कर स० १७२४ वि० कर दिया है। इस सशोधन का आधार क्या है? इसे आपने व्यक्त नहीं किया है। इस दशा मे घटनाओ की सख्या अत्यधिक हो जाती है जिनकी ओर इन पुंगवो ने ध्यान नही दिया है। शिवराज भूषण मे कुछ घटनाए अशुद्ध भी वर्णित है। इससे और भी स्पष्ट हो जाता है कि

भूषण शिवाजी के दरबार मे नही थे । उनका जन्म ही शिवाजी की मृत्यु के एक वर्ष पश्चात् हुआ है । इस सम्बन्ध मे ऊपर पर्याप्त प्रमाण दिये जा चुके हैं । अशुद्ध घटनाए ये है—

(१) शिवाजी का मिर्जा जयसिह को २३ किले भेंट कर देना ऐतिहासिक तथ्य है । परन्तु भूषण ने ३५ किले देने का उल्लेख किया है ।

(२) गुसलखाने का वर्णन भी इतिहास के अनुकूल नहीं है ।

ये सब बाते इस बात को स्पष्ट कर देती है कि भूषण शिवा जी के दरबार मे कदापि नही थे । वे तो आदर्श रूप मे मान कर उस प्रणाली का विस्तार कर देना चाहते थे जिसके आधार पर शिवाजी ने औरगजेब के छक्के छुडा दिये थे । यही भूषण की विशेषता थी । आश्रयदाताओं की सूची भी इसी बात को व्यक्त करती है कि भूषण का एक भी आश्रयदाता शिवा जी के समकालीन नही है । केवल छत्रसाल अवश्य शिवा जी के समकालीन थे । परन्तु भूषण इनके दरबार मे साहू के दरबार से लौट आने पर सवत् १७८० मे गये थे जबकि बगस के आक्रमण से त्रस्त होने पर भूषण से सहायता की याचना की थी । इसका वर्णन पहले दिया जा चुका है । शेष सब आश्रयदाता शिवाजी को मृत्यु के २५-३० वर्ष पश्चात् ही क्षेत्र मे दिखलाई देते हैं । अतः भूषण और शिवा जी को समकालीन मान कर आश्रयदाता के रूप मे चित्रित करना एक भयकर ऐतिहासिक भूल थी जैसा कि ऊपर के विवरण से स्पष्ट हो जाती है ।

भूषण और शिवा जी

भूषण और शिवा जी मे क्या सबध था। इस पर साहित्यिक तो भ्रम मे थे ही, इतिहासकार भी इससे उबर नही पाये है। भूषण और शिवाजी की समकालीनता पर पिछले पृष्ठो मे पर्याप्त ऊहापोह की गई है। जब यह निश्चय हो गया कि य दोनो महानुभाव समकालीन नही थे तबयह प्रश्न सामने आ जाता है कि इस महाकवि ने शिवाजी की प्रशसा क्यो की ?

इसका उत्तर यही है कि भारत मे शिवा जी की ही एकमात्र सत्ता थी जिसने दक्षिण मे औरगजेब के पेर नही जमने दिये थे। वरन् उसके अत्याचारो को दबा कर राष्ट्र एव हिन्दू समाज को शक्तिशाली बना दिया था शिवा जी की मृत्यु पर दक्षिण मे भी उसने वही रूप ले लिया था जैसा उत्तर मे प्रचलित था। भूषण इस इतिहास से परिचित थे। अतः उन्होने शिवाजी की गुरिल्ला प्रणाली और पहाडी किलो द्वारा स्वरक्षा भावना का प्रसार कर उत्तर और दक्षिण मे सर्वत्र राष्ट्र को उद्वेलित कर दिया जिसका स्पष्ट प्रभाव यह पडा कि औरगजेबी सत्ता समाप्त हो गई और सारा देश उद्बुद्ध हो नव चेतना और स्फूर्ति से परिपूर्ण हो गया।

भारत मे ईश्वरावतार के स्वरूप मे राम, कृष्ण, नृसिह आदि अवतारो के प्रति गहरी श्रद्धा वर्तमान थी। अतः उसी श्रद्धा का विस्तार करने तथा रावण, कस, हिरण्यकश्यप आदि राक्षसो के समान औरङ्गजेब को कुचलने के लिये शिवाजी को ईश्वरीय शक्ति से युक्त बतलाना भूषण को अभीष्ट था। भूषण यह भी समझते थे कि कोरी श्रद्धा से काम नहीं चल सकता। अत. राम-कृष्ण को भी मानव तथा राजकुमार के रूप मे चित्रित कर समाज को आदर्श शिवाजी के रूप मे ला खडा करना उनका लक्ष्य था। यह तथ्य है कि मानव का अनुकरण मानव करता है।

ईश्वर की सर्वशक्ति मत्ता अनुकरणीय नही होती। अतः उनके प्रति केवल श्रद्धा शेष रह जाती है। इसी से शिवाजी हमारे काम के रह गये क्योकि वे ईश्वर नही बन पाये थे। ईश्वर रूप मे प्रतिपादन करते हुए वे कहते है—

(१) "इन्द्र कौ अनुज तें उपेन्द्र अवतार याते,
तेरो बाहुबल लै सलाह साधियतु है।"

शि० भू०, १०३

(२) "तुम शिवराज ब्रजराज अवतारु आजु,
तुमही जगत काज पोषत भरत हौ।"

शि० भू०, ७५

(३) दशरथ जू के राम भे, बसुदेव के गोपाल।
सोई प्रगटे साहि के, श्री शिवराज भुवाल॥

शि० भू०, ११

(४) दारुन दइत हिरनाकुस विदारिवे कौं,
भयो नरसिह रूप तेज विकरार है।
भूपन भनत त्यो ही रावन के मारिबे कौं,
रामचन्द्र भयो रघुकुल सरदार है।
कस के कुटिल बल बसन बिधसिबे कौं,
भयो यदुराय बसुदेव कौ कुमार है।
पृथ्वी पुरहूत साहि के सपूत शिवराज,
म्लेच्छन मारिवे कौं तेरो अवतार है।

शि० भू०, ३५०

इन चारो छन्दों मे भूषण ने शिवाजी को ईश्वरावतार रूप मे अकित किया है। परतु चौथे छन्द मे नृसिह को तेज विकराल, रामचन्द्र को रघुकुल सरदार, श्रीकृष्ण को बसुदेवकुमार तथा शिवाजी को अवतार रूप मे चित्रित कर अपनी आदर्श भावना और चारो को ही समान कक्ष मे दिखलाने के लिये प्रति पादन शैली को यह स्वरूप दे दिया है इससे हम

सरलतया भूषण की भावना और वर्णन-शैली का अनुमान कर सकते है। इन छन्दो के अतिरिक्त और भी बहुत से छन्द है जिनमे शिवाजी को अवतार रूप मे कथन किया गया है। फिर भूषण एक पद्य मे कहते है —

"नव अवतार थिर राजै कृपान हरिगदा।

... .

साहि तनै साहसिक भौंसिला सुरज बस,
दासरथि राज तौलौं सरजा वीर सदा।"

शि० भू०, ३८१

इस प्रकार से भूषण नव अवतार शिवाजी की तलवार को रामराज्य की भॉति प्रतिविम्बित देखने के अभिलाषी है। अतिम आशीर्वादी दोहा तो अत्यन्त महत्वशाली है उसका भी अवलोकन कीजिये—

पुहुमि फणनि रवि ससि पवन, जबलौं रहै अकास।
शिव सरजा तब लौं जियौ, भूषन सुजस प्रकास॥

शि० भू० ३८२

इस दोहे मे भूषण शिवाजी के सुयश प्रकाश को जीवित रहने का आशीर्बाद देते हैं शिवाजी के लिये नहाँ इस से भावना और भी स्पष्ट हो जातीहै कि कवि शिवाजी को किस रूप मे अकित करना चाहता है। तथा भूषण और शिवाजी मे क्या सबध था इसका भी दिग्दर्शन हो जाता है।

महाकवि भूषण ने शिवाजी का आदर्श राष्ट्र को देकर एक नवीन विचारधारा का ही प्रतिपादन किया था। इसी बात की महत्ता सार्वजनिक रूप मे देश हितकर होने से अन्य कवियो के लिये भी सम्मान का साधन बन गयी थी इस विषय मे भी भूषण इस प्रकार से स्पष्टीकरण करते हैं—

नृप समाज में आपनी होन बड़ाई काज।
साहि तनै सिवराज के, करत कवित कविराज॥

तथा—

शि० भू०, २५८

"को कविराज सभाजित होत, सभा सरजा के बिना गुन गाये।"

शि० भू०, १५३

इन उदाहरणो से उपर्युक्त विचार-सरणी बिल्कुल स्पष्ट हो जाती है तथा महाकवि भूषण की व्युत्पन्न मति का भो अच्छा परिचय मिल जाता है जिसने राष्ट्रोत्थान और देशोद्धार के प्रयत्न मे पूर्ण सफलता पाई थी। राजाओं के सगठन मे यही भावना काम कर रही थी।

राजाओं के संगठन का कारण

अब प्रश्न यह होता है कि भूषण ने राजाओ का ही सगठन क्यो किया था। जनता मे उत्साह भरने और उसमे सजीवता लाने का प्रयत्न क्यो नही किया ? इसका मुख्य कारण यह था कि तत्कालीन भारत मे सामन्तशाही होने से राजाओ मे ही भिन्न-भिन्न समाजा की सत्त केन्द्रीभूत हो रही थी। प्रजा, राजा को ईश्वर का अश मानती और श्रद्धा से उनकी अभ्यर्थना करती थी। दो सहस्र वर्ष से भी अधिक काल से भारतीय राष्ट्र मे जातिगत सस्थाए स्थापित होती चली आई हैं जिन्होने क्रमशः सामतशाहो का रूप धारण कर लिया था। महाकवि भूषण ने इस प्रणालो से लाभ उठा कर तथा उसके आन्तरिक स्वरूप का अनुभव करके इसी पथ का अनुसरण किया था। अतः राजाओ के सगठन मे वे प्रवृत्त हुए थे और उन्ही के द्वारा जनता तक पहुँचने का प्रयत्न किया था।

इसी सावना को दृष्टि मे रख कर उत्तरी भारत का नेतृत्व सवाई जयसिह जयपुर नरेश को और दक्षिण का संचालक भूषण ने छत्रपति साहू तथा बाजीराव पेशवा को बनाया था। फिर भी सर्वोपरि सत्ता साहू की ही सर्वमान्य हो रही थी। अतः उसी को मूर्द्धन्य ठहराया था तथा जनता का नेतृत्व उसी को देने का प्रयत्न किया था। यद्यपि उस समय राजाओ मे एक निश्चित और सुदृढ सगठन की भावना एव राष्ट्रीय एकरूपता का नितान्त अभाव था। फिर भी देश मे औरगजेब के विरोधी भावो का आश्रय लेकर राष्ट्रीयता की एक धारा अवश्य बह निकली थी। बहुत-से औरङ्गजेब विरोधी मुसलमानो का भी सहयोग मिलने से भारत मे राष्ट्रीय चेतना का फूलता-फलता सजीव यौवन दृष्टिगोचर होने लगा था जिसका आरोपक एवं पोपक रूप मे श्रेय महाकवि भूषण को है।

इस कवि के प्रयत्न से औरङ्गजेब द्वारा प्रताडित हिन्दू-मुसलमानो मे पारस्परिक समाज-विरोधी भावनाओ का अवरोध हो रहा था तथा इसी आधार पर देश मे शान्ति स्थापित हो रही थी। यह ठीक है कि भूषण ने औरङ्गजेब के प्रति घृणा फैला कर ही सामाजिक सगठन मे सफलता पाई थी। परन्तु इस प्रचार मे जातीय विद्वेष की गन्ध नाम को भी न थी। इसे तो कवि ने क्षेत्र तैयार करने का साधन मात्र बनाया था। परन्तु स्वराज्य को दृढीभूत करने और उसमे स्थायित्व लाने के लिये उन्होने राष्ट्रीयता का ही अवलम्बन ले रखा था। भूषण ने हिन्दुत्व का सकुचित रूप कही नही लिया। उनकी नीति उदार और हिन्दू-मुसलिम मेल पर आधारित थी। इसीलिये वे मुसलमानो द्वारा भी वैसे ही सम्मानित किये गये थे जैसे हिन्दू नरेशो द्वारा आदरणीय माने जाते थे। यही कारण है कि भूषण उनकी भी भूरि-भूरि प्रशसा करते थे और अकबर बादशाह की नीति को शिवा जी के आदर्श से भी अधिक महत्वपूर्ण समझते थे। यही नही इसे वे राम-कृष्ण के समकक्ष बिठाने मे भी नही हिचके थे। शिवा जो उनके आदर्श थे।

उत्तेजना और उत्साह

भूषण की रचना में वीर रस के अंगों की अच्छी पूर्ति की गई है। उसके स्थायी भाव उत्साह से तो उनका पूरा साहित्य ही ओत-प्रोत है। इसके वर्ण्य विषय में इतनी गहरी और भावपूर्ण विवेचना की गई है कि देखकर आश्चर्य चकित रह जाना पड़ता है। जहाँ इस महाकवि ने वीर रस के अन्तर्गत नव रसों का निरूपण कर यह दिखला दिया है कि वीर रस ही रसराज की पदवी धारण कर सकता है और यही सब रसों में श्रेष्ठ और महत्वपूर्ण है। वहीं इस महान विभूति ने यह भी स्पष्ट कर दिया है कि किस अवसर पर हमें समाज को उत्तेजनात्मक एवं जोश दिलाने वाली रचना देनी चाहिए तथा स्थायी भाव के रूप में उत्साह वर्द्धन के लिये हमें कब और किस प्रणाली का अवलम्बन करना चाहिए।

महाकवि भूषण ने उत्तेजनात्मक तथा उत्साहवर्द्धक दोनों भावनाओं की विस्तार से रचना की है। उन्हें बहुधा युद्ध के लिये सन्नद्ध सैनिकों को जोश दिलाने के लिये अपनी उत्तेजक कविता का प्रयोग करना पड़ता था ताकि समर भूमि में व्यस्त सेनानियों के मन में कभी भी पश्चात्पद होने की भावना हृदय में न आवे। साथ ही उत्साह के सहारे नवजीवन भरने के लिए समाज को वीर रस अपेक्षित है जिसके बिना न तो समाज या राष्ट्र ही आगे बढ़ सकता है और न व्यक्तिगत उत्कर्ष ही प्राप्त हो सकता है। अतः वीर रस की स्थापना और उसके सहारे से ही हम राष्ट्र में उत्साह की सृष्टि कर सकते हैं तथा आवश्यकता पड़ने पर उत्तेजक रचना द्वारा किसी कठिन समस्या को हल करने के लिये तत्काल पूरे राष्ट्र, समाज अथवा उसके किसी अंग को कार्य क्षेत्र में सन्नद्ध किया जा सकता है। यही वीर रस की सबसे बड़ी देन है।

अब इन दोनों भावनाओं के अन्तर को उदाहरणों द्वारा भी दृष्टिगत

कीजिये ताकि यह भली भॉति समझा जा सके कि भूषण ने किन स्थितियो मे उत्तेजनात्मक रचनाओ का प्रयोग किया है और कब वे उत्साह वर्द्धन के लिये वीर रस का प्रयोग करते थे।

रीवा नरेश अवधूत सिह की सेना के सम्मुख भूषण ने जो कवित्त सुनाया था उसे अवलोकन कीजिये—

जा दिन चढ़त दल साजि अवधूत सिह,
ता दिन दिगन्त लौं दुवन दाटियतु है।
प्रलै कैसे धाराधर धमकैं नगारा धूरि—
धारा ते समुद्रन की धारा पाटियतु है।
भूषन भनत भुव डोल को कहर तहां,
हहरत तगा जिमि गज काटियतु है।
कांच से कचरि जात, सेस के असेस फन,
कमठ की पीठि पै पिठी सी बांटियतु है।

शिवा बावनी

इस छन्द मे महाकवि भूषण राजा अवधूत सिंह की प्रशसा करते हुए सेना को कितनी महान उत्तेजनात्मक भावना देते हैं जिसमे शत्रु-सहार के लिये प्रयाण करते ही उन पर गहरी धाक जा बैठती है। उसके नगाडो की धमक प्रलय के बादलो से समकक्षता करती है। उसकी सेना और सवारो आदि के चलने से उठी धूल इतनी अधिक है कि उससे समुद्र की धारा पट जाती है। उस सेना का सचालन भूकम्प-सा कहर ढा देता है। उसकी तलवार हाथियो को ऐसा काट डालती है जैसे धागा काट कर फेक दिया जाता है जिनकी पुकार एव भयकर आवाज सर्वत्र भर जाती है तथा सेना के दबाव से शेषनाग के फन काच की तरह कचर कर टुकडे-टुकडे हो जाते हैं और कच्छप भगवान पर पिठी-सी बॅटने लगती है। इस वर्णन मे कितनी गहरी उत्तेजक भावना भरी हुई है कि जोश मे भर कर किसी भी महान कार्य को करने के लिये सन्नद्ध हुआ जा सकता है। मुख्यतया शत्रु को सम्मुख देख कर तो उसके टुकड़े-टुकड़े कर डालने को जी चाहता है

और उसी प्रभाव मे तानाजी मौलसरे की भाँति रस्सी के सहारे सिंहगढ़ के किले पर चढ कर उसे विजय करने मे सफलता पा लेता है।

अब एक कवित्त महाराजा छत्रसाल की प्रशंसा मे भी अवलोकन कीजिये इसमे भी कवि एक गहरी उत्तेजक भावना देकर समाज मे जोश की धारा बहा देता है और सेना के बीच मे तो यह विचाराधारा बारूद से पलोते का काम देती है। लीजिये—

सांगन सो पेलि पेलि खग्गन सों खेदि खेदि,
समद सा जीता जो समद लौं बखाना है।
भूषण बुन्देल मनि चपत सपूत धन्य,
जाकी धाक बचा एक मरद मियां ना है।
जंगल के बल से उदगल प्रबल लूटा,
महमद अमी खॉ का कटक खजाना है।
वीर रस मत्ता जाते कांपत चकत्ता यारो,
कत्ता ऐसी बॉधिये जो छत्ता बॉधि जाना है।

भू० ग्रं०, छत्रसाल प्रशसा, छन्द ६

इस कविता मे भूषण कवि ने अब्दुल समद की सेना पर विजय पाने का चित्रण किया है जिसे सॉगों से पेल कर तथा तलवारो से पीछा करके हराया था जो कि समुद्र की तरह महान ठहराया गया था। फिर भूषण कवि कहते हैं कि बुन्देलो मे सर्वश्रेष्ठ छत्रसाल चंपतिराय का सपूत है जिसकी धाक से औरङ्गजेबी सेना अत्यन्त आतंकित रहती थी। उस सेना का एक भी व्यक्ति ऐसा न था जिस पर छत्रसाल का भय न छाया हो इससे वे त्रस्त थे। फिर जंगल मे घेर कर मोहम्मद अमो खॉ की सेना तथा खजाना लूट लेने से उसका प्रभाव और भी अधिक शत्रु सेना पर पडा था अतः औरंगजेब इस वीर रस मे मस्त रहने वाले छत्रसाल से इतना भयभीत होकर कॉपता रहता था कि वह अपने को सम्हालने मे भी असमर्थ था। इससे भी हम भूषण की इस जोशीली रचना के द्वारा समाज मे उभाड़ दे सकते हैं और उसे सतर्कता देकर किसी

आवश्यकीय कार्य मे सलग्न कर दे सकते हैं। इन्ही रचनाओं से भूषण ने महान कार्यो मे भी सफलता पाई थी और सेनाओ मे एक उत्तेजक विद्युत-शक्ति भर देना इस कवि का साधारण-सा कार्य हो रहा था।

अब एक छन्द शिवा जी की प्रशसा मे भी लीजिये और देखिये कि महाकवि भूषण किस प्रकार से शिवा जी का आदर्श देकर सारे देश मे उत्तेजना भर देने मे सफली भूत होता है—

जिन फन फुतकार उड़त पहार भार,
कूरम कठिन जनु कमल बिद्लिगो।
विष जाल ज्वाला मुखी लवलीन होत जिन,
झारन चिकार मद दिग्गज उगलिगो।
कीन्हो जेहि पान पय पान सो जहान कुल,
कोलहू उछलि जल सिंधु खल भलिगो।
खग्ग खगराज महाराज शिवराज जू को,
अखिल भुजग मुगलद्दल निगलिगो।

शि० बा०, ४७

इस छन्द मे कवि ने मुगल सेना को सर्प के रूप मे चित्रित किया है जिसके विष की तीव्रता से बड़े-बडे पहाड उड़ जाते थे और कच्छप भगवान की पीठ कमल के समान फट जाती थी। इस विष की ज्वाला मे बड़े-बडे ज्वालामुखी पर्वत भी गरकाव हो जाते हैं तथा उसकी लपट से दिशाओ के हाथी अपना मद उगल देते थे। जिसने सारे ससार को दूध की तरह पान कर लिया, बाराह भगवान भी उछलने लगे तथा समुद्र-जल खौलने लगा था ऐसे प्रबल मुगल दल रूपी सर्पराज को शिवा जी का खड्ग रूपी गरुड पूर्णतया निगल गया अर्थात् मुगल सेना को उसने नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। इस रचना मे पौराणिक आधार लेकर कवि ने बडी ही मार्मिक औरआवर्धक उत्तेजना भर देने का प्रयत्न किया है। इस भावना से कितना जोश सेना अथवा समाज मे दिया जा सकता है, इसका अनुमान सरलता से नही लगाया जा सकता।

ऊपर के उदाहरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि ऐसी रचनाएं सद्यः फल देनेवाली होती हैं जो कि अत्यन्त आवश्यक कार्य आ पड़ने पर समाज मे जोश भर कर उसे काम मे सलग्न किया जा सकता है। यहाँ तक कि इस दशा मे मृत्यु के भय की भी वह चिन्ता नही करता और युद्ध मे कट मरने को सन्नद्ध हो जाता है। कैसी तीव्र भावना है!

अब कुछ उदाहरण ऐसे भी अवलोकन कीजिये जिन मे उत्साह की भावना अधिक मात्रा मे मिलती है जो कि वीर रस का सबसे महत्वपूर्ण अग है। साथ ही जिनमे क्षणिक उत्तेजना न होकर गहरा उत्साह प्रस्फुटित होता है। भूषण के अधिकाश छन्द इस कोटि के हैं जिनमे कुछ अश उत्तेजक दिखलाई देता है तथा कुछ भाग स्थायी उत्साह के रूप मे विकसित हुआ है। पहले हम उत्साह के रूप को यहाँ उपस्थित करते हैं जिससे साहित्यिको को इस बात का पता लग जावे कि भूषण की रचना मे वीर रस का कितना गहरा परिपाक हुआ है। देखिये—

सिह थरि जाने बिन जावली जगल भटी,
हठी गज एदिल पठाय करि भटक्यो।
भूषन भनत देखि भभर भगाने सब,
हिम्मति हिये में धारि काहु वै न हटक्यो।
साहि के सिवाजी गाजी सरजा समत्थ महा,
मद्गल अफजलै पजा बल पटक्यौ।
ता विगिर ह्वै करि निकाम निज धाम कहँ,
आकुत महाउत सु आंकुस लै सटक्यौ।

शि० भू०, ६३

इस कवित्त मे महाकवि भूषण ने गजरूपी अफजल खा को आदिलशाह द्वारा जावलो मे शिवाजी रूपी शेर को पकडने के लिये भेजने मे भूल बतलाई है क्योकि वह स्थान सरजा (शेर शिवाजी) की माँद के समान था। जहाँ पर हाथी को जाने का साहस ही नही हो सकता। उस अफजल रूपी हाथी को सिह रूपी शिवाजी ने पजारूपी बघनखा से मार कर गिरा दिया। जब

वह मारा गया तो उसका साथी सेनापति याकूनखा रूपी महावत अपने सहायक अकुशखा को लेकर बीजापुर को सटक गया। हाथी के साथ महावत और अकुश का सामजस्य कितने प्रभावशाली ढग से किया गया है कि कवि की प्रशसा किये बिना पाठक नही रह सकता। इसमे आदि से अन्त तक वीर रस का ऐसा क्रम विकास पाया जाता है कि कही पर एक शब्द की भी शिथिलता नही दिखलाई देती। साथ ही सिह और गज के रूपक का जैसा सुन्दर निर्वाह इसमे हुआ है वैसा अन्यत्र शायद ही दिखलाई दे। इस छन्द मे शाब्दिक टवर्गादि की अपेक्षा भावपूर्ण ओजमयी वीर रस से ओत-प्रोत विचारधारा देने का कैसा गहरा प्रयत्न किया गया है!

अब एक और उदाहरण लीजिये जिसमे सिह का प्रभाव एक अन्य प्रकार से अकित किया गया है। सिंह स्वाभाविक वीर रस का प्रतीक होता है। उस पर भूषण की लेखनी और वाणी से प्रसूत होकर उसकी रचना एक अनोखा रूप धारण कर लेती है। अवगाहन कीजिये—

"उत्तर पहाड़ विधनोल खँडहर झार;
खंडहू प्रचार चारु केली है विरद की।
गौर गुजरात अरु पूरब पछाँह ठौर,
जन्तु जंगलीन की बसति मारि रद की।
भूषण जो करत न जाने बिन घोर सोर,
भूलि गयौ आपनी उँचाई लखे कद की।
खोइयो प्रबल मद गल्ल गजराज एक,
सरजा सौं बैर कै बड़ाई निज मद की।"

शिवराज भूषण, छन्द १५६

इस छन्द मे महाकवि भूषण ने सिंह रूपी शिवा जी का चित्रण करते हुए उत्तर पहाड़ो मे कुमाऊँ, मोरग, गढवाल तक उसके सुन्दर यश विस्तार की चर्चा की है तथा बगाल से गुजरात तक जो जगली प्रान्त अपने को अत्यन्त वीर मानते थे। उनको भी लूट कर शेर रूपी शिवा ने बरबाद कर दिया था जिनमे अधिक उद्दडता भरी हुई थी।

फिर भूषण कवि कहते है कि जो हाथी रूपी बादशाह अपने को अत्यन्त प्रबल समझता था और सदैव अपने महत्व का जोर-शोर से प्रचार करता रहता था। वह भी अपनी महत्ता को खो बैठा तथा अपने प्रबल मद से गलित मस्तो से आपूरित उत्कर्ष को भी नष्ट कर दिया। इस प्रकार से शिवा जी रूपी शेर से सभी पद दलित होकर अपने लिये त्राण पाने को आश्रय देखते हैं। कैसी विचित्र और आकर्षक भावना इस समासोक्ति के सहारे दी गई है! इस छन्द की सारी शब्द योजना और रस व्यजना ऐसे आकर्षक ढंग से सुनियोजित है कि इसकी महत्ता स्वय ही हृदय को आकपित कर लेती है। इससे प्रस्फुटित जीवनसार हमारी धमनियो के रक्त को कितना वेगमय बना देता है। यह इस छन्द से आनन्द उठाने वाला ही समझ सकता है।

अब एक और भी उदाहरण लीजिये इसमे इस महाकवि ने पहाड़ो और पहाडी किलो का शिवाजी से सबध स्थापित कर एक नितान्त मौलिक, नवीन एव महत्वपूर्ण विचार-सरणी देने का प्रयत्न किया है। इसे भी आप कवि के ही शब्दो मे दृष्टिगत कीजिये—

जाहि पास जात सो ता राखि न सकत याते,
तेरे पास अचल सु प्रीति नाधियतु है।
भूषण भनत शिवराज तब कित्ति सम,
और की न कित्ति कहिबे को काधियतु है।
इन्द्र कौ अनुज तैं उपेन्द्र अवतार यातैं,
तेरो बाहु बल लै सलाह साधियतु है।
पॉय तर आय नित निडर बसाइबे को,
कोट बाँधियतु मानो पाग बाँधियतु है।
शि० भू०, छन्द १०४

इस छन्द मे महाकवि भूषण ने पहाडो का चित्रण करते हुए बतलाया है कि 'पहाड़' अपनी रक्षा तेरी शरण मे आने पर प्राप्त कर सकते हैं। अतः वे आप से स्थायी प्रीति करते हैं क्योकि वे मानते हैं कि हे शिवाजी अन्यत्र हमारी रक्षा नही हो सकती। फिर कवि कहता है कि तेरी कीर्ति इतनी महान है कि अन्य कोई भी उसकी समता नही कर सकता, यो,

कहने को तो औरो की भी प्रशंसा की ही जाती है। तू (शिवाजी) इन्द्र का छोटा भाई उपेन्द्र (विष्णु), के अवतार है इसलिये तेरी भुजाओ का बल पाने के लिये ये पहाड आप से सलाह करते है। जब ये पहाड़ शरण मे आ जाते हैं तो उन्हे निडर भावना देने के लिये पगड़ी रूपी किले उन पर बाँध देता है। (सम्राट अपने रक्षण वाले राजाओ को गद्दी पर बैठते समय पगड़ी बाँधते हैं) इसी प्रणाली का चित्रण भी इस छन्द मे कर दिया गया है। साथ ही इन्द्र द्वारा पहाडो के पख काटने के डर से ये पहाड (विष्णु रूप) की शरण मे आ जाते है।

इस छन्द मे भी वीर रस पूर्ण रूप से ओत-प्रोत हैं जिसमें शिवा जी के पहाडी किलो का बडा ही आकर्षक तथा तथ्य पूर्ण चित्रण किया गया है। इसमे वीर रस की भावना भी पर्याप्त मात्रा मे भरी हुई है जो मानव के हृदय को उत्साह पूर्ण कर देती है।

इन छन्दो से कवि की प्रतिभा का तो अच्छा परिचय मिलता ही है साथ ही उसके कथन मे वीर रस की गहराई की महानता भी लागू हो जाती है। इस विषय मे भूपण की विचारधारा अप्रतिम और असाधारण ही माननी पडेगी। मौलिकता का ऐसा रूप अन्य कवि मे शायद ही मिल सके। इसी प्रकार से वीर रस का परिपाक भी बहुत ही गहराई लिये हुए हुआ है। इसमे उत्साह की उत्ताल तरगे लगातार प्रवाहित होती रहती हैं। इस महाकवि की राष्ट्रीय तथा सामाजिक सफलताएँ समाज मे उत्साहपूर्ण भावनाएँ भरने मे और भी अधिक सहायक होती हैं। इस चित्रण से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि वीर रस के इन दोनो अंगो उत्तेजना तथा उत्साह मे केवल परिमाण और हृदय पर कालगत विकास के अन्तर को छोड कर और कोई भेद नही है। दोनो मे ही वीर रस का परिपाक होता है। उत्तेजना सद्यः उत्कट उत्पाह का ही दूसरा नाम है। भूषण की रचना मे अधिकाश छन्द इस कोटि के मिलेंगे जिनमे उत्तेजना के साथ उत्साह का स्थायी रूप भी दृष्टिगोचर होता है।

तुलनात्मक आलोचना

बीररस के विकास मे बहुधा कवियो के उत्साहवर्द्धन मे साम्य रूप मिलता है और भाव टकराते हुए दिखलाई देते हैं। ऐसे भाव अनायास ही एक केन्द्र पर आकर घूमते जान पडते हैं। इसका कारण अनुकरण के रूप मे मानना ठीक न होगा। क्योंकि यह भाव-साम्य भारतीय कवियों में ही आपस मे नही मिलता। विदेशी और भिन्न भाषी कवियो मे भी इनमें कहीं न कही साम्यावस्था आ मिलती है। साथ ही वीरत्व प्रस्फुटन की विशेषता भी हृदयगत होने मे अधिक सहायता मिलती है। यहॉ पर इसके कुछ उदाहरण दिये जाते हैं। पहले भूषण का ही एक कवित्त लीजिये—

उद्धत अपार तव दुंदुभी धुकार साथ,
लघैं पारावार बाल बृन्द रिपुगन के।
तेरे चतुरग के तुरगन के रगे रज,
साथ ही उडात रज पुंज हैं परन के।
दच्छिन के नाथ सिव राज ! तेरे हाथ चढ़ें,
धनुष के साथ गढ़ कोट दुरजन के।
भूषण असीसे तोहि करत कसीसे पुनि,
बानन के साथ छूटैं प्रान तुरकन के॥

इस छन्द मे 'तुरकन' शब्द का अर्थ आत्याचारी है और औरंगजेब की सेना के लिये आया है। इसमे भूषण शिवाजी की सेना के प्रभाव का चित्रण कर औरंगजेब की सेना पर जो प्रभाव पड़ता है उसका विस्तार से चित्रण करता है। इस वर्णन से सर वाल्टर स्काट की उस ललकार से तुलना कीजिये जो कि इस कवि ने 'लेडी ऑव द लेक' मे कथन किया है। स्कॉट कहता है—

Hail to the chief who in triumph advances.
Honour'd and blessed be the ever green pine.
Long may the Tree in his benner that glances.
Flourish the shetter and grace of line.
Roderigh vich Alpine dhu, ho ! Ieroe.

अब भूषण ने औरगजेब के हाथियो के मुकाबिले मे शिवाजी के सिहो को भेज कर जो युद्ध कराया है, उसे भी अवलोकन कीजिये। यहॉ पर शिवाजी के सेनानियो को फुर्तीला, छरहरा और उग्र रूप मे सिह-सा. चित्रण किया है और औरगजेब के सरदारो को तुन्दिल, लम्बा चौडा कद, और शिथिल रूप मे कथन किया है। इस विषय मे भूषण के शब्दों का अवलोकन कीजिये—

> उतैं पातसाह जू के गजन के ठट्ट छूटे,
> उमड़ि घुमड़ि मतवारे घन कारे है।
> इतैं शिवराज जू के छूटे सिहराज,
> जो विदारें कुभ करिन के चिक्करत भारे हैं ॥
>
> शिवा बावनी, छन्द ५२

अब इस की तुलना मे चदबरदाई ने पृथ्वीराज के हाथियो का जो चित्रण किया है उसका भी तुलनात्मक रूप मे विवेचन कीजिये—

> गही तेग चहुआन हिन्दुआन एन।
> गज जूथ परिकोप केहरि समानं ॥
> करे रुंड मुड करी कुम्भ फारै।
> वर सूर सामत हुकि गर्ज मारै ॥

इन दोनो वर्णनों मे भूषण का चित्रण प्रत्यक्ष रूप से उत्तम और गठा हुआ है जिसमे हाथियो को काले घन के रूप मे ठहराया है जिन पर शिवा जी के शेर के समान वीर झपटकर उनके मस्तको को फाड डालते हैं। चन्द का वर्णन भी उसी भाव का है। परन्तु न तो शब्द-विन्यास वैसा सुन्दर है और न शब्द-सगठन ही प्रभाव शाली है अतः निश्चित रूप से

भूषण की रचना श्रेष्ठ है। अब गग कवि की भी इसी भाव की एक रचना लीजिये—

> झुकत कृपान मय दान ज्यो उदोत भान,
> एकन ते एक मानो सुषुमा गरद की।
> कहै कवि 'गग' तेरे बल की बयारि लागे,
> फूटी गज घटा घन घटा ज्यो सरद की।

भाषा विकास की दृष्टि से यह छन्द उच्चकोटि का है परन्तु भूषण ने शिवाजी के सैनिको को सिंह के रूप मे चित्रित कर गजो के कुभ फाडने का रूपक बहुत सुन्दर तथा वीर रस के अनुरूप ही अकित किया है। सिंह वीर रस का प्रतीक माना ही जाता है। यद्यपि पवन भी वीरत्व का रूप माना जाता है। फिर भी भूषण की रचना मे ओज की मात्रा अच्छी मानी जायगी।

भूषण की भावना मे दुर्गा सप्तशती का भी कुछ प्रभाव जान पड़ता है। चडी भगवती अनन्त शक्ति शालिनी तथा महिषासुर, शुभ, निशुभ आदि दैत्यो को सहार करने वाली है अतः भूषण की रचना मे उसका प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। भूषण के पिता रत्नाकर देवी के परम उपासक थे। भूषण ने भी शिवराज भूषण के प्रारभ मे देवी की प्रार्थना की है। उनकी रचना मे कही-कहीं तो वाक्य अनूदित से जान पडते है। भूषण की यह अमृत ध्वनि देखिये—

> क्रुद्ध द्धरि किय युद्ध द्धरि अरि अद्ध द्धरि करि।
> मुड ड्डरि तहँ रुंड ड्डकरत ड्डुंड ड्डग भरि॥
>
> शि० भू०, छन्द ३५७

इसको पढ कर सप्तशती के निम्न श्लोको का स्मरण हो आता है—

> छिन्नेऽपि चान्ये शिरसि पतिता पुनरुत्थिता।
> कबन्धा युयुधुर्देव्या गृहीत परमाश्रिताः।
> ननृतुश्चापरे तत्र युद्धे तूर्य लयाश्रिताः।
> कबन्धाश्छिन्न शिरसः शब्द शक्त्यृष्टि पाणयः।
> तिष्ठ तिष्ठेति भाषन्ती देवी मन्ये महासुरः।

आगे फिर भूषण की रचना मे देखिये—

"चडी ह्वै घुमंडी अरि चड मुंड चावि कर,
पीवत रुधिर कछु लावत न बार है।"

इसमे "चामुडा पीत शोणितम्" का स्पष्ट आभास मिलता है। इसी प्रकार से—

कालिका प्रसाद के बहाने ते खवायो महि,
बाबू उमराव राव पसु के छलनि सो।

पद्यांश मे "मया तवात्रौपहृतौ चण्ड मुण्ड महापशू" का भापान्तर मात्र है।

इनके अतिरिक्त शिवराज भूपण मे दुर्गा सप्तशती के कुछ अन्य वाक्यांश भी टक्कर खा जाते है, यथा—

(१) आदि सकति—'प्रकृति स्त्वमाद्या,'
(२) मधुकैटभ छलनि—"वञ्चिताभ्याँमिति तदा।"
बिड्डाल बिहंडिनि—"विडालस्यानिका यात्पातया मास वै शिरः।"

इससे स्पष्ट है कि भूषण शक्ति के उपासक और दुर्गा सप्तशती के पाठ के अभ्यासी थे।

भूषण के वर्णन मे युद्ध का साक्षात् चित्र-सा अंकित हो जाता है। इस विषय मे वे सर वाल्टर स्कॉट से कम सिद्धहस्त नही तुलना के लिये एक-एक और छन्द यहाँ दिया जाता है। यथा—

मुंड कटत कहुँ रुंड नटत कहुँ सुंड पटत घन।
गिद्ध लसत कहुँ सिद्ध हँसत सुख वृद्धि रखत मन।
भूत फिरत करि बूत भिरत सुर दूत घिरत तहँ!
चंडि नचत गन मंडि रचत धुनि डंडि मचत जहँ।
इमि ठानि घोर घमसान अति, भूपण तेज कियौ अटल।
शिवराज साह तुव खग्ग बल दलि अडोल बहलोल दल।

इसकी तुलना स्काट की 'मार्मियन' नामक पुस्तक की निम्न पंक्तियो से कीजिये—

They close in clouds of smoke and dust,
with swords sway and with lances thrust,
and such a yell was there, of sudden and potentious birth,
as if men fought upon the earth,
and finds in upper air, O life and death were in the shout,
Recoil and ıelly charoe and rout, and triumph and despair *

यहाँ वर्णनात्मक शक्ति मे कौन बढा है, यह कहना कठिन है। भूषण की रचना विक्रमी १८ वीं शताब्दी की है और स्काट १६ वी शताब्दी मे हुए है। फिर भी ये दोनो रचनाएँ सद्यः जोश भरने वाली हैं और युद्ध के लिये तुरन्त फल देने वाली है। परन्तु भूषण मे जो स्थायी भाव उत्साह के रूप मे व्याप्त है वह अन्यत्र कठिनाई से मिलेगा। अतः हम दृढ़ता से कह सकते हैं कि भूषण की रचना मे जो उत्तेजक तथा स्थायी भाव के रूप मे उत्साहवर्द्धक सामग्री मिलती है वह अन्यत्र दुर्लभ है। अतः भूषण निश्चित रूप से वीररस का सर्वोत्तम कवि है। गोस्वामी तुलसीदास ने भी लका के युद्ध मे हनुमान, राम, लक्ष्मण के युद्धो का अच्छा चित्रण किया है। यहाँ पर कवितावली से एक छन्द उद्धृत है। देखिये—

दबकि दबोरे एक वारिध में बोरे एक,
मगन मही में एक गगन उड़ात हैं।
पकरि पछारे कर चरन उखारे एक,
चीरि फारि डारे एक मींजि मारे लात हैं।

---

*देखो, माधुरी, आश्विन १६६० वि०

तुलसी लखत राम-रावन विवुध विधि,
चक्रपानि चडीपति चडिका सिहात है।
बड़े बड़े यान इत वीर बलवान बड़े,
जातुधान जूथप निपाते बात जात है।

अब भूषण का एक छन्द इसकी तुलना मे अवलोकन कीजिये—

रैया राय चपति कौ चढौ छत्रसाल सिह,
भूषन भनत समसेर जोम जमकैं।
भादो की घटा सी उठी गरदैं गगन घेरैं,
सेलैं समसेरे फेरैं दामनी सी दमकैं।
खान उमराउन के आन राजा राउन के,
सुनि सुनि उर लागैं घन कैसी घमकैं।
बैहर बगारन की अरि के अगारन की,
नाँघती पगारन नगारन की धमकैं।

शि० भू०, फुटकर छत्रसाल प्रशसा ४

गोस्वामी जी ने हनूमान द्वारा राक्षसों के वध की प्रणाली का चित्रण किया है जिसे वे बन्दर के रूप मे चित्रित करते हैं। इनमे राम की ईश्वरी शक्ति का आधार देकर इन्हे महत्वपूर्ण ठहराया है। इसलिये इस उत्साह मे मानवता का उत्साहवर्द्धक अनुकरण शेष नहीं रह जाता। इसी से इसमे अननुभूत शक्तियो का प्रयोग होने से हमारे काम की वस्तु नहीं रह जाती और केवल पढ़ने का आनन्द भर उठा कर चुप रह जाना पड़ता है। इसकी तुलना मे भूषण की रचना छत्रसाल की प्रशसा मे बहुत ही ओजस्विनी है। उसमे कवि ने अपने नायक की तेग का ऐसा महत्व-पूर्ण वर्णन किया है कि तुलसी के वर्णन में वह भाव नही ठहर पाता। इस छन्द का शब्द-विन्यास भी वीररस के बहुत ही अनुकूल हैं तथा भावो का क्रम-विकास भी उसी भाँति बढता जाता है। इससे भूषण का छन्द तुलसी से उत्तम कहने मे हमें कोई सकोच नही है।

भूषण और मतिराम की रचना मे भी कुछ साम्य मिल जाता है।

मतिराम की रचना शृंगारिक है। इस संबंध मे इस कवि का यह छन्दांश अवलोकन कीजिये—

> अली चलीं नवलाहि लै, पिय पै साजि सिगार।
> ज्यों मतङ्ग अड़दार कौ, लिये जात गड़दार॥

भूषण इसी भाव को वीर रस मे इस प्रकार से कथन करते हैं—

> "दावदार निरखि रिसानो दीह दलराय,
> जैसे गड़दार अड़दार गजराज' कौं।"

ऊपर के दोनों छन्दों मे एक ही भाव का चित्रण है। मतिराम नवला नायिका को सखियो के साथ पति के पास भेजते हुए अडदार हाथी को गड्दारो द्वारा ले जाने की तुलना करते हैं। महाकवि भूषण औरगजेब के सरदारो द्वारा क्रोधित शिवाजी को उसके दरबार से ले जाने के लिये उसी उपमा का प्रयोग करते हैं। इससे हम सरलतया भूषण की व्युत्पन्न मति और सूक्ष्म विचार का अनुमान कर सकते हैं। भूषण से पहले वीररस के अनुकूल भाषा नहीं ढल पाई थी। अतः इस दृष्टि से भूषण की महत्ता स्पष्ट रूप से सबके सामने आ जाती है।

एक उदाहरण और लीजिये मतिराम अपने ललित ललाम में वीर-रस का वर्णन करते हुए चित्रण करता है—

> **"मूंछन सों राव मुख लाल रंग देखि मुख,**
> **औरन कौ मूछन बिना ही स्याम रग भौ।"**

इसी भाव का कथन भूषण के शिवराज भूषण मे इस प्रकार मिलता है—

> "तमक ते लाल मुख सिवा कौ निरखि भयौ,
> स्याह मुख औरंग सिपाह मुख पियरे।"

मतिराम ने बूंदी के राव की प्रशंसा इसलिये की कि औरगजेब के परिवार मे किसी की मृत्यु हो जाने से अन्य राजाओ ने शोक मना कर मूछे मुड़वा ली थी परन्तु बूदी के राव ने मूछे नहीं मुड़वाई थी। यह एक साधारण घटना है फिर भी अक्खड़पन प्रकट तो होता ही है।

परन्तु भूषण ने शिवाजी का चित्रण रौद्ररस मे किया है जिससे औरगजेब का मुख आतक से काला पड गया तथा सिपाही भय से पीले चेहरे वाले दिखलाई देने लगे। इसमें जो ओज है वह मतिराम के छन्द मे ढूँढने पर भी नही मिलता। अन्य हिन्दी के कवि मान, सूदन, गोरेलाल आदि भी उसी कोटि मे आते है जैसा कि ऊपर वर्णन किया गया है।

बिम्ब प्रतिबिम्ब भाव

भूषण ने अपना ग्रथ शिवराज भूषण सितारा मे ही बैठ कर लिखा था। ग्रंथ-निर्माण मे वर्णित ऐतिहासिक घटनाओं से परिचित होने के लिये उन्होने मराठा इतिहास और साहित्य का अध्ययन भी अवश्य किया होगा। इसीलिये वहाँ के साहित्य की प्रतिध्वनि भूषण की रचना मे भी यत्रतत्र देख पड़ती है। इसी कारण मराठी भाषा के शब्द भी उनकी रचना मे पर्याप्त मात्रा मे आ गये है।

मराठी भाषा का जयराम कवि शिवाजी के दरबार मे था। उसने "राधा माधव विलास चम्पू" नामक ग्रन्थ की रचना की थी जिसमे दस-बारह भाषाओ का प्रयोग किया गया है। इसका एक छन्दाश यह है —

साहे सुभान कौ दान कहा विधि,
कैसे कियो निधि मोल लियो है।
कारन या कौ कह्यौ करतार ने,
सीसोदिया कुल सीस दियो है।

इसी भाव को महाकवि भूषण ने इस प्रकार से वर्णन किया है—

महावीर ता वश में भयो एक अवनीस।
लियो विरद सीसोदिया दियौ ईस कौं सीस।

इन दोनो निरुक्तियो मे भूषण का चित्रण गठा हुआ है और जयराम का वर्णन उथला-सा जान पडता है। फिर भी भूषण ने यह भाव जयराम से ही लिया है इसमे सन्देह नही। दक्षिण मे शिव भारत नामक सस्कृत

का ग्रन्थ प्रसिद्ध है उसके भी कुछ भाव भूषण की रचना से टकराते-से जान पड़ते हैं। इसे भी दृष्टिगत कीजिये।

त वीर ग्रथ सेनान्य सविधाय महामनाः। १७
अन्या नमू पृचमू नार्थां स्तत्साहाय्ये समा दिशत्। ५०
अम्बरः शम्बर समः प्रतापी याकुतो युतः। ५१
तथैवाकुश खानोऽपि निरकुश गज क्रम ः। ५२

इसी भाव को भूषण ने इस प्रकार कहा है :—

साहि के सिवाजी गाजी सरजा समत्थ महा,
मदगल अफजलै पजा-बल पटक्यौ।
ता विगिरि ह्वै करि निकाम निज धाम कहँ,
आकुत महाउत सो आकुस लै सटक्यौ।
शि० भू०, ६३

इस प्रकार से उत्तर और दक्षिण के साहित्य मे भाव साम्य और आदान-प्रदान का व्यवहार राष्ट्र-निर्माण मे सबसे अधिक सहायक बन सकता है साथ ही साहित्य की सम्पन्नता में भी वृद्धि करता है।

शिवराज भूषण के छन्द न० २५६ मे भूषण लिखते हैं—

"गौर गरबीले अरबीले राठौर गह्यौ,
लौहगढ सिहगढ़ हिम्मति हरषते।"

यही भाव 'शिव भारत' मे इस प्रकार से वर्णित है—

सिह लौह महात्त' च प्रबल च शिलोच्चयम्।
पुरन्दरम् गिरि तद्वत् पुरीं चक्रावती मपि।

इस प्रकार से इस महाकवि ने अन्य कवियो के एकाध भाव लेकर भी उन्हे अधिक सुन्दर रूप मे प्रस्तुत किया है जो कि उसकी प्रतिभा और शक्ति की परिचायिका है। ऐतिहासिक विवरण ही इस विषय में भूषण ने ग्रहण किये हैं जिसके बिना उक्त रचना प्रस्तुत की ही नहीं जा सकती थी।

भाषा पर विचार

भूषण की रचना मे जहाँ भावो, संस्कृति और उदात्त विचारो का विशेष महत्व है वहाँ भाषा की दृष्टि से भी उसकी महत्ता कम नही है। ओजपूर्ण चित्रण के लिये भाषा का प्रस्फुटन कैसा होना चाहिए। इस पर भूषण से पहले न तो किसी कवि ने ही विचार किया था और न अन्य साहित्यिको ने ही इसकी कुछ ऊहापोह की थी।

ऐसा जान पड़ता है कि उन्होने इस कार्य के लिये काफी भ्रमण भी किया, क्योकि बहुत से शब्द जो सौरसेन प्रान्त भदावर मे ब्रजभाषा के रूप मे प्रचलित हैं जिनका प्रयोग किसी कवि ने कभी नही किया था। उन शब्दो का प्रयोग भूषण की रचना मे स्वतन्त्रता से मिलता है। जैसे ओत (शान्ति), ठइ (निश्चय) कट्ठ (कठा) घरकी बाहरी सीमा, रठ (ढेर) और छिया (तुच्छ)। भद्द (अपमान), रद्द (बरबाद), डु ड (धड़) इत्यादि। इन शब्दो का प्रयोग किसी कवि ने नही किया था और केवल बटेश्वर के आस पास ही बोले जाते हैं। अतः स्पष्ट है कि भूषण ने वहाँ भ्रमण अवश्य किया था तभी उन्हें उपयुक्त मान कर प्रयोग के लिये चुना था। और भी बहुत से शब्द हैं जो भूषण ने नवीन रूप मे ही प्रयुक्त किये हैं।

यहाँ पर हम ब्रजभाषा विषयक एक प्रचलित भ्रान्ति की ओर विद्वानो का ध्यान आकर्षित करना चाहते हैं। आजकल मथुरा-बृन्दावन के समीप प्रचलित बोली ही ब्रजभाषा समझी जाती है। परन्तु साहित्य मे जो भाषा इस नाम से प्रचलित है वह ब्रज की प्रचलित बोली से मेल नही खाती। वहाँ पर कर्म के रूप मे मोकूँ, तोकूँ, जाकूँ, वाकूँ तथा करण एवं अपादान कारको मे वासूं, तासूं, मोसूं, लाठी सूं, आदि प्रयोग चलते है। इसी प्रकार से वहाँ पर क्रियाओ तथा सर्वनामो मे भी ऐसा ही विधान प्रचलित है। साहित्य मे इन शब्दो के स्थान पर मोकौ, तोकौ, जाकौ, वाकौ,

जासौ, वासौ, मोसौ, लाठी सौ आदि प्रयोग प्रचलित हैं अतः मथुरा जिले की स्थानिक बोली साहित्यिक ब्रजभाषा नही है यह निर्विवाद बात है। मथुरा वृन्दावन मे ब्रजभाषा साहित्य का भी खूब प्रचार है क्योकि कृष्णोपासना मे इसी का आश्रय लिया गया है। अतः शिक्षित समाज मे इन दोनों रूपो का प्रयोग होता है। परन्तु वहाँ के गाँवो मे केवल प्रथम रूप के ही दर्शन होते हैं।

इस अन्तर का मुख्य कारण यह है कि साहित्यिक भाषा सौरसेनी से निकली है जो अपभ्रंश के क्रम-विकास द्वारा वर्तमान रूप मे स्थित हुई है। अब से २२०० वर्ष पूर्व सौरसेनपुर (वर्तमान बटेश्वर) सौरसेनी का भाषा का प्रधान केन्द्र था। इसका उल्लेख मेगास्थनीज ने अपने एरियन नामक ग्रन्थ मे विस्तार से किया है और इस नगर की गणना भारत के छः प्रसिद्ध नगरो मे की है। यह नगर श्रीकृष्ण के पितामह सूरसेन की राजधानी था जो कि सूरसेन के नाम पर ही बसाया गया था। आज भी वहाँ अनिरुद्ध खेडा और प्रद्युम्न पुरा नामक मोहल्ले, खँड-हरो के रूप मे, श्रीकृष्ण के वशजो की स्मृति मे विद्यमान हैं। जिसका उल्लेख आर्कियालॉजीकल सर्वे की रिपोर्टो मे भी मिलता है।* यही भूमि ब्रजभाषा का असली क्रीडा क्षेत्र है जहाँ की प्रचलित बोली पूरे भदावर प्रान्त मे बोली जाती है। यही कारण है कि साहित्यिक विद्वान् गण भी ब्रजभाषा के मुख्य केन्द्र के समझने मे किंकर्तव्य विमूढ हो जाते हैं।

उक्त भ्रम मे पड कर बहुत से विद्वानो ने भूषण की शुद्ध ब्रजभाषा को अशुद्ध और मनमानी तोड़-मरोड़ के नाम से अभिहित किया है। यथार्थ रूप मे देखा जाय तो भूषण की भाषा अत्यन्त परिष्कृत, वीररस के अनुकूल, प्रभावशालिनी, ओजस्विनी तथा मुहावरेदार शुद्ध ब्रजभाषा है।

*देखिये—आर्कियालॉजीकल सर्वे रिपोर्टस सन् १८७१—२ जिल्द ४ पृ० १२८ तथा सरस्वती पत्रिका भाग २७ सख्या ४ पृष्ठ ४६३।

ब्रजभाषा के असली रूप से अनभिज्ञ सज्जनो ने ही छिद्रान्वेषी बन कर उसमे व्यर्थ के दोष दिखलाने का प्रयत्न किया है।

इस विषय मे एक बात और भी विचारणीय है कि भूषण से पहले वीररस का कोई काव्य ब्रजभाषा मे न था। केशवदास ने रतनबावनी तथा वीरसिंह देव चरित्र की रचना ब्रजभाषा मे अवश्य की थी परन्तु इनमे बुन्देलखण्डीपन अधिक आ गया है। अतः शुद्ध ब्रजभाषा नही रह सकी है। फिर इनके प्रयोग भी वीररस के अनुरूप नही ठहर सके हैं क्योकि इन्होने तत्कालीन प्रचलित भाषा का ही स्वरूप ले लिया है जो वीररस के अनुकूल न होकर शृङ्गार रस के लिये ही प्रयुक्त होता चला आया था। इससे इन रचनाओ म न तो ओज की वह मात्रा दिखलाई देती है जो भूषण मे है और न उसका परिष्कार ही जान पड़ता है।

यह सत्य है कि भूषण ने अपने राष्ट्रीय सगठन के लिये सारे भारत वर्ष मे चक्कर लगाया था अतः उनकी भाषा मे सभी प्रान्तो के शब्दो का प्रयोग हुआ है। परन्तु भूषण ने इन्हे ऐसा अपना लिया है कि वे पराये नही जान पड़ते।

भूषण ने महाराष्ट्र प्रान्त का काफी भ्रमण किया था और वहाँ रहे भी बहुत दिनो तक थे अतः इनकी रचना मे बहुत-से मराठी शब्द अनायास आये हैं। यथा—

याची, चिजी, चिजाउर, भटी, हुवै, वरगी, मल्लारि धम्मिल आदि शब्द मराठी भाषा से ही भूषण ने लिये है। शिवराज भूषण की रचना उन्होने सितारा मे ही बैठ कर की थी। अतः उनकी अन्य रचनाओ की अपेक्षा शिवराज भूषण मे मराठी शब्दो का अधिक प्रयोग हुआ है। इसीलिये एदिल, खुमान, और सरजा शब्दो तक का प्रयोग मराठी रूप मे किया है। इनके अतिरिक्त अकर, ठइ, लिय, भुवाल, अरि, और बारगीर इत्यादि शब्दो के प्रयोग भिन्न प्रान्तो से लिये गये हैं।

भूषण की भाषा मे फारसी, अरबी तथा तुरकी भाषा के भी बहुत-से शब्दो का प्रयोग हुआ है। मुख्यतया जहाँ मुसलमानो के सम्बन्ध की

बातचीत आई है वहाँ तो उन शब्दो का बाहुल्य पाया जाता हैं। इसे भूषण के ही शब्दो मे अवलोकन कीजिये—

"जसन के रोज यो जलूस गहि बैठो जोऽब,"

शि० भू०, १९८

"छूट्यौ है हुलास आम खास एक सग छूट्यौ,
हरम सरम एक सग बिनु ढग हीं।"

शि० भू०, १५०

तथा—

"कीरति कौं ताजो करी, बाजी चढ़ि लूटि कीन्ही,
भई सब सेन बिनु बाजी बिजैपुर की।"

शि० भू०, १५५

इसी प्रकार से जहान, दरगाह, बखत बुलन्द, पेस कसै, मुलक, बलद, जोरावर, उजीर, दिल, अदली, दरकी, गरीब नेवाज, बालम, गरबीले, बिलायति, रसाल, गुसुलखाने, हिम्मत, इलाज, खजाने, मिजाज, दौलत, उमराव, नाहक, जरवाफ, हमाल, ख्याल, और दिवाल आदि सैकड़ो फारसी, अरबी और तुर्की शब्दो का प्रयोग भूषण की रचना मे मिलता है।

गोस्वामी तुलसीदास ने भी इन शब्दों का प्रयोग किया है परन्तु भूषण की रचना मे ऐसे शब्दो की अधिक मात्रा पाई जाती है। सामयिक परिस्थिति और मुसलमानो के ससर्ग से ऐसे प्रयोगों का होना स्वाभाविक है।

इन शब्दो के प्रयोगो मे भूषण की यह विशेषता हैं कि इन्हे तद्भव रूप मे ही भूषण ने ग्रहण किया है जैसे कि सर्वसाधारण मे प्रचलित हो गये थे, तथा ढल कर भाषा मे ऐसे घुल-मिल गये थे कि पढते समय वे जरा भी नही खटकते। अतः ये शब्द भाषा की समृद्धि बढाने मे भी सहायक हैं। इन शब्दो ने भाषा के विकास मे अच्छी सहायता की है तथा शब्दो का अभाव भी दूर हो जाता है।

भूषण ने कही-कही पर अपनी रचना मे पृथ्वीराज रासौ की डिगल-

प्रणाली का भी प्रयोग किया है अतः वहाँ पर इस महाकवि ने शब्दो को वैसा ही रूप दे दिया है। जैसे—

किन्निय, पब्बय, नैर, पुहुमि, किंत्ति, ठिल्लिय, मुद्ध, अद्ध, भ्रम्मि इत्यादि। ऐसे शब्दो के प्रयोग भूषण के समय मे साधारण बोलचाल में प्रचलित न थे, परन्तु प्राचीन पद्धति का नमूना दिखाने के विचार से तथा भाषा मे ओज लाने की दृष्टि से ऐसे शब्दो का प्रयोग किया गया हैं। परंतु ये नमूने अत्यल्प मात्रा मे भी मिलते हैं।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि भूषण को अपनी रचना मे अनुकूल भाषा का सगठन करने का भी प्रयास करना पडा था। फिर भी उनकी भाषा मे न तो कृत्रिमता दिखलाई देती है और न अस्वाभाविकता ही कही आने पाई है वरन् इस सगठन से एक मॅजी-मॅजाई भाषा का रूप हमारे सामुने आ जाता है जो कि वीररस के उत्कर्षपूर्ण भावो का भार वहन करने मे सर्वथा एव पूर्णतया समर्थ है। अतः भाषा की दृष्टि से भी भूषण का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण बन जाता है जो कि आगे के कवियो के लिये पथ प्रशस्त कर देता है।

भूषण ने अपनी रचना मे ब्रजभाषा का ही रूप रखा है और सर्वत्र उसी का प्रयोग किया है। परन्तु नमूने के रूप मे जहाँ कुछ डिगल का स्वरूप दिया है उसी प्रकार से खड़ी बोली का भी प्रयोग उनकी रचना मे दिखलाई देता है। इसके भी कुछ उदाहरण आप के समक्ष उपस्थित हैं—

(१) "अफजल खाँ को गहि जाने मयदान मारा,
बीजापुर गोलकुंडा मारा जिन आज है।"

(२) "बचैगा न समुहाने बहलोल खाँ अयाने,
भूषण बखाने दिल आनि मेरा बरजा।"

(३) "झुक्के निसान सक्के समर मक्के तक्क तुरुक्क भजि।"

(४) "औरङ्ग अठाना साह सूर की न मानै आनि,
जब्बर जुराना भयो जालिम जमाना को।"

(५) "शिवा की बड़ाई औ हमारी लघुताई क्यों,
कहत बार बार कहि पात्साह गरजा।"

इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि भूषण सब प्रकार की रचना करने में समर्थ थे और इसी से उनकी कविता में हम अनेक प्रकार के नमूने पाते हैं। अतः उनका शब्द-भाण्डार अक्षय था उसी प्रकार से भाषा पर भी उनका प्रभुत्व गहराई लिये हुए था जिसको वीररस के अनुकूल ढालने में भूषण की शक्ति अभूत पूर्व थी।

भूषण ने ब्रजभाषा की उकारान्त शब्द योजना को पसन्द किया था तथा भाषा में मनोहरता और माधुर्य लाने के लिये इसका अधिकता से प्रयोग किया है। ऐसे शब्दों की संख्या भी पर्याप्त है यथा—

गोतु, उदोतु, सोतु, होतु, बाधियतु, काधियतु, नाधियतु, काटियतु, वाहियतु इत्यादि-इत्यादि। इन शब्दों के प्रयोग में ब्रजभाषा का स्वरूप और भी आकर्षक एवं मनोहर बन जाता है। कुछ साहित्यिकों ने इस 'उकारान्त' प्रणाली को अवधी का रूप माना है जो कि अशुद्ध है। यह ब्रजभाषा की मानी हुई प्राचीन प्रणाली है जिसका सभी कवियों ने प्रयोग किया है।

इन उदाहरणों से हम भूषण के भाषा पर अधिकार का सरलतया अनुमान कर सकते हैं और कह सकते हैं कि वीररस के अनुकूल भाषा के संचयन में इस महाकवि को बहुत ही अच्छी सफलता मिली थी। इससे पूर्व ब्रजभाषा में शृङ्गारिकता की ही प्रधानता थी। इसलिये शब्द संगठन का स्वरूप भी वैसा ही बन गया था, परन्तु भूषण की राष्ट्रीय भावना ने इस शब्द-विन्यास में गहरा परिवर्तन कर दिया जिसके प्रभाव से भाषा में सजीवता और उत्कृष्टता दोनों का ही अच्छा प्रत्यक्षीकरण हो जाता है।

कहावतों और मुहावरों का प्रयोग

महाकवि भूषण ने अपनी रचना मे कहावतो और मुहावरो का स्वतन्त्रता पूर्वक खूब प्रयोग किया है। उसके कुछ उदाहरण यहाँ दिये जाते है—

(१) गई कटि नाक सिगरेई दिल्ली दल की।
(२) स्याही जाय सब पातसाही मुख झलकी।
(३) ग्रीवा नै जात। (४) छाती दरकति है।
(५) पुहुमी के पुर हूत। (६) भान्यौ साहि कौ इलाम।
(७) दत तोरि तखत तरे ते आयो सरजा।
(८) नाह दिवाल की राह न धाओ।
(९) कारे घन उमड़ि अँगारे बरसत हैं।
(१०) तृन ओठ गहे अरि जात न जारे।
(११) कुल चन्द कहावै।

इन मुहावरो का भूषण ने सफलता पूर्वक प्रयोग किया है तथा उन्हें वीररस के साँचे मे ढाल कर व्यक्त किया है। मुहावरो की भाँति कवि ने लोकोक्तियाँ भी अपनी रचना मे ठीक-ठीक बैठा दी हैं। इनके भी कुछ नमूने यहाँ उपस्थित हैं —

(१) सौ सौ चूहे खाय कै बिलारी बैठी तप कौं।
(२) काल्हि के जोगी कलींदे के खप्पर।
(३) अजौं रवि मडल रुहेलन की राह है।
(४) छागौ सहै क्यों गयन्द कौ झप्पर।
(५) जे परमेश्वर पर चढ़ैं तेह्री सांचे फूल।
(६) सूबा ह्वै दच्छिन चले धरे जात कित जीव।

गोस्वामी तुलसीदास की चौपाइयो की भाँति भूषण के अनेक छन्दाश लोकोक्तियाँ बन गई है। यथा—

(१) तीन बेर खाती ते वे तीन बेर खाती हैं।

(२) बिजन डुलातीं ते वे बिजन डुलाती हैं।

(३) नगन जड़ाती ते वे नगन जड़ाती है।

(४) थारा पर पारा पारावार यो हलत है। इत्यादि

उक्त उदाहरणो से स्पष्ट है कि भूषण ने अपनी रचना मे कहावतो तथा मुहावरो का पूर्ण सफलता के साथ प्रयोग किया है। इनके प्रयोग से भाषा का स्वरूप और भी निखर आया है।

शैली

महाकवि भूषण ने जहाँ भाषा के विकास मे मौलिक सफलता प्राप्त कर ली थी वहाँ अपनी शैली मे भी एक नया मोड देने का प्रयत्न किया है। भूषण ने अधिकाश मे विवेचनात्मक प्रणाली का अनुगमन किया है तथा सश्लिष्ट शैली भी उनकी रचना मे कम नही है जिसका मुख्य कारण यह है कि इस महाकवि ने महाकाव्य रचने का प्रयास नही किया। इस कार्य के लिये न तो उनके पास अवकाश था और न ऐसी परिस्थिति ही थी कि सूर तुलसी जैसी रचनाए निर्मित हो सकती। उस समय देश मे औरगजेबी शासन प्रचलित था जिसके प्रभाव से सारा देश सघर्षमय बन गया था। भूषण भी इस जीवन से अलग नही रह सकते थे अतः उसकी प्रतिक्रिया रूप मे इन्होने खुल कर भाग लिया था और उसका नेतृत्व स्वय ग्रहण कर उसकी साम्प्रदायिकता के विरुद्ध कडा मोरचा लिया था। इसीलिये भूषण की शैली मे उक्त दोनो रूपो का ही समावेश होना अनिवार्य था तथा विवरणात्मक शैली का अभाव ही दृष्टिगोचर होता है। फिर भी रायगढ वर्णन मे हमे इसका नमूना मिल जाता है।

विवरणात्मक शैली

जिस चित्रण मे यथातथ्य कथन इतिवृत्तात्मक होता है उसे ही विवरणात्मक शैली कहते हैं। महाकाव्यो मे इस शैली का बहुधा अनुगमन किया जाता है। क्योकि उसमे आदि से अन्त तक विवेचनात्मक प्रणाली का निर्वाह करना कठिन ही होता है अतः कडियो का सम्बध-विच्छेद न होने पावे इसीलिये बीच-बीच मे इस शैली द्वारा समन्वय कर दिया जाता है।

यदि पूरा वाक्य विवरणात्मक शैली मे अकित हो तो काव्य मे फीका-

पन आ जाता है और पढने मे ऊब बढ जाती है। उदाहरण के लिये गोरेलाल का छत्रप्रकाश दोहा और चौपाइयो मे कहा गया है। अतः वीर-रस के अनुकूल ये छन्द ही नही है फिर आदि से अन्त तक विवरणात्मक शैली का अनुगमन होने से न तो वैसी सजीवता और उत्साह का प्रस्फुटन ही हुआ है जैसा भूषण और मान की रचनाओं मे दृष्टिगोचर होता है और न उसमे साहित्यिकता के दर्शन ही होते हैं। अतः इस काव्य मे केवल नीरसता ही पल्ले पड़ती है। इसलिये उच्च कोटि के कवि इस शैली का प्रयोग कम मात्रा मे ही करते हैं और वह भी भावो की कडी जोडने के विचार से ही।

महाकवि भूषण ने केवल नमूना दिखाने के लिये ही शिवराज भूषण मे इस शैली का प्रयोग किया है। उसका कुछ नमूना यहाँ दिया जाता है जिससे पाठक समझ सकते है कि वे इस शैली को रचना मे भी पूर्ण दक्ष थे। देखिये—

कहुँ बावरी सर कूप राजत, बद्ध मनि सोपान हैं।
जहँ हस सारस चक्र वाक विहार करत सनान है।
कितहूँ विसाल प्रबाल जालन, जटित अगन भूमि है।

.. ..

"लवली लवग यलानि केरे, लाख हों लगि लेखिये।
कहुँ केतकी कदली करौंदा, कुद अरु करवीर हैं।
कहुँ दाख दाड़िम सेव कटहल तूत अरु जम्मीर है।"

... ...

पुन्नाग कहुँ कहुँ नाग केसरि, कतहुँ बकुल असोक है।
कहुँ ललित अगर गुलाब पाटल पटल बेला थोक हैं॥

शि० भू०, १६-२१

फुटकर छन्दो मे तो इस शैली का प्रयोग अच्छा माना ही नही जाता। इसलिये शिवराज भूषण मे इस प्रणाली का प्रयोग नहीं हुआ है। केवल

नमूने के रूप मे उक्त कथन कर दिया गया है। आलकारिक ग्रंथ मे तो इस शैली का प्रयोग सभव ही नही होता।

इसके अतिरिक्त एक बात यह भी थी कि भूषण को राज-दरबारो का सगठन करके उनसे काम लेना था। दरबारो मे काव्य-ग्रन्थो के सुनाने के लिये न तो अवसर ही होता है और न अवकाश ही। वहाँ तो कवित्त, सवैया, छप्पय, अमृत ध्वनि जैसे बडे छन्दों द्वारा ही प्रभाव डाला जा सकता है जिसमे चमत्कारपूर्ण रचना उत्कृष्ट रस से ओत प्रोत कर दी गई हो। इसके लिये दरबारी कान पहिले से ही अभ्यस्त हो रहे थे। महाकवि भूषण ने इसी प्रणाली का अनुगमन करके बडे बड़े राज दरबारो तक मे अपना पूरा सिक्का जमा रक्खा था। फिर भी विवरणात्मक शैली मे उनकी रचना का अभाव नही है उसका एक उदाहरण यहाँ प्रस्तुत है-

छूटत कमान और गोली तीर बानन के,
मुसकिल होत मुरचान हू की ओट में।
ताही समै सिवराज हांकि मारि हल्ला कियो,
दावा बांधि परा हल्ला वीर वर जोट में।
भूषन भनत तेरी हिम्मत कहाँ लौं कहौं,
किम्मत यहां लगि है जाकी भट झोट में।
ताव दै दै मूँछन कँगूरन पै पाँव दै दै,
अरि मुख घाव दै दै कूदि परै कोट में।

शिवाबावनी, ३१

इस छन्द मे भूषण ने शिवाजी के युद्ध-कौशल और किला सर करने के ढंग का बडा ही विशद् तथा ओजपूर्ण वर्णन किया है। ऐसे ही कुछ और भी विवरणात्मक उदाहरण दिये जा सकते हैं जिनमें वीररस का बहुत आकर्षक प्रस्फुरण हुआ है। परन्तु भूषण की महत्ता वास्तव मे विवेचनात्मक तथा सश्लिष्ट शैली मे ही समझनी चाहिए।

विवेचनात्मक शैली

भूषण की सबसे अधिक प्रसिद्ध और मँजी हुई शैली विवेचनात्मक ही है। इस शैली के प्रभाव से भूषण को वास्तव मे महाकवि भूषण की उपाधि से विभूषित किया गया था। इसके भी कुछ उदाहरण यहाँ उपस्थित है—

कवि कहैं करन करन जीत कमनैत,
अरिन के उर माँहि कीन्हौं इमि छेव हैं।
कहत धरेस सब धराधर सेस ऐसो,
और धराधरनि कौ मेटौ अहमेव है।
'भूषन' भनत महाराज सिवराज तेरो,
राज काज देखि कोऊ पावत न भेव है।
कहरी यदिल मौज लहरी कुतुब कहै,
बहरी निजाम के जितैया कहै देव है।

शि० भू०, छं० ५२

इस छन्द मे महाकवि भूषण ने शिवाजी के प्रभाव का अत्यन्त आकर्षक, ओजपूर्ण तथा मनोरंजक ढंग से विश्लेषण किया है। उन्होंने आदिलशाह, कुतुबशाह तथा निजामशाह द्वारा शिवाजी को क्रमशः 'कहरी' 'मौज लहरी' तथा 'जितैयादेव' कहला कर उसके प्रति तीनों राज्यों की वास्तविक भावना और व्यवहार का बडे ही कलापूर्ण ढग से प्रदर्शन किया है। इसमे कवि की तीव्र बुद्धि और विलक्षण प्रतिभा का बहुत ही सुन्दर परिचय मिल जाता है। निजाम की 'बहरी' उपाधि कौतूहल से रिक्त नही है।

नीचे के उदाहरणों मे कवि शिवाजी के आतंक का औरगजेब पर क्या प्रभाव पडा था उसका चित्रण इस प्रकार से करता है—

दौलति दिल्ली की पाय कहाये आलमगीर,
बब्बर अकब्बर के बिरद बिसारे तैं।

भूषन भनत लरि लरि सरजा सों जग,
निपट अभंग गढ़ कोट सब हारे तैं।
सुधर्यौ न एकौ साज, भेजि भेजि वे ही काज,
बड़े बड़े बेइलाज उमराव मारे तैं।
मेरे कहै मेरु करु सिवाजी सों वैर करि,
गैर करि नैर निज नाहक उजारे तैं।

शि० भू०, २८१

इस छन्द मे भूषण ने अकबर और बाबर के व्यवहार की प्रशंसा करते हुए उसी का अनुकरण करने को औरंगजेब से कहा है। साथ ही शिवाजी से लडने से उन हानियो का भी दिग्दर्शन करा दिया है जो कि उसे भुगतनी पडी है अर्थात् किले हाथ से निकल गये सरदार मारे गये और नगरो की बरबादी हुई। अतः हे औरङ्गजेब ! शिवाजी से मेल कर ले। कैसा विश्लेषणात्मक वर्णन है। एक उदाहरण और लीजिये—

सिह थरि जाने बिनु जावली जगल हठी,
भटी गज एदिल पठाय करि भटक्यौ।
भूषन भनत देखि भभरि भगाने सब,
हिम्मत हिये में धारि काहु वै न हटक्यौ।
साहि के सिवाजी गाजी सरजा समत्थ महा,
मद्गल अफजलै पञ्जा बल पटक्यौ।
ताविगिरि ह्वै करि निकाम निज धाम कहँ,
आकुत महाउत सु आंकुस लै सटक्यौ।

शि० भू०, ६३

इस छन्द मे कवि ने शिवाजी द्वारा अफजल खॉ के बध का बडा ही सागोपाग कथन किया है। जावली जङ्गल को सिह की थली के रूप मे अफजल खॉ को हाथी के रूप मे तथा शिवाजी को सिह के रूप में चित्रित कर एक बहुत ही समन्वयात्मक रूपक देने का प्रयत्न किया है। फिर बघनखा से उसे मार गिराने के कारण इसका विवेचन और भी महत्वपूर्ण

हुआ है जिसमे याकूत खा रूपी महावत अकुश खा को साथ लेकर वहाँ से बीजापुर को सटक जाता है। इस छन्द मे अकुश के प्रयोग से और भी सजीवता आ गई है। छन्द का एक एक शब्द विश्लेषण के स्वरूप को बहुत ही मार्मिक रूप मे अकित करता है अतः छन्द की वह शैली अत्यन्त ही आकर्षित एव हृदयग्राही है। ऐसे पचासो छद भूषण की रचना से दिये जा सकते हैं जिनमे इस विवेचनात्मक शैली का बहुत सुन्दर चित्रण हुआ है।

संश्लिष्ट शैली

जिस रचना मे विवरणात्मक तथा विवेचनात्मक दोनो शैलियों का मिश्रण होकर नवीन रूप मे रचना प्रत्यक्ष होती है उसे ही सश्लिष्ट शैली कहते है। भूषण की यह शैली भी बहुत सफल हुई है। इसके भी कुछ नमूने यहाॅ उपस्थित है—

दानव आयो दगा करि जावली,
दीह भयारो महा मद भार्‌यौ।
भूपन बाहुबली सरजा तेहि,
भेटवे कौं निरसक पधार्‌यौ।
बीछू के घाय गिरै अफजल्लहि,
ऊपर ही सिवराज निहार्‌यौ।
दाबि यो बैठो नरिंद अरिंदहि,
मानो मयंद गयन्द पछार्‌यौ।

शि० भू०, ६६

इस छद मे भूपण ने शिवाजी द्वारा अफजल खाॅ के वध का वर्णन विवेचनात्मक रूप मे न देकर सश्लिष्ट शैली मे दिया है। इसमे कवि ने उत्प्रेक्षा अलकार का सहारा लेकर घटना का स्वरूप बहुत ही आकर्षक बना दिया है। भूपण की यह शैली भी बहुत ही मॅजी हुई प्रतीत होती है और कवि रचना मे इसकी भी प्रधानता दिखलाई देती है। एक उदहारण और प्रस्तुत है—

आये दरबार बिललाने छड़ीदार देखि,
जापता करन हारे नेकहू न मन के।
भूषण भनत भौंसिला क आय आगे ठाढ़े,
बाजे भये उमराव तुजुक करन के।
साहि रह्यौ जकि सिव साहि रह्यौ तकि,
और चाहि रह्यो चकि बने ब्योंत अनबन के।
ग्रीषम के भानु सो खुमान कौ प्रताप देखि,
तारे सम तारे गये मूदि तुरकन के।
शि० भू०, ३८

इस कवित्त मे भी इस महाकवि ने एक उपमा का सहारा लेकर औरग-शिवाजी भेट का बहुत ही आतकपूर्ण चित्रण किया है जिसमे कवि ने सश्लिष्ट शैली का एक भव्य रूप देने का प्रयत्न किया है। अलकारो के कथन मे बहुधा कवि ने इसी शैली का अनुसरण किया है जो कि इसकी रचना मे अनायास ही आकर प्रविष्ट हो गये हैं। इनके कारण कवि की रचना मे कोई व्यवधान नही दिखलाई देता वरन् अर्थ के स्पष्टीकरण और भावो के विश्लेषण मे ये अधिक सहायक होते हैं और प्रवाह की सरसता यथावत् कायम रहती है।

शैली की विशेषताएं

भूषण की शैली की अनेक विशेषताए है वे युद्ध के बाहरी साधनो का ही वर्णन कर सतोष नही कर लेते वरन् मानव हृदय उमङ्ग भरने वाली भावनाओ के विश्लेषण की ओर ही उनका सदैव लक्ष्य रहता है। उनका शब्द विन्यास जहाँ वीररस के अनुकूल रहता है वहाँ उनका भाव-चित्रण भी उत्साहवर्द्धक और स्फूर्तिदायक तथा उत्तेजक है। इस प्रकार से शब्दो और भावो का सामञ्जस्य भूषण की रचना की सबसे बड़ी विशेषता है। यथा—

इन्द्र जिमि जभ पर बाड़व सुअभ पर,
रावन सदभ पर रघुकुल राज है।

तेज तम अंस पर कान्ह जिमि कंस पर,
त्यों म्लेच्छ बंस पर शेर शिवराज है।
शि० भू०, ५६

... ...

चमकती चपला न फेरत फिरंगे भट,
इन्द्र को न चाप रूप बैरख समाज को।
शि० भू०, ८१

...

दल के दरारे हूते कमठ करारे फूटे,
केरा कैसे पात बिहराने फनसेस के।
शि० बा०, ८

इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि भूषण की रचना में जैसा उत्कृष्ट एवं परिष्कृत वीररस का परिपाक हुआ है वैसा अन्यत्र नहीं दिखलाई देता।

भूषण के बहुत से छन्द इस प्रकार से वर्णित हैं मानो वे किसी के सामने पहुँचकर धमकाते से जान पड़ते हैं। देखिये—

बचैगा न समुहाने बहलोल खाँ अयाने,
भूषन बखाने दिल आनि मेरा बरजा।
तुझ से सवाई तेरा भाई सलहेरिपास,
कैद किया साथ का न कोई बीर गरजा।
साहिन के साहि उसी औरंग के लीन्हे गढ़,
जिसका तूं चाकर और जिसकी है परजा।
साहि का ललन दिल्ली दल का दलन—
अफजल का मलन सिवराज आया सरजा।
शि० भू०, १६१

तथा

बूड़ति है दिल्ली सो सँभारे क्यों न दिल्लीपति,
धक्का आनि लागौ सिवराज महा काल को।
शि० बा०, ३९

और भी—

भूषन सुकवि कहैं सुनौ नवरंगजेब,
ऐते काम कीन्हें तब पातसाही पाई है।

शि० बा०, ४५

इससे स्पष्ट है कि भूषण ने अपनी शैली मे इस प्रकार की नवीनता लाने का प्रयत्न किया था।

सूबेदार बहादुरखॉ को भी संबोधन कर वे कहते है:—

या पूना मे मत टिको खान बहादुर आय।
ह्याई साइत खान को दीन्हीं सिवा सजाय॥

शि० भू०, ३४०

इसी प्रकार से भूषण ने शिवा जी के सम्मुख मान कर भी बहुत-से छन्द कहे है जिनमे ईश्वर रूप की सर्व व्यापकता भी व्यक्त होती है। सम्मुख की स्थिति मे जो ओज और तेजस्विता व्यक्त होती है परोक्ष मे वैसा रूप नही आ सकता। अतः भूषण ने इस प्रणाली का भी अनुगमन किया है। यथा—

आजु शिवराज महाराज एक तुही,
सरनागत जनन कौ दिवैया अभय दान कौ।

. . . .

दिल दरियाव क्यो न कहैं कविराय तोहि,
तो मैं ठहरात आनि पानिप जहान कौ।

शि० भू०, ३४८

अतः स्पष्ट है कि भूषण की यह एक कथन-प्रणाली थी। वास्तव मे उनके सामने जाकर ये छन्द नही सुनाये गये थे।

भूषण ने प्रश्नोत्तर प्रणाली का भी अनुगमन किया था। उसके भी कुछ उदाहरण लीजिये—

को दाता को रन चढ्यो को जग पालन हार।
कवि भूषन उत्तर दियौ सिव नृप हरि अवतार।

शि० भू०, ३१४

सुनि सु उजीरन यों कह्यो सरजा सिव महाराज।
भूषन कहि चकता सकुचि नहि सिकार मृगराज॥

शि० भू०, ९४

ऐसे प्रश्नोत्तर भी सजीवता लाने मे अच्छी सहायता करते हैं साथ ही आकर्षक भी होते हैं। इस विषय के बहुत से उदाहरण दिये जा सकते हैं।

भूषण की शैली की एक विशेषता यह भी थी कि किसी बात को समझाने के लिये वे इतने अधिक उदाहरण दे डालते हैं कि विषय के समझने मे कोई कठिनाई शेष नही रह जाती। इसके भी कुछ उदाहरण ये हैं—

इन्द्र जिमि जम्भ पर बाड़व सु अम्भ पर,
....
त्यो मलेच्छ वश पर शेर शिवराज हैं।

शि० बा०, १

तथा—

शक्र जिमि शैल पर अर्क तम फैल पर,
....
मलेच्छ चतुरग पर चिन्ता मणि पेखिये।

फुटकर छन्द

इस विषय के भी उदाहरणो की भूषण की रचना मे कमी नही है। ऐसी रचनाओ मे भी ओज का प्रस्फुटन और उत्साहवर्द्धन पर्याप्त मात्रा मे मिलता है। महाकवि भूषण जिस समय अपनी रचना गम्भीर स्वर से दरबार मे सुनाते होगे उस समय सारा दरबार स्तम्भित हो जाता होगा। और उसका एक-एक शब्द श्रोताओ के मस्तिष्क मे देर तक घुमड़ता रहता होगा। सिर-चालन तो मस्ती की प्रथम भूमिका मात्र है। इससे हम भूषण की रचना की शैलियो का सरलतया अनुमान कर सकते हैं जिसमे विभिन्नता के प्रभाव से भी नीरसता नहीं आने पाती।

रसों का निरूपण

भूषण की रचना मे वीररस का इतना सुन्दर परिपाक हुआ है कि उससे जीवन शून्य व्यक्ति भी नवीन स्फूर्ति और उत्साह से आपूरित हो जाता है। इस महाकवि ने वीररस को मथ कर और उसके प्रत्येक अगो पर दृष्टि डाल कर अपनी कविता मे प्रतिभा के सहारे ऐसी उत्कृष्ट भावना भर दी है कि उत्साह साक्षात् स्वरूप धारण कर प्रत्यक्ष हो जाता है। इस महाकवि ने दान वीर, दया वीर, धर्म वीर, कर्म वीर, ज्ञान वीर और युद्ध वीर के रूप मे वीर रस के अनेक भेदो का चित्रण किया है जिनसे अंशतः रस उत्पादन तो होता ही है परन्तु यथार्थ मे उत्साह की पूर्ण रूप से सृष्टि करने वाला युद्ध वीर ही होता है और वही वीररस का प्रतीक माना जा सकता है। भूषण ने भी अपनी रचना मे इसी का विशेष वर्णन किया है। दान वीर का एक उदाहरण अवलोकन कीजिये—

सहज सलील सील जलद से नील डील,
पव्वय से पील देत नहिं अकुलात है।
भूषन भनत महाराज सिवराज देत,
कचन को ढेर सो सुमेर सो लखात है।
सरजा सवाई कासों करि कविताई तव,
हाथ की बड़ाई कौ बखान करि जात है।
जाकौ जस टक सातो दीप नव खड महि,
मंडल की कहा ब्रह्मड ना समात है।

शि० भू०, छन्द २२७

इस छन्द मे कवि ने शिवा जी के गज दान और स्वर्ण देने की उदा-

रता का बडा ही प्रभावशाली कथन किया है। अब दया वीर का भी एक नमूना लीजिये—

दिल्ली कौ हरौल भारी सुभट अडोल गोल,
चालिस हजार लै पठान धायौ तुरकी।
भूषन भनत जाकी दौर ही कौ सोर मच्यौ,
एदिल की सीमा पर फौज आनि ढुरकी।
भयो है उचाट करनाट नर नाहन कौं,
डोलि उठी छाती गोलकुडा ही के धुरकी।
साहि के सपूत सिवराज वीर तैन तव,
बाहुबल राखी पातसाही बीजापुर की।

शि० भू०, फुट० २४

इस छन्द में भूषण ने दया वीर के रूप मे शिवा जी द्वारा औरंगजेब के आक्रमण से बीजापुर राज्य की रक्षा करने की चर्चा की है जिसे दया के रूप मे मानना युक्ति-युक्ति है। अब धर्म वीर का भी एक उदाहरण लीजिये—

राखी हिन्दुआनी हिन्दुआन को तिलक राख्यौ,
अस्मृति पुरान राखे वेद विधि सुनी मैं।
राखी रजपूती राजधानी राखी राजन की,
धरा में धरम राख्यौ राख्यौ गुन गुनी मे।
भूषन सुकवि जीति हद्द मरहट्टन की,
देस देस कीरति बखानी तब सुनी मैं।
साहि के सपूत सिवराज समसेर तेरी,
दिल्ली दल दाबि कैं दिवाल राखी दुनी मैं।

इस कवित्त मे भूषण ने अत्याचारी औरंगजेब की धर्म विरोधी भावना को रोक कर शिवा जी द्वारा धर्म की रक्षा करने का उल्लेख किया है। इसमे धर्म वीर का चित्रण बड़ी सुन्दरता से किया गया है और अत्याचार का निराकरण भी कर दिया गया है। इस प्रकार से कवि की विचारधारा

का एक आकर्षक स्वरूप सामने आ जाता है जिसमे साम्प्रदायिकता न रह कर धर्म की रक्षा सामने आती है।

हमारे चरितनायक की रचना मे कर्म वीरता की भावना आदि से अन्त तक ओत-प्रोत है। शिवा जी के कार्यों का इतने विस्तार से वर्णन किया गया है कि कही भी पृष्ठ खोलने से हमे उसके दर्शन हो सकते हैं। देखिये —

साहि तनै सरजा खुमान सल हेरि पास,
कीन्हो कुरुखेत खीझि मीर अचलन सो।
भूषन भनत बलि करी है अरीन धरि,
धरनी पै डारि नभ प्रान दै बलन सो॥
अमर के नाम के बहाने गो अमर पुर,
चदावत लरि सिवराज के दलन सों।
कालिका प्रसाद के बहाने ते खवायो महि,
बाबू उमराव राव पसु के छलन सों॥

शि० भू० ९७

इस छन्द मे भूषण ने शिवा जी के वीरतामय कार्यों का कथन सल्हेर युद्ध के आधार पर किया है जिसमे अमर सिंह चदावत आदि अनेक बड़े-बडे सरदार औरगजेबी सेना के मारे गये थे तथा २२ बडे उमराव कैद कर लिये गये थे। इसे कवि कालिका देवी के लिये बलिदान के रूप मे अकित करता है। इससे शिवाजी की महत्ता और उत्साहपूर्ण कर्म वीरता का अच्छा दिग्दर्शन होता है।

अब भूषण के ज्ञान वीर का भी एक नमूना लीजिये, यथा—

चाहत निर्गुण सगुण कौं ज्ञानवन्त की बान।
प्रकट करत निर्गुण सगुण शिवा निवाजी दान॥

शि० भ०, १४३

इस प्रकार से ज्ञान की उत्कर्षता दिखलाते हुए निर्गुण एव सगुण दोनों प्रकार के ज्ञानियो का आदर शिवा जी अपने दान से करता है। साथ

ही पक्षपात हीनता का भी विश्लेषण इसमें आ जाता है जो कि हिन्दू मुसलमान दोनों प्रकार के ज्ञानियों के प्रति वह प्रदर्शित करता है।

अब युद्ध वीर का भी एक उदाहरण दृष्टिगत कीजिये जो कि वास्तव में वीररस के निरूपण के अन्तर्गत आता है। अन्य वीर भावनाएं दान, दया, ज्ञान, कर्म और धर्म की विचारधारा गौण रूप में ही वीररस के अन्तर्गत गिनी जा सकती हैं। अतः स्पष्ट है कि युद्ध के रूप में ही वीररस का सच्चा स्फुरण हो सकता है। यथा —

उमड़ि कुंडाल में खबास खान आये भनि,
भूषन त्यों धाये शिवराज पूरे मन के।
सुनि मरदाने बाजे हय हिहिनाने घोर,
मूंछें तरराने मुख वीर धीर जन के॥
एकै कहैं मार मार सम्हरि समर एकै,
म्लेच्छ गिरैं मार बीच वे सम्हार तन के।
कुंडन के ऊपर कड़ाके उठैं ठौर ठौर,
जीरन ऊपर के खड़ाके खडगन के॥

शि० भू०

इस छन्द में वीररस का ऐसा आकर्षक वर्णन किया गया है कि वीरता का साक्षात् मूर्त रूप सामने आ जाता है और उत्साह का पारावार-सा उमड़ने लगता है। वास्तविक सजीवता इसी के भीतर निहित है जो नवजीवन प्रदान कर सकता है।

वीररस के अन्तर्गत अन्य रसों का विवेचन

महाकवि भूषण की धारणा थी कि रसराज वास्तव में वीररस ही है, शृङ्गाररस नहीं। क्योंकि शृङ्गार तो जीवन को विकृत तथा क्षीण भी कर सकता है और वीररस उत्साह प्रदान कर कार्य क्षेत्र में बढ़ने के लिये अग्रसर करता है अतः उन्होंने इसी को रसराज माना है। इसके लिये एक प्रयत्न उन्होंने यह भी किया था कि वीररस के अन्तर्गत सब रसों को

व्यक्त करके उसकी महत्ता प्रकट कर दी थी। इसके पूर्व सभी आचार्य शृङ्गाररस को रसराज मानते चले आ रहे थे। अतः स्पष्ट है कि भूषण का यह प्रयत्न अभूत पूर्व तथा मौलिक था जिसने अनेक नयी-नयी उद्भावनाओ को जन्म देने का प्रयत्न किया था।

अब देखिये कि वीररस के अन्तर्गत शृङ्गाररस को कवि ने कितने सुन्दर और आकर्षक रूप मे चित्रित किया है। यथा—

मेचक कवच साजि बाहन बयारि बाजि,
गाढ़े दल गाजि उठे दीरघ दुखन के।
भूषन भनत समसेरे सोहैं दामिनी ह्वै,
महामद कामिनी के मान के कदन के।
पैदरि बलाका धुरवानि की पताका देखि,
दौरि उठी ब्रज बधू सूने ही सदन के।
न करु निरादर पिया सों मिलु सादर ये,
आये वीर बादर बहादुर मदन के।

शि० भू०, फुट० ४६

इस छन्द मे कवि ने बादलो और सैनिको का रूपक देकर शृङ्गाररस की भावना को वीररस मय बनाने का प्रयत्न किया है तथा दिखला दिया है कि वीररस की महत्ता शृंगार पर कितनी गहराई तक प्रभाव डाल सकती है।

अब देखिये कि हास्यरस को वीररस के सहयोगी रूप मे किस प्रकार से चित्रित किया जा सकता है। इसका भी नमूना देखिये—

मारि कर पात साही खाक साही कोनी जिन,
छीनि लीनी छिति हद सब सरदारे की।
खिसि गई सेखी फिसि गई सूरताई सबै,
हिसि गई हिम्मति ही हियरे हजारे की।
भूषन भनत भारो धौंसा की धुकार बाजै,
गरजत मेघ ज्यों बरात चढ़ै भारे की।

दूल्हौ सिवराज भयौ दच्छिनी दमाकदार,
दिल्ली दुलहिन भई सहर सितारे की ।
शि० बा०, ३६

इस छन्द में शिवा जी की वीरता का चित्रण करते हुए दिल्ली को सितारा नगर की दुलहिन के रूप मे कथन करके विनोद की मात्रा को गहरा रूप दे दिया है। इस प्रकार से वीररस के अन्तर्गत हास्यरस का स्पष्टीकरण करके छन्द में अच्छी सजीवता भर दी है।

अब अवलोकन कीजिये कि इस महाकवि ने अद्भुत रस को वीररस के सहयोगी रूप मे किस प्रकार से अंकित किया है। यथा—

तादिन अखिल खल भलै खल खलक में,
जादिन शिवाजी गाजी नेक करखत है।
सुनत नगारन अगार तजि अरिन की
दारगन भाजत न बार परखत हैं।
छूटे बार बार छूटे बारन ते लाल देखि,
भूषन सुकवि बरनत हरषत है ।
क्यों न उत्पात होहिं बैरिन के झुंडन में,
कारे घन उमड़ि अँगारे बरसत हैं।
शि० भू० छं० १६०

इस मे "कारे घन उमडि अँगारे बरसत हैं" पदाश ने इस छद को आश्चर्य मय बना दिया है जो कि वीररस के साथी रूप मे भयानक रस के अन्तर्गत दिखलाया गया है।

इसके पश्चात् वीररस के अन्तर्गत करुणारस का भी एक उदाहरण लीजिये जिसमे करुणारस की एक गहरी छाप भरी हुई है।

शुंडन समेत काटि विहद मतगन कौं,
रुधिर सौं रंग रन मण्डल में भरिगौ।
भूषन भनत तहाँ भूप भगवन्तराय,
पारथ समान महाभारत सौं करिगौ।

मारे देखि मुगल तुराव खान ताही समय,
काहू अस जानी मानों नट सौ उचरिगौ।
बाजीगर कैसी दगाबाजी करि बाजी चढि,
हाथी हाथा हाथी ते सहादति उतरिगौ।

भू० ग्र०, छन्द फुटकर

इस छन्द मे "सहादति उतरिगौ" मे करुणरस कूट-कूट कर भरा है जो भगवन्तराय की विजय मे बाधक बन मृत्यु का कारण हुआ था। यह पूरा छद वीररस से ओत प्रोत है। परन्तु अन्तिम-पदाश ने उसे करुणा से युक्त कर दिया है।

एक छन्द और दृष्टिगत कीजिये जिसमे शान्तरस को वीररस के अन्तर्गत लाकर रखा गया है। यथा—

देह देह देह फिर पाइये न ऐसी देह,
जौन तौन जो न जानै कौन जौन जाइबो।
जेते मनि मानिक है ते ते मन मानिक है,
धराही मे धरे ते तो धरा ही धराइबो।
एक भूख राखै भूख राखै मति भूखन की,
यही भूख राखै भूप भूखन बनाइबो।
गगन के गौन जम गिनन न दै है नग,
नगन चलैगौ साथ नग न चलाइबो।

भू० ग्र०, फुट० ५५

यह छन्द आदि से अन्त तक करुणरस से ओत-प्रोत है। केवल एक पदाश ने उसमे वीररस की गहरी पुट देदी है। "भूप भूखन बनाइबो" मे राजनीतिक आधार पर राजाओ का निर्माण ही भूषण की भावना का मूलाधार था और इसी ने इस छन्द मे वीररस की विचारधारा को महत्व प्रदान किया है। इस प्रकार से वीररस के अन्तर्गत बडे ही अच्छे रूप मे करुणरस का चित्रण किया है जिससे कवि की क्रांतिकारी भावना भली भॉति प्रदर्शित होती है।

साहित्यशास्त्र मे रौद्ररस को वीररस का सहयोगी कहा गया है। इसका भी एक नमूना लीजिये—

सबन के ऊपर ही ठाढ़ौ रहिबे के जोग,
ताहि खरौ कियौ जाय जारन के नियरे।
जानि गैर मिसिल गुसीले गुस्सा धारि मन,
कीन्हो न सलाम न बचन बोले सियरे।
भूषन भनत महावीर बलकन लाग्यौ,
सारी पातसाही के उड़ाय गये जियरे।
तमकते लाल मुख सिवा कौ निरखि भये,
स्याह मुख नौरग सिपाह मुख पियरे।'

शि० ग्र०, फुटकर १७

इस कवित्त मे आदि से अन्त तक रौद्ररस ओत-प्रोत है जो कि वीर रस की महत्ता को उग्र रूप मे व्यक्त करता है। इसी प्रकार से भयानक रस का भी अवलोकन कीजिये—

मांगि पठायौ सिवा कछु देस वजीर अजानन बोल गहेना।
दौरि लियौ सरजा परनालौ यों भूषन जो दिन दोय लगेना।
धाक सों खाक बिजैपुर भो मुख आइगो खान खवास के फैना।
भै भर की कर की दर की धर की दिल आदिल साह की सैना॥

शि० भू०, छन्द २५५

इस छन्द मे वीररस के सहायक रूप मे भयानकरस का चित्रण किया है। जो कि शास्त्रीय विधान माना गया है। इस छन्द मे भयानकरस का अच्छा परिपाक हुआ है जो कि शिवा जी के आतंक तथा आक्रमण से बीजापुर की सेना पर पडा था। अब एक उदाहरण वीभत्स रस का भी लीजिये जो कि वीररस की गहरी भावना को व्यक्त करता है जिसे मार-काट और विकट युद्ध के परिणाम रूप मे माना जाता है। यथा—

दिल्ली दल दलै सलहेरि के समर सिवा,
भूषन तमासे आय देव दमकत है।

किल कति कालिका कलेजे की कललि करि,
करिकैं अलल भूत भैरों बमकत हैं ॥
कहूँ रुंड मुंड कहूँ कुंड भरे श्रोनित के,
कहूँ बखतर केरि झुंड झमकत हैं।
खुले खग्ग कंध धरि ताल गति बंध परी,
धाय धाय धरनि कबध धमकत हैं ॥
शि० बा०, २६

इस छन्द मे महाकवि भूषण ने सलहेर युद्ध का वर्णन करते हुए वीभत्सरस का बड़ा ही आकर्षक चित्रण किया है। इस प्रकार से इस महाकवि ने केवल वीर रस का चित्रण करके ही इतिश्री नही कर दी वरन् उसके शास्त्रीय विधान और उसकी महत्ता को भी भली भाँति व्यक्त कर दिया है। यही नही इससे भी बढ़ कर वीररस को रसराज के पद पर प्रतिष्ठित करने का भी प्रयत्न किया है। जिसे वैदिक काल के पश्चात् से शृंगार रस ने अधिकृत कर रखा था। भूषण की यह विशेषता अन्य कवियों की अपेक्षा इसे भिन्न रूप दे देती है जो कि भारतीय परंपरा के मूल रूप से अधिक मेल खाती है और हमारी सस्कृति को नवोत्थित रूप देकर समाज को नवजीवन प्रदान करती है।

आलंकारिता

जहाँ भूषण का स्थान उच्च कोटि की राजनीतिक भावनाओ को विस्तार देने, उत्कृष्ट वीररसमय साहित्य के निर्माण करने तथा अनेक समाज सुधारक विचार धाराओ को प्रस्फुटित कर नवजीवन प्रदान करने में प्रमुखता रखता है वहाँ उन्होंने शास्त्रीय विधान अलकार शास्त्र आदि में भी एक अनोखा मोड देने का प्रयत्न किया है। इस विषय मे इस महाकवि ने हिन्दी अलकार शास्त्रियो का ही पथ-प्रदर्शन देने का प्रयत्न नहीं किया वरन् सस्कृत आचार्यो की स्थापनाओ को भी विकसित किया है।

भूषण की इस महत्ता को न समझने के कारण अनेक विद्वानो ने भूषण की रचना मे बहुत-से अलकार सबधी दोष ढूँढ निकाले हैं और बड़े गर्व के साथ लिखा है कि भूषण ने अलकारो के अशुद्ध लक्षण लिखने तथा भ्रमपूर्ण उदाहरण देने की भी पर्याप्त भूलें की हैं। एक सज्जन ने उक्त दोष भूषण कवि के सिर मढते हुए लिखा है—

"इन्होने (भूषण ने) सीधे किसी सस्कृत अलङ्कार ग्रथ को भी अपना आधार नहीं बनाया, वरन् हिन्दी के कवियो मे अलङ्कारों के सबध मे जो सामान्य भावना प्रचलित थी उसी को पकडा है। यही कारण है कि भूषण के लक्षण और उदाहरण कई जगह अस्पष्ट और दूषित हैं।" इसी प्रकार के अनेक आक्षेप भूषण के अलकारो के विषय मे किये गये है। एक अन्य विद्वान् ने पचम प्रतीप के लक्षण को अशुद्ध ठहराया है और कहा है कि यह परिभाषा प्राचीन अलङ्कार शास्त्रो के अनुरूप नही है। इस पर हमे गभीरता से विचार करना है कि ये आक्षेप कहाँ तक उचित है और उसकी वास्तविकता का रूप क्या है ?

भूषण ने 'पचम प्रदीप' का लक्षण इस प्रकार से लिखा है—

"हीन होय उपमेय सो नष्ट होत उपमान।"

इसी लक्षण के चन्द्रालोक कार ने इस भाँति लिखा है—

"प्रतीप मुपमानस्य कैमथ्र्य मपि मन्यते ।"

अब चन्द्रालोक के प्रतीप का उदाहरण भी दृष्टिगत कीजिये—

यत्वन्नेत्र समान कान्ति सलिले मग्न तदिन्दीवरम् ।
मेघैरन्तरितः प्रिये तव मुखच्छायानुकारी शशी ।
ये ऽपित्वद् गमनानुसारि गतयस्ते राज हंसा गता ।
स्तव सादृश्य विनोद मात्र मपि मे दैवेन न क्षम्यते ।

(कुवलयानन्द पृ० १२)

चन्द्रालोककार ने पचम प्रतीप के लक्षण मे 'कैमथ्र्य मपि' कह कर स्वय द्विविधा पैदा कर दी है । इसका कारण भी है क्योकि लक्षण आक्षेप के अन्तर्गत आ जाता है जिसका लक्षण साहित्यदर्पणकार ने इस प्रकार से दिया है—

वस्तुना वस्तु मिष्टस्य विशेप प्रतिपत्तये ।
निषेधा मास आक्षेपो वक्ष्य माणोक्तिगो द्विधा ॥

(साहित्यदर्पण दशम् परिच्छेद, पृ० २०२

इसी लक्षण को चन्द्रालोक कार ने इस प्रकार से लिखा है—

निषेधा मास माक्षेप बुधा. केचिन् मन्यते ।

(कुवलयानन्द, प० १६)

यहाँ स्पष्ट है कि भूषण ने पचम प्रतीप को आक्षेप की सीमा से बचाने और द्विविधा से अलग रखने के लिये ही इस परिभापा को उसी रूप मे ग्रहण न कर यह कहा है कि "यदि उपमान उपमेय से हीन हो जाय अथवा बिल्कुल लुप्त हो जाय तो पचम प्रतीप होता है ।" भूषण को यह लक्षण 'चन्द्रालोक' के प्रथम प्रदीप के उक्त उदाहरण के ध्यान मे आने से ही सूझा है । उसी भाव पर भूपण का लक्षण घटित होता है जो 'चन्द्रालोक' के 'प्रथम प्रतीप' के लक्षण "प्रतीप मुप मानस्योपमेयत्व प्रकल्पनम्" से भिन्न है । इस लक्षण की रचना के समय भूपण के मस्तिष्क मे तीन भावनाएँ काम कर रही थीं, वे ये हैं—

(१) उसे कैमर्थ्य से बचाना जिससे उनका लक्षण 'आक्षेप' के अन्तर्गत न आ जाय। (२) 'चन्द्रालोक' के प्रथम उदाहरण का समावेश कराना और (३) द्विविधा मे न रह कर लक्षण को स्पष्ट कर देना।

'कैमर्थ्य' रहने से इसका आक्षेप मे कही अन्तर्भाव न हो जाय इसी को बचाने के लिये भूषण ने कैमर्थ्य के स्थान पर 'हीन' शब्द रक्खा है। भूषण का भाव यह है कि पचम प्रतीप के पर्यवसान मे उपमान की हीनता किसी न किसी प्रकार से स्पष्ट रूप मे होनी आवश्यक है। अधिकतर उपमेय के आगे उपमान की तुच्छता दिखाने से वह व्यक्त होती है अतः इस दृष्टि से भूषण का लक्षण बिल्कुल निर्दोष है।

पंचम प्रतीप के प्रथम उदाहरण मे भूषण के "तो सम हो सेस सो तो वसत पताल लोक, ऐरावत गज सो तो इन्द्रलोक सुनिये।" आदि छन्द मे उपमान के स्पष्ट रूप से लुप्त होने का भाव व्यक्त किया गया है। उसी को भूषण ने नष्ट शब्द से व्यक्त किया है। यह उदाहरण 'चन्द्रालोक के प्रथम प्रतीप के उदाहरण के ढग पर लिखा गया है।

पचम प्रतीप के दूसरे और तीसरे उदाहरणो मे भूषण ने "कुंद कहा पय वृन्द कहा अरुचन्द कहा सरजा जस आगे।" तथा "यों सिवराज कौ राज अडोल......कुँडलि कोल कछू न कछू है।" मे उपमान की तुच्छता प्रकट की है। न्यून और हीन शब्दो मे महान अन्तर है इसी से भूषण ने अपनी परिभाषा मे 'हीन' शब्द का प्रयोग किया है। अतः इस परिभाषा मे व्यतिरेक की व्याप्ति कभी हो ही नही सकती। फिर भी "काव्य प्रकाशकार मम्मट" ने उपमालकार के प्रकरण मे अपने ग्रथ 'काव्य प्रकाश' के पृ० ४४६ पर लिखा है :—

"रसादिस्तु व्यङ्ग्योऽर्थोऽलङ्कारान्तश्च सर्वथा।
व्यभिचारी त्यगण यित्यैव तद लकारा उदाहृता॥"

इस कथन से स्पष्ट है कि एक अलकार के साथ अन्य अलंकार अवश्य रहते है और वे अनायास ही आ जाते हैं परन्तु उनमे उदाहरण

स्वरूप प्रधान अलकार ही लिया जाता है। अतः व्यतिरेक की शका पैदा करना निमू'ल है।

इस विवेचन से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि लक्षण की भूल भूषण की नही है वरन् चन्द्रालोककार की है जिसे आलोचक महोदय भूषण के सिर थोप रहे है। यहाँ पर यह कह देना अनुचित न होगा कि हिन्दी मे महाकवि भूषण एक प्रमुख आचार्य हुए है जिन्होने सस्कृत आचार्यों का अन्धानुसरण नही किया वरन् उनकी भूलो का परिमार्जन करके शास्त्रानुमोदित सशोधन द्वारा अपने आचार्यत्व की मर्यादा को अक्षुण्ण बनाये रखा है। इससे हम भूषण की वास्तविक योग्यता का अनुमान कर सकते हैं। इसी प्रकार से अन्य अलकारो के विषय मे भी भूषण के लक्षणो एवं उदाहरणो मे जो दोष आलोचको द्वारा दिखलाये गये है वे उनकी असावधानी के द्योतक हैं। आवश्यकता इस बात की है कि अलंकारो की व्याख्या रूप से शिवराज भूषण पर एक विस्तृत विवेचनात्मक ग्रंथ लिखा जाय तभी उन सब शकाओ का समाधान भी हो सकेगा जो भूषण पर किये जाते हैं। साथ ही अलंकारो की शुद्ध परिभाषा और उदाहरणो का समन्वय भी ठीक-ठीक हो सकेगा।

महाकवि भूषण की उदार दृष्टि

समाज सुधार की भावना

महाकवि भूषण समाज-सुधार के प्रबल पक्षपाती थे। वर्ण-व्यवस्था की वर्तमान सकुचित जन्मपरक प्रणाली को वे राष्ट्र के लिये घातक समझते थे। स्त्री जाति की मान-मर्यादा सुरक्षित रखने के लिये वे सब कुछ उत्सर्ग करने के लिये तैयार रहने के लिये उपदेश देते थे। राष्ट्र-निर्माण के लिए वे केवल हिन्दू-मुसलिम मेल के ही समर्थक न थे वरन् आपस मे विवाह सम्बन्ध स्थापित कराना भी उनका लक्ष्य था जिसकी पूर्ति कार्य रूप मे परिणत करके उन्होने प्रत्यक्ष कर दी थी।

ज्ञान का विस्तार कर अन्ध विश्वासो को दूर करना वे अपना प्रधान कर्त्तव्य समझते थे। न्याय की महत्ता को वे सर्वोपरि समझते थे। नीच-ऊँच के भेदभाव को वे दूर करना चाहते थे। यहाँ तक कि अनीश्वरवादी सत्यनिष्ठ को भी वे आदरणीय मानते थे। मानव मे उदारता, सत्पात्र को दान, समता का आदर्श तथा महानतम तपस्वी की भी अहमन्यता को असहनोय बतलाते थे। समाज मे उत्साह और साहस भरने का प्रयत्न उनकी सर्वोत्कृष्ट देन है। इन्हो भावनाओ को क्रियात्मक रूप देने मे भूषण की महत्ता निहित है। इन पर विस्तार से विचार करने के लिये हमे इस महाकवि की रचना का आलोडन एवं विवेचन करने की आवश्यकता है—

वर्ण-व्यवस्था के सुधार और राष्ट्र-निर्माण के लिये वे मुसलमानों से विवाह सम्बन्ध की व्यवस्था देते हैं। इसके लिये व्यवस्था देकर ही चुप नहीं बैठ जाते वरन् कार्य रूप मे परिणत भी कर देते हैं, यथा—

भेजैं लिखि लगन शुभ गनिकु निजाम बेग,
इतैं गुजरात उतैं गंग ज्यो पतारा की।

एक जस लेत अति फेरा फिरि गढ़हू कौं,
खडि नव खड दिये दान ज्यो ऽब्र तारा की।
ऐसे ब्याह करत बिकट साहू साहन सों,
हद हिन्दुश्रान जैसे तुरुक ततारा की।
आबत बरात सजे ज्वान देस दच्छिन के,
दिल्ली दुलहिन भई सहर सितारा की॥

इससे स्पष्ट है कि भूषण हिन्दू-मुसलमान विवाह को उचित ही नहीं समझते थे वरन् राष्ट्र-निर्माण के लिये इसे अत्यन्त आवश्यक ठहराते थे साथ ही साहू छत्रपति के समर्थन की भी वे चर्चा करते हैं। इस सम्बन्ध मे महाराजा छत्रसाल की वेश्या से उत्पन्न कन्या मस्तानी का विवाह साहू के मत्री बाजीराव पेशवा से करवा कर उन्होंने क्रियात्मक रूप भी दे दिया था जिसमे साहू जी भी पूर्ण रूप से सहमत थे। यह मस्तानी अत्यन्त सुन्दर, गुणवती और वीराङ्गना थी। सैन्य सचालन मे भी इसने दक्षता प्राप्त कर ली थी। अतः पेशवा को युद्धो मे इससे बड़ी सहायता मिलती थी। इससे दो पुत्र भी उत्पन्न हुये थे। परन्तु महाराष्ट्र ब्राह्मणों के विरोध के कारण इन बालको को मुसलमानी रूप देने के लिये वे बाध्य हुए थे। यद्यपि भूषण के उद्योग से जयपुर नरेश सवाई जयसिंह ने काशी तथा अन्यत्र के पडितो से इनके हिन्दू रूप मे स्वीकृति देने की व्यवस्था भी दिलवाई थी जिसे क्वीस कालेज बनारस ने सम्पादन कर प्रकाशित भी करवा दिया है। परन्तु महाराष्ट्रो की कट्टर पन्थी भावना इसमे बाधक बन कर ही अग्रसर हुई थी।

हमारे चरित नायक ने जयपुर नरेश राजा मानसिंह और राजा बीरबल की इसीलिये प्रशसा की थी क्योंकि ये हिन्दू मुसलिम मेल के पक्षपाती थे। जयपुर नरेश ने तो बीरबल की सलाह से अपनी बुआ का विवाह अकबर से करके इस उदाहरण को स्थापना ही कर दी थी जिसका अनुकरण चित्तौड़ को छोड़ कर शेष राजस्थान के सभी राजाओ ने किया था। इसी

भावना को महत्व देने के लिये भूषण ने राजा मान की प्रतिष्ठा अत्यन्त ओजस्वितापूर्ण शब्दो मे की है, देखिए—

अकबर पायो भगवन्त के तनै सौं मान,
बहुरि जगत सिह महा मरदाने सों।
भूषण त्यों पायौ जहाँगीर महासिह जू सो,
साहि जहाँ पायो जयसिह जग जाने सो।
अब औरङ्गजेब पायो रामसिह जू सो,
औरौ दिन दिन पैहै कूरम के माने सों,
केते राव राजा मान पावैं पात साहन सो,
पावै बादशाह मान मान के घराने सों॥

भूषण ग्रन्थावली, फुटकर छन्द ३४

इससे स्पष्ट है कि मान सिंह द्वारा अकबर से सम्बन्ध की स्थापना होने से ही भूषण ने मान के वश की प्रतिष्ठा निर्धारित करवाई है। महाराजा मानसिह की विवाह सम्बन्धी नीति को भूषण प्रशसनीय मानते थे इसी से उक्त छन्द मे मान की तथा शिवराज भूषण के छन्द २७ मे राजा बीरबल की उन्होने भूरि-भूरि प्रशसा की है।

बुन्देल नरेश महाराजा छत्रसाल के गुरु स्वामी प्राणनाथ के विचार भी भूषण की भावना के अनुकूल थे। वे भी ऐसे विवाह करवा कर राष्ट्र-निर्माण के लिये क्षेत्र प्रस्तुत करने को उत्सुक थे। इसी उद्देश्य से उन्होने फुलजम (अजीर रास) नामक एक बडे ग्रंथ की रचना की थी। इसमे हिन्दू-मुसलमानो के मिश्रित भावो को एक रूपता देने के लिये कृष्ण और मोहम्मद को समान रूप मे चित्रित करने के लिये बड़े विस्तार से विवेचना की गई है। यह रचना पन्ना (बुंदेलखड) के एक मन्दिर मे तथा अमीनुद्दौला पबलिक लाइब्रेरी लखनऊ मे हस्तलिखित रूप मे प्रस्तुत है। परन्तु आजकल लाइब्रेरी वाली प्रति वहाँ दृष्टिगोचर नही होती।

भूषणकालीन ये घटनाए तत्कालीन राजनीतिक और सामाजिक परिस्थिति पर अच्छा प्रकाश डालती है। प्राणनाथ स्वामी के सम्बन्ध मे

पन्ना मे यह किवदन्ती है कि शुजाअ (औरङ्गजेब का भाई) ही अराकान से भाग कर सिंध पहुँचा था और वहाँ से बुन्देलखड मे आकर महाराजा छत्रसाल के गुरु के रूप मे उक्त नाम से प्रसिद्ध हुआ था। इसी से अजीर गस की भाषा मे सिंधी भाषा का पुट अधिक मात्रा मे मिलता है। आवश्यकता इस बात की है कि इनका गभीरता से अध्ययन एव अन्वेषण किया जाय ताकि ये रचनाएँ राष्ट्र-निर्माण मे हमारी अधिक सहायता कर सकें।

भूषण मुसलमानो को लडकियाँ देकर ही एक तरफा सम्बन्ध नहीं रखना चाहते थे वरन् उनकी अधिक लड़कियो को हिन्दू समाज मे विवाहित देख कर ही वे राष्ट्रीय पथ की प्रशस्ति मानते थे। इसीलिये उन्होने इस सुधार पर अधिक बल दिया है। साहू औरङ्गजेब की जेल मे रहने के कारण मुसलमानी सस्कृति से भी खूब परिचित थे।

इस विषय मे पेशवा के विवाह के अतिरिक्त एक दूसरा उदाहरण भी मिलता है जिसमे भूषण की सम्मति को प्रमुखता देकर ही विवाह सम्बन्ध निर्धारित हुआ था। जब भगवन्तराय खीची ने कोड़ा जहानाबाद के मुसलमान सूबेदार को मार कर उसके किले पर अधिकार किया था तब लूट मे उस सूबेदार की लड़की भी मिली थी जिसका विवाह खीची ने भूषण की सलाह से अपने राजकुमार रूप सिंह से कर लिया था ये दो ऐतिहासिक तथ्य होने से हम भूषण की भावना का भली प्रकार से अनुमान कर सकते है। साथ ही उनकी सुधारपद्धति का स्पष्टीकरण भी इसी आधार पर किया जा सकता है।

भूषण के हृदय मे स्त्री-मर्यादा और उसकी रक्षा का प्रमुख स्थान था। इसीलिये वे प्राणो की बाजी लगा कर भी स्त्री मान और उसकी मर्यादा की रक्षा करना उचित समझते है। इसीलिये वे शिवराज भूषण मे लिखते हैं—

> जाहु जनि आगे खता खाहु मति यारो गढ़—
> नाह के डरन कहैं खान यों बखान कै।

भूषण खुमान यह सो है जेहि पूना माहि,
लाखन मे सासता खाँ डार्‌यौ बिन मान कै।
हिन्दुआन द्रुपदी की इज्जति बचैवे काज,
झपटि विराट पुर बाहर प्रमान कै।
वहै है सिवाजी जेहि भीम अकेले मार्‌यो,
अफजल कीचक कौं कीच घमसान कै।

शि० भू०, ३३

इस छन्द के तीसरे चरण मे द्रोपदी की मान रक्षा के लिये विराट नगरी के बाहर भीमसेन ने कीचक सेनापति का किस प्रकार बध किया था इसका इस छन्द मे बडा ही सुन्दर विश्लेषण किया है। इसी प्रकार से शिवा जी द्वारा भारतीय समाज की मान-मर्यादा बचाने के लिये अफजल खॉ रूपी कीचक का अकेले ही बध कर डाला था। इसके पश्चात् पूना मे शाइस्ता खॉ को भी अपमानित कर तथा वहॉ से भगा कर दक्षिण की मर्यादा सुरक्षित कर दी थी। इससे स्पष्ट है कि भूषण स्त्री समाज की रक्षा और उसकी मर्यादा को कितना महत्व देते थे। शिवा जी ने भी अफजल का बध और शायस्ता खॉ की दुर्गति करके स्त्री समाज की रक्षा मुख्यतया तथा पूरे दक्षिण की रक्षा साधारणतया की थी। औरङ्गजेबी सेना के अत्याचार स्त्री समाज पर अत्यधिक होते थे अतः इसे बहुत महत्व दिया गया है।

महाकवि भूषण ने छोटे-छोटे सकेतो द्वारा अपनी रचनाओ मे अनेक मार्मिक भावनाएँ भर दी हैं। इसीलिये वे शिवाजी की प्रशसा करते हुए कहते हैं—

"आजु यहि समै महाराज सिवराज तुही,
जगदेव जनक जजाति अंबरीक सो।"

शि० भू०, ३४१

इस पद्याश मे भूषण शिवा जो की चार राजाओं से तुलना करते हुए राजा जगदेव, राजा जनक, राजा ययाति और राजा अबरीष

की उपमा देते है। राजा जगदेव एक परमार राजा था जो अत्यन्त वीर, युद्ध प्रिय और साहसी था। राजा जनक मिथिला नरेश सीता के पिता थे जिनकी आध्यात्मिक भावना एव ब्रह्मज्ञान की स्थिति अत्युच्च कोटि की थी। राजा ययाति एक अत्यन्त समाज सुधारक नरेश थे जिन्होने अपने गुरू शुक्राचार्य की कन्या देवयानी से विवाह कर सकुचित विचारधारा का परित्याग कर दिया था तथा वर्ण-व्यवस्था का नया स्वरूप प्रतिपादन कर राष्ट्र के लिये नव आदर्श प्रदान किया था चौथा उदाहरण अबरीष का है जिसने दुर्वासा ऋषि के शाप की भी अवहेलना कर एक सत्यनिष्ठ भावना राष्ट्र के लिए स्थापित की थी। इन उदाहरणो से स्पष्ट हो जाता है कि भूषण वीर भावना के साथ आध्यात्मिकता, समाज सुधार तथा वर्ण-व्यवस्था की उत्कृष्ट योजना राष्ट्र-निर्माण के लिये अत्यन्त आवश्यक मानते थे साथ ही उच्च ज्ञान और तप से उत्पादित घमड को भी वे जड-मूल से मिटा देना चाहते थे। इसी कारण वे उक्त चारो उपमाओ को अत्यन्त महत्वपूर्ण ठहराते हैं।

इसी प्रकार से भूषण ने एक अन्य उदाहरण द्वारा ऊपर की भावना से अलग दूसरी विचारधारा समाज को देने का प्रयत्न किया है। इसी लिये वे कहते हैं—

भूलिगे भोज से विक्रम से,
भई बलि वेनु की कीरति फीकी। शि० भू०, २६७

इस छन्दाश मे भूषण कवि शिवा जी मे अन्य चार गुणो का आरोप करते हुए राजाभोज, राजा विक्रमादित्य, राजा बलि तथा राजा वेणु की तुलना शिवाजी से करते हैं और उसे इन चारो से ही अधिक प्रभावशाली एवं महत्वपूर्ण ठहराते है।

राजा भोज धारा नगरी का राजा था जो कि अत्यन्त विद्याव्यसनी सस्कृत भाषा का उद्धारक एवं कवियों का महान आश्रयदाता था। कवि भूषण ने शिवाजी को राजा भोज से भी उत्तम विद्या प्रेमी एव कवियो का आश्रयदाता ठहराया है। राजा विक्रमादित्य अत्यन्त न्यायशील राजा थे

जिसके नाम का विक्रम संवत् प्रचलित है जो कि उज्जैन नगरी में शासन करता था उसके न्याय की अनेक कहानियाँ प्रचलित हैं। शिवा जी में भी इसमें उत्तम न्याय शीलता का कथन किया गया है।

राजा बलि दानवों का राजा था परन्तु उसकी उदारता, दानशीलता और ईश्वरनिष्ठा पुराणों में प्रसिद्ध है। इसने वामन भगवान का अपना सारा राज्य दान दे दिया था तथा अन्य अनेक सद्‌गुणों का आरोप इसमें किया जाता है। इस प्रकार से भूषण निकृष्ट कुल से उद्‌भूत उत्तम व्यक्ति को भी सम्मान्य तथा शासन के योग्य ठहराते थे। पुराणों में राजा बलि को इन्द्र की पदवी से भी विभूषित किया गया है।

राजा वेणु अयोध्या का नरेश था। यह एक वैज्ञानिक अनीश्वरवादी राजा था जिसने ईश्वरनिष्ठा को तिलाजलि दे दी थी परन्तु उसमें न्याय-प्रियता और निष्पक्ष शासन की कठोरता थी। अतः प्रजा को भी अपनी विचारधारा के अनुकूल बनाने का प्रयत्न किया था। इसी से रुष्ट हो उसे प्रजा ने बध कर डाला था इतना होते हुए भी भूषण उसकी निष्पक्ष दृढ़ता की सराहना करते तथा वैज्ञानिकता को महत्व देते हैं। इन उदाहरणों से हम कवि की विद्या-प्रेमी भावना, न्याय-प्रियता, ऊँच-नीच भेद-भाव रहित उदारता तथा वैज्ञानिकता के रूप को भली भाँति समझ सकते हैं। साथ ही उनकी स्वतन्त्र विचारधारा किस प्रकार से अनुगमन कर रही थी इसका भी स्पष्टीकरण हो जाता है।

यही नहीं, "गो अमीर न बाचि गुनी जन धोषै" में भी हम भूषण की विचार-सरणी को एक नये रूप में ही प्रस्फुटित होते पाते हैं जिसमें समाज-सुधार की अनेक प्रणालियाँ प्रवाहित होती दिखलाई देती हैं। अतः हम जोर देकर कह सकते हैं कि भूषण एक सुधारवादी कवि थे जिसने राष्ट्र को एक नये रूप में ढालने का प्रयत्न किया था।

साम्प्रदायिक सद्‌भावना

महाकवि भूषण की रचना पर यह आक्षेप किया जाता है कि उसने

हिन्दू-मुसलमानो मे विरोध बढाने का प्रयत्न किया। इस कारण उसमे राष्ट्रीय भावना का अभाव है। यह आक्षेप बहुत ही अनुचित है और उसकी विचारधारा को ठीक ठीक न समझने के कारण ही कुछ लोगो ने अज्ञानवश ऐसी भावना भरने का प्रयत्न किया है।

हम ऊपर के पृष्ठो मे यह प्रमाणित कर चुके हैं कि भूषण की रचना मे हिन्दू-मुसलिम के पारस्परिक विवाह कराने पर जोर दिया गया है जिसका वे मौखिक उपदेश देकर ही चुप नही बैठ गये थे वरन् क्रियात्मक रूप देकर वैसे विवाहो की स्थापना भी करवा दी थी जिसके कुछ उदाहरण भी दिये जा चुके है। यही नही भूषण ने निर्गुण और सगुण उपासको को शिवाजी द्वारा दान दिलवाया है वह भी हिन्दू-मुसलिम मेल की भावना को ही प्रतिपादन करता है अतः वे कहते है—

चाहत निर्गुण सगुण को ज्ञानवन्त की बान।
प्रगट करत निर्गुण सगुण शिवा निवाजी दान॥

शि० भू०, १४३

चूँकि हिन्दू सगुणोपासक है और मुसलमान प्रायः निर्गुण उपासना करते है अतः शिवाजी दोनो को ही उदारता से दान देता है।

शिवाजी ने एक आज्ञा प्रचारित कर रखी थी जिसे तत्कालीन इतिहासकार खफी खा ने इस प्रकार से व्यक्त किया है। देखिये—

He made it a rule that whenever his followers went plundering, they should do no harm to the mosques, the book of God or the woman of any one "Whenever a copy of the sacred Quran came in to his hands, he treated it with respect and gave it to some of his Mussalman followers."

अर्थात्—"शिवा जी ने यह नियम बना दिया था कि जब उसके सिपाही लूट के लिये जावे तो वे कभी किसी मसजिद ईश्वरदत्त किताब कुरान, अथवा किसी की स्त्री को कदापि हानि न पहुँचावे। जब कोई

कुरान की पुस्तक उनके हाथ लगे तो उन्होंने उसके प्रति आदर प्रदर्शित किया जाय और उसे अपने किसी साथी मुसलमान को दे दी जाय।" इससे स्पष्ट है कि शिवा जी का मुसलमानो के प्रति किसी प्रकार का भी विद्वेष न था।

इसी भावना को कई मुसलमान लेखको ने अपनी-अपनी रचनाओ मे उद्धृत किया है। बशीरुद्दीन अहमद ने अपनी रचना "वाकियात मुमलिकात बीजापुरी" मे भी इस बात की चर्चा की है। महाकवि भूषण ने इन्ही सब गुणो पर मुग्ध होकर छत्रपति शिवा जी को अपना आदर्श बनाया था और अपना इष्टदेव मान कर उसी आदर्श की स्थापना देश भर मे करने का प्रयत्न किया था। अतः भूषण हिन्दू-मुसलिम विरोधी हो ही कैसे सकता था।

भूषण ने मुसलमान जाति के प्रति न तो कभी विद्वेष प्रकट किया और न कभी उनकी भर्त्सना ही की है। हॉ, औरगजेब के प्रति इस महाकवि ने अवश्य कुछ कठोर विचार व्यक्त किये हैं, इसके कुछ कारण भी हे। इस सम्राट ने हिन्दुओ पर घोर अत्याचार और उत्पीडन कर रखा था। उनके मदिरो को नष्ट करना, हिन्दुओ को जबरन् मुसलमान बनाना, साधू-सन्यासियो का बध करना उसका दैनिक कृत्य हो रहा था। यही नही, उसने अपने सहोदर भाइयो को कत्ल करवाया, अपने बाप को कैद कर दिया जो पानी के लिये तरस-तरस कर मृत्युगत हुआ था। इससे पारिवारिक विकृति का हिन्दुओं पर भी प्रभाव बिना पडे नही रहा था। इसके अतिरिक्त मुसलमानो के प्रति भी वह अत्यन्त अनुदार था। इससे वह एक प्रकार से पूरे राष्ट्र का शत्रु बन रहा था। इन्ही कारणो से भूषण ने उसकी भर्त्सना की है और उसे अत्यन्त निन्दनीय ठहराया है ताकि देश मे अनुकरणीय दुर्भावना का विस्तार न हो सके।

इसका प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि भूषण ने औरगजेब के पूर्वजो की भूरि-भूरि प्रशंसा की है। देखिये —

"आदि को न जाने देवी देवता न माने सांच,
कहूँ सो पिछानो बात कहत हौं अबकी।
बब्बर अकब्बर हुमाऊँ हद बाँधि गये,
हिन्दू औ तुरुक की कुरान वेद ढब की।
और बादसाहन में हुती चाह हिन्दुन की,
जहाँगीर साहजहां साखि पूरें तब की।
कासिहु की कला जाती मथुरा मसीद होती,
शिवाजी न होतो तो सुनति होति सब की।"

शिवा बावनी, छन्द ४३

इससे स्पष्ट है कि भूषण कवि बाबर, हुमायूँ, अकबर, जहाँगीर और शाहजहाँ बादशाहो की नीति को प्रशंसनीय कहता है जो कि हिन्दुओ के धर्म मे कोई बाधा नहीं पहुँचाते थे और उनके प्रति अत्यन्त सहानुभूति रखते थे। यही नही, भूषण ने अकबर बादशाह को तो उसकी उदार नीति के कारण राम-कृष्ण जैसे अवतारो की कोटि मे ला बिठाया है इसे भी आप कवि के ही शब्दो मे अवलोकन कीजिये—

"सतयुग त्रेता औ द्वापर कलयुग माँहि,
आदि भयो नाहि भूप तिनहूँ ते अगरी।
अकबर बब्बर हुमाऊँ शाह सासन सों,
स्नेह ते सुधारी हेम हीरन ते सगरी।'

भूषण ग्रन्थावली, फुटकर छन्द ४

इसमे हमारे इस महाकवि ने अकबर आदि के विषय मे बतलाया है कि सतयुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग चारो युगों मे ऐसा एक भी राजा नही हुआ जैसा अकबर हुआ है। इसने उन पूर्व सम्राटो से कही अधिक स्नेह से देश के शासन का सचालन किया था और स्वर्ण तथा हीरो से सम्पन्न कर सारे देश मे सुख-समृद्धि का बाहुल्य कर दिया था। इस प्रकार भूषण ने इन बादशाहो को राम-कृष्ण की समकक्षता मे बिठा कर औरंगजेब के लिये इस आदर्श को अनुकरणीय ठहराया है। इस उदा-

हरण से हम सरलतया भूषण की हार्दिक भावना का अनुमान कर सकते है। इन भावो को व्यक्त करने वाला व्यक्ति यदि किसी के हृदय मे सम्प्रदाय विद्वेषी और मुसलमान विरोधी माना जा सकता है तब तो उसकी मति को विकृत रूप मे ही मानना उचित होगा।

भूषण ने अनेक छन्दो मे औरगजेब को उपदेश दिया है कि वह बाबर और अकबर के यश को स्थिर रखने का प्रयत्न करे इसके लिये वे कहते है—

"दौलत दिली की पाय कहाये आलमगीर,
बब्बर अकब्बर के बिरद बिसारे तैं।"
शि० भू०, छन्द २८१

'आलमगीर' औरगजेब का ही दूसरा नाम था जिसका अर्थ होता है संसार को ग्रहण (आकर्षित) करनेवाला। इसमे भी कवि उसे यथार्थ पथ का अनुसरण करने के लिये कहता है।

भूषण ने उसके पूर्वजो की ही प्रशसा नही की वशजो की भी अच्छी प्रशसा की है औरगजेब के पोते जहादार शाह की प्रशसा करते हुए कवि वर्णन करता है—

डका के दिये ते दल डबर उमड्यौ,
उडमड्यो उड मडल लौं खुर की गरद है।
जहां दार शाह बहादुर के चढ़त पैंड,
पैंड में मढ़त मारु राग बम नद है।
भूषण भनत घने घूमत हरौल बारे,
किम्मत अमोल बहु हिम्मत दुरद है।
हद्दन छपद महि मद फरनद होत,
कद्दन भनद से जलद हल दद है।

इससे सरलतया भूषण की महत्ता और उसकी भावना का अनुमान किया जा सकता है। समाज मे उत्साह और नवजीवन लाने के लिये वीर रस की विवेचना अनिवार्य वस्तु है। अतः उसके लिये उपनायक के रूप

मे किसी अत्याचारी, भ्रष्ट, दुर्नीत एव उद्धत व्यक्ति की आवश्यकता होती है। भूषण के सामने औरगजेबी अत्याचार पराकाष्ठा को पहुँचे हुए थे। वह भी साम्प्रदायिकता की पक्षपातपूर्ण विचार-सरणी के साथ राष्ट्रीय भावना को भी ठेस पहुँचाने वाले थे।

औरगजेब ने सूफी फकीर सरमद को सूली दिलवा दी थी और शाह मोहम्मद जैसे विद्वान् दार्शनिक विचारक सन्त को इतना परेशान किया था कि वह अकाल ही काल-ग्रस्त हो परलोक सिधारा था। भूषण ने इन्ही सब कारणो से औरगजेब को राष्ट्रद्रोही माना था तथा शिवा जी की भावना के अनुकूल आचरण करने का उपदेश दिया था साथ ही उसकी भर्त्सना भी खूब करते गये है। इसके भी कुछ नमूने देखिये—

(अ) "और करो किन कोटिक राह,
सलाह, बिना बचिहौ न सिवा सो," शि०भू०, २१३

(ब) "मेरे कहे मेरु करु सिवा जी सों बैर करि,
गैर करि नैर निज नाहक उजारे तैं।" शि० भू०,२७८

इससे स्पष्ट है कि भूषण मे राष्ट्रीय भावना आदि से अन्त तक ओत-प्रोत है। उक्त भर्त्सना की सन्नद्धता तभी सामने आती है जब अन्य कोई उपाय कारगर नही होता। गोस्वामी तुलसीदास ने भी समुद्र से पथ न मिलने पर उसको इन शब्दों मे धमकी दी थी—

"विनय न मानत जलधि जड, गये तीन दिन बीति।
बोले राम सकोप तब, भय बिनु होइ न प्रीति॥"
(रामचरित मानस)

वीररस के उत्पादन के लिये इन भर्त्सनाओ से भी कुछ उत्साह-वर्द्धन होता है और उसके लिये क्षेत्र तैयार हो जाता है। साथ ही जब किसी दुष्ट जन द्वारा समाज के छिन्न-भिन्न होने की आशका होती है तभी देशहित की भावना से उक्त सिद्धान्त लागू किया जाता है। भूषण ने भी इसी का अनुगमन कर राष्ट्र को उद्बुद्ध कर दिया था और स्वराज्य स्थापन की सफलता प्राप्त कर ली थी।

भूषण धार्मिक स्वतंत्रता के पक्षपाती थे। इसीलिए वे कभी एक दूसरे के साम्प्रदायिक विचारो और धार्मिक कार्यों मे बाधा नही पहुँचाते थे। इसीलिए ऊपर के छन्दो मे बाबर एव अकबर की भावना को सराहनीय मान कर अनुकरणीय ठहराया है तथा औरंगजेब को भी इस पर चलने की सलाह देने का प्रयत्न किया है। इस विवेचन से यह भली भाँति समझा जा सकता है कि भूषण मे हिन्दू-मुसलमान की मेल-भावना उत्कट रूप से काम कर रही थी जिसके लिये वे जीवन भर प्रयत्नशील रहे थे। साथ ही उन पर पारस्परिक विद्वेष बढाने का आरोप तो और भी असत्य है। राष्ट्रद्रोही होने के कारण केवल औरंगजेब को वे निन्दनीय मानते थे जिसे उन्होंने उपनायक के रूप मे अकित किया है। इसके बिना वीर रस का विवेचन हो ही नही सकता। अतः भूषण के उपनायक चुनने मे उनकी दक्षता, न्याय प्रियता, सत्यनिष्ठता और राष्ट्रीयता का अच्छा परिचय मिलता है। इसी भावना के प्रभाव से भूषण की रचना को हिन्दी मे सर्वोत्कृष्ट स्थान प्राप्त है।

४. संग्रह खण्ड

शिवराज-भूषण

१

विकट अपार भव पन्थ के चले को,
श्रम हरन करन बिजना से ब्रह्म ध्याइये ।
यहि लोक परलोक सुफल करन,
कोक नद से चरन, हिये आनि के जुड़ाइये ॥
अलि - कुल - कलित - कपोल - ध्यान - ललित
अनन्द-रूप-सरित में भूषण अन्हाइये ।
पाप-तरु भञ्जन, बिघन-गढ़ गञ्जन,
जगत मन रञ्जन, द्विरद मुख गाइये ॥

२

जै जयन्ति जै आदि सकति जै कालि कपर्दिनि ।
जै मधु कैटभ छलनि देवि जै महिष विमर्दिनि ॥
जै चमुण्ड जै चण्ड मुण्ड भण्डासुर खण्डिनि ।
जै सुरक्त जै रक्त बीज बिड्डाल बिहण्डिनि ॥
जै जै निसुम्भ सुम्भद्दलनि, भनि भूषन, जै जै भननि ।
सरजा समत्थ सिवराज कहँ, देहि बिजै जै जग जननि ॥

३

तरनि, जगत जल निधि तरनि, जै जै आनन्द ओक ।
कोक कोकनद सोक हर लोक लोक आलोक ॥

४

दसरथ जू के राम भे; बसुदेव के गोपाल ।
सोई प्रगटे शाहि के, श्री शिवराज भुवाल ॥

५

जापर साहि तनै शिवराज सुरेश की ऐसी सभा सुभ साजै।
यो कवि भूषण जम्पत है, लखि सम्पतिको अलका पतिलाजै॥
जामधि तीनहु लोक को दीपति ऐसो बड़ो गढ़राज बिराजै।
वारि पताल सिमाची मही, अमरावति की छवि ऊपर छाजै॥

६

मिलतहि कुरुख चकत्ता कौं निरखि कीन्हों,
सरजा, सुरेश ज्यो दुचित ब्रजराज को।
भूषण, कुमिस गैर मिसिल खरे किये को,
किये म्लेच्छ मुरछित करि कैं गराज को॥
अरे ते गुसलखाने बीच, ऐसे उमराय,
लै चले मनाय, महाराज शिवराज को।
दावदार निरखि रिसानो दीह दलराय,
जैसे गड़दार अड़दार-गजराज को॥

७

इन्द्र जिमि जम्भ पर वाडव सुअम्भ पर,
रावन सदम्भ पर रघुकुल राज है।
पौन बारिवाह पर सम्भु रतिनाह पर,
ज्यों सहस्रवाहु पर राम द्विजराज है॥
दावा द्रुम दण्ड पर चीता मृग झुण्ड पर,
भूषण, बितुण्ड पर जैसे मृगराज है।
तेज तम अंश पर कान्ह जिमि कंस पर,
यों मलिच्छ बंस पर सेर सिवराज है॥

८

कलिजुग जलधि अपार, उद्ध अधरम्म उम्मिमय।
लच्छनिलच्छ मलिच्छ कच्छ अरू मच्छ नगरचय॥

नृपति नदी नद वृन्द होत जाकों मिलि नीरस।
भनि भूषण सब भुम्मि घेरि किन्निय सुअप्प बस॥
हिन्दुवान पुन्यगाहक-बनिक, तासु निबाहक साहि सुव।
बर बादवान किरवान धरि जस जहाज सिवराज तुव॥

९

जेते हैं पहार भुव पारावार माहि,
तिन सुनि के अपार कृपा गहे सुख फैल है।
भूषन भनत, साहि तनै सरजा के
पास आइबे कों चढ़ी उर हौंसनि की ऐल है॥
किरवान बज्र सो बिपच्छ करिबे के,
उर आनि कै कितेक गहे सरन की गैल हैं।
मघवा मही मैं तेज वान सिवराज बीर,
कोट करि सकल सपच्छ किये सैल हैं॥

१०

चमकतीं चपला न, फेरत फिरगै भट,
इन्द्र को न चाप, रूप बैरष समाज को।
धाए धुरवा न, छाए धूरि के पटल मेघ,
गाजिबो न, बाजिबौ है दुन्दुभी दराज को॥
भौंसिला के डरन डरानी रिपुरानी कहैं,
'पिय भाजौ' देखि उदौ पावस के साज को।
घन की घटा न, गज घटनि सनाह साज,
भूषन भनत, आयो सेन सिवराज को॥

११

जाहि पास जात सो तो राखि न सकत,
याते तेरे पास अचल सुप्रीति नाधियतु है।
भूषन भनत शिवराज तव कित्तसम
और की न कित्ति कहिबे कों काँधियतु है॥

इन्द्र कौ अनुज तैं उपेन्द्र अवतार याते,
तेरा बाहुबल लै सलाह साधियतु है।
पायतर आय नित निड़र बसाइबे को,
कोट बाँधियतु मानो पाग बाँधियतु है॥

१२

बासब से बिसरत, बिक्रम की कहा चली,
बिक्रम लखत वीर बखत-बिलन्द के।
जागे तेजबृन्द सिवाजी नरिन्द मसनन्द,
माल मकरन्द कुलचन्द साहिनन्द के॥
भूषन भनत, देस देस बैरि नारिन में,
होत अचरज घर घर दुख दंद के।
कनक लतानि इन्दु, इन्दु माहि अरविन्द,
झरैं अरविन्दन ते बुन्द मकरन्द के॥

१३

उद्धत अपार तब दुन्दुभी धुकार साथ,
लघैं पारावार बालवृन्द रिपुगन के।
तेरे चतुरङ्ग के तुरङ्गन के रँगे रज,
साथही उड़ात रज पुज है परन के॥
दच्छिन के नाथ सिवराज तेरे हाथ चढ़ैं,
धनुष के साथ गढ़ कोट दुरजन के।
भूपन असीसैं, तोहि करत कसीसैं, पुनि,
बानन के साथ छूटैं प्रान तुरकन के॥

१४

चढ़त तुरङ्ग चतुरङ्ग साजि सिवराज,
चढ़त प्रताप दिन दिन अति अङ्ग मैं।
भूषन चढ़त मरहट्ठन के चित्त चाउ,
खग्ग खुलि चढ़त है अरिन के अङ्ग मैं॥

भौंसिला के हाथ गढ़ कोट हैं चढ़न,
अरि जोट है चढ़त एक मेरुगिरि सङ्ग मैं।
तुरकान गन व्यामयान है चढ़त,
बिनुमान है चढ़न बरङ्ग अबरङ्ग मैं॥

१५

चाहत निर्गुन सगुन को, ज्ञानवंत की बान।
प्रगट करत निर्गुन सगुन, शिवा निवाजी दान॥

१६

तिभुवन मैं परसिद्ध एक अरिबल यह खण्डिय।
यह अनेक अरिबल बिहण्डि रन मण्डल मण्डिय॥
भूषन वह ऋतु एक पुहुमि पानिपहि बढावत।
यह छहुँ ऋतु निसिदिन अपार पानिप सरसावत॥
सिवराज साहि सुव सत्थ नित हय गय लक्खन संचरइ।
यक्कइ गयन्द यक्कइ तुरङ्ग किमि सुरपति सरवरि करइ॥

१७

कीरति को ताजी करी बाजी चढ़ि लूटि कीन्ही,
भई सब सेन बिनु बाजी बिजैपुर की।
भूषन भनत, भौंसिला भुवाल धाकही सो,
धीर धरबी न फौज कुतुब के धुर की॥
सिंह उदैभान बिन अमर सुजान बिन,
मान बिन कीन्हीं साहिबी त्यों दिली सुर की।
साहि सुव महा बाहु सिवाजी सलाह बिन,
कौन पातसाह की न पातसाही मुरकी॥

१८

बड़ो डील लखि पील को सबन तज्यो बन थान।
धनि सरजा तू जगत मैं ताको हर्यो गुमान॥

१६

सीता सग सोभित सुलाच्छन सहाय जाके,
भू पर भरत नाम भाई नीति चारु है।
भूषन भनत कुल सूर कुल भूषन है
दासरथी सब जाके भुज भुव भारु है॥
अरि लक तोर जोर जाके सग वानर है
सिधुर है बाँधे जाके दल को न पारु है।
तेगहि कै भेटै जौन राकस मरद जानै
सरजा सिबाजी राम ही कौ अवतारु है।

२०

महाराज सिवराज तेरे बैर देखियत,
घन वन है रहे हरम हवसीन के।
भूषन भनत, रामनगर जवार तेरे,
वैर परवाह बहे रुधिर नदीन के॥
सरजा समर्थ वीर, तेरे बैर वीजापुर,
बैरी बैयरनि कर चीन्ह न चुरीन के।
तेरे बैर देखियत आगरे दिल्ली के बीच,
सिदुर के बिदु मुख इन्दु जबनी न के॥

२१

वीर बड़े बड़े मीर पठान खरो रजपूतन को गन भारो।
भूषन आय तहाँ सिवराज लयो हरि औरङ्गजेब को गारो॥
दीन्हो कुज्वाब दिलीपति को अरु कीन्हो वजीरन को मुँह कारो।
नायो न माथहि दक्खिन नाथ न साथ मैं फौज न हाथ हथ्यारो॥

२२

दच्छिन कों दाबि करि बैठो है सइस्तखान,
पूना माहि दूना करि जोर करवार को।

हिन्दुवान खम्भगढ़पति दल थम्भ भनि
भूषण, भरैया कियो सुजस अपार को ॥
मनसबदार चौकीदारन गजाय मह-
लन में मचाय महाभारत के भार को ।
तो सो को सिवाजी जेहि दोसौ आदमी सो जीत्यो
जंग सरदार सौ हजार असवार को ।

२३

तादिन अखिल खल भलैं खल खलक मैं
जादिन सिवाजी गाजी नेक करखत है ।
सुनत नगारन अगार तजि अरिन की,
दारगन भाजत न वार परखत है ॥
छूटे बार बार छूटे बारन त लाल
देखि भूषन सुकवि वरनत हरखत है ।
क्यो न उतपात होंहि वैरिन के
झुण्डन मैं कारे घन उमडि अगारे बरखत है ॥

२४

जसन के रोज यो जलूस गहि वैठो जोऽब
इन्द्र आवे सोऊ लागे औरग की परजा ।
भूषन भनत तहाँ सरजा सिवाजी गाजी,
तिनको तुजुक देखि नेकहू न लरजा ॥
ठान्यो न सलाम, भान्यो साहि को इलाम धूम
धाम कै न मान्यो रामसिह हू को बरजा ।
जासो बैर करि भूप बचै न दिगन्त ताके
दन्त तोरि तखत तरे त आयो सरजा ॥

२५

जावलि बार सिगारपुरी औ जवारिको राम के नैरि को गाजी ।
भूषन भौंसिला भूपति तैं सब दूरि किये करि कीरति ताजी ॥

वैर कियो सिवजी सो खवासखां डौडिये सैन बिजैपुर बाजी ।
बापुरो एदिल साहि कहा कहाँ दिल्ली को दामनगीर सिवाजी ॥

२६

बेदर कल्यान परेंभा आदि कोट साहि,
एदिल गंवाय है नवाय निज सीस को ।
भूषन भनत, भाग नगरी कुतुब साई,
दैकरि गँवायो राम गिरि से गिरास को ॥
भौंसिला भुवाल साहि तनै गढ़ पाल दिन
दोऊ न लगाये गढ़ लेत पञ्चतीस को ।
सरजा शिवाजी जयसाह मिरजा को लीने,
सौगुनी बड़ाई गढ़ दीने है दिलीस को ॥

२७

सिवाजी खुमान सलहेरि मैं दिलीदल कौ,
किन्हो कतलाम करबाल गहिकर मे ।
सुभट सराहे चन्द्राबत कछबाहे, ढाहे,
मुगलौ पठान फरकत परे फर मैं ॥
भूपन भनत, भौंसिला के भट उद्भट
जीति घर आएधाक फैली घर घर मैं ।
मारु के करैया अरि अमर पुरैगे तऊ,
अजौं मारु मारु सोर होत है समर मै ॥

२८

कोट गढ़ दै कैं माल मुलुक मैं बीजापुरी,
गोल कुण्डा बारो पीछे ही को सरकतु है ।
भूषन भनत भौंसिला भुवाल भुजबल सो,
रेबा ही के पार अवरंग हरकतु है ॥
पेस कसें भेजत इरान फिरगान पति
उनहू के उर याकी धाक धरकतु है ।

साहितनै सिवाजी खुमान या जहान पर,
कौन पातसाह के न हिए खरकतु है ॥

२६

अति मतवारे जहँ दुरदै निहारियत,
तुरगन ही मैं चचलाई परकीति है।
भूषन भनत जहाँ पर लागैं बानन मैं,
कोक पच्छिनहि माँहि बिछुरन रीति है ॥
गुनिगन चोर जहाँ एक चिन्त ही के लोक
बन्धै जहाँ एक सरजा की गुन प्रीति है।
कम्प कदली मैं, वारि बुन्द बदली मै सिव,
राज अदली के राज मैं यो राजनीति है ॥

३०

बैर कियो सिवचाहत हो तब लौं अरि बाह्यो कटार कठैंठो।
योहि मलिच्छहि छांडै नहीं सरजा मन तापर रोस मैं पैठो ॥
भूषन क्यो अफजल्ल बचै अठपाव कैसिह को पाउँ उमैठो।
बीछू के घाय धुक्यो धरक्क है तो लगी धाय धराधर बैठो ॥

३१

माँगि पठायो सिवा कछु देश वजीर अजानन बोलगहै ना।
दौरि लियो सरजा परनालो यों भूषन जो दिन दोय लगेना ॥
धाक सों खाक बिजैपुर भो मुख आयगो खान खवास के फेना।
भै भरकी करकी धरकी दरकी दिल एदिल साहि की सेना ॥

३२

मानसर वासी हंस वंश न समान होत,
चन्दन सो घस्यो घन सारऊ धरीक है।
नारद की सारद की हाँसी मैं कहाँ की आभ,
सरद की सुरसरी को न पुण्डरीक है ॥

भूषन भनत छक्यो छीरधि मैं थाह लेत,
फेन लपटानो ऐरावत को करी कहै।
कैयलास ईस, ईस सीस रजनीस वहौ,
अवनीस सिवा के न जस को सरीक है॥

३३

देस दहपट्ट कीने, लूटि के खजाने लीने,
बचै न गढ़ोई काहू गढ़ सिर ताज के।
तोरादार सकल तिहारे मनसबदार,
डाँडे, जिनके सुभाय जग दै मिजाज के॥
भूषण भनत, बादशाह को यो लोग सब,
वचन सिखावत सलाह की इलाज के।
अबरे की बुद्धि ह्वै कै बावरे न कीजै वैर,
रावरे के वैर होत काज सिवराज के॥

३४

दौलति दिल्ली की पाय कहाये आलमगीर,
बब्बर अकब्बर के बिरद बिसरायें तैं।
भूषण भनत, लरि लरि सरजा सों जग,
निपट अभग गढ कोट सब हारे तै॥
सुधर्यो न एकौ साज, भेजि भेजि वे ही काज,
बड़े बड़े वे इलाज उमराव मारे तैं।
मेरे कहे मेर करू सिवाजी सो बैर करि,
गैर करि नैर निज नाहक उजारैं तै॥

३५

पम्पा मानसर आदि अगन तलाब लागे,
जेहि के परन मैं अकथ युत गथके।
भूषण यो साज्यो राय गढ़ सिवराज रहे,
देव चक चाहि कै बनाये राजपथ के॥

त्रिन अवलम्ब कलिकानि आसमान मैं ह्वै,
होत विसराम जहाँ इन्दु और उदथ के।
महत उतग मनि ज्योतिन के सग आनि,
कैयो रग चकहा गहत रवि रथ के॥

३६

पावस की एक रानि भली सु महा बली सिंह सिवा तमकेते।
म्लेच्छ हजारन ही कटिगे दसही मरहट्ट के झमके ते॥
भूषण हालिउठे गढ भूमि पठान कबधन के धमके ते।
मीरन के अवसान गये मिलि धोपनि सों चपलाचमकेते॥

३७

अहमद नगर के थान किरवान लै के,
नौ सेरी खान ते खुमान भिर्यौ बलते।
प्यादन सों प्यादे पर वरैतन सो परवरैत,
वरवतर बारे वखतर वारे हल ते॥
भूषण भनत, एते मान घमासान भयो,
जान्यो न परत कौन आयो कौन दलते।
सम वेष ताके, तहाँ सरजा सिवा के बाँके,
बीर जाने हाँक देत, मीर जाने चलते॥

३८

उमडि कुडाल मैं खवास खान आए भनि
भूषण त्यों धाए सिवराज पूरे मनके।
सुनि मरदाने बाजे हय हिहनाने घोर
मूछे तरराने मुख बीर धीर जनके॥
एकै कहै मार मार सम्हरि समर एकै,
म्लेच्छ गिरैं मार बीच वे सम्हार तन के।
कुण्डन के ऊपर कड़ाके उठैं ठौर ठौर,
जीरन के ऊपर खड़ाके खड़गन के॥

३९

अजौं भूत नाथ मुण्ड माल लेत हरपत,
भूतन अहार लेत अजहुँ उछाह है।
भूषण भनत अजौं काटे करबालन के,
कारे कुञ्जरन परी कठिन कराह है॥
सिह सिवराज सलहेरि के समीप ऐसो,
कीन्हो कतलाम दिल्ली दल को सिपाह है।
नदी रन मण्डल रुहेलन रुधिर अजौं,
अजौं रबिमंडल रुहेलन की राह है॥

४०

आजु यहि समै महराज सिवराज तुही,
जगदेव, जनक जजाति अम्बरीक सो।
भूषण भनत, तेरे दान जल जलधि मैं,
गुनिन को दारिद गयो बहि खरीक सो॥
चन्द कर किंजलक, चाँदनी पराग, उड़,
बृन्द मकरन्द बुन्द पुंज के सरीके—सो।
कन्द सम कयलास नाक गग नाल तेरे,
जस पुण्डरीक को अकास चचरीक सो॥

४१

दारुन दइत हिरनाकुस बिदारिबे को,
भयो नरसिंह रूप तेज बिकरार है।
भूषन भनत त्यो ही रावन के मारिबे को,
रामचन्द्र भयो रघुकुल सरदार है॥
कंस के कुटिल बल बसन बिधुसिबे को,
भयो यदुराय बसुदेव को कुमार है।
पृथ्वी पुरुहूत साहि के सपूत सिवराज,
म्लेच्छन के मारिवे को तेरो अवतार है॥

४२

लिय धरि मोहकम सिंह कहँ अरु कुमार नृपकुम्म।
श्री सरजा संग्राम किय भुम्मिम्मधि करि धुम्म॥
भुम्मिम्मधि किय धुम्मिम्मडि रिपु जुम्मम्मलि करि।
जगग्गरजि उतगग्गरव मतगग्गन हरि॥
लक्खक्खनरन दक्खक्खलनि अलक्ख क्खिति भरि।
मोलल्लहि जस नोलल्लरि बहलोलल्लिय धरि॥

४३

अरिन के दल सैन सगर मैं समुहाने,
टूक-टूक सकल कै डारे घमासान मैं।
बारबार करो महानद परवाह पूरो,
बहत है हाथिन के मद जल दान मैं॥
भूषन भनत महाबाहु भौंसिला भुवाल
सूर रवि कैसो तेज तीखन कृपान मैं।
माल मकरन्द जू के नन्द कलानिधि तेरो
सरजा सिवाजी जस जगत जहान मैं॥

शिवा बावनी

—१—

बिज्जपूर बिदनूर सूर सर धनुप न सधहि ।
मगल बिनु मल्लारि नारि धम्मिल्ल नहि बधहि ॥
गिरत गब्भ कोटै गरब्भ चिजी चिजा डर ।
चालकुंड, दलकुंड गोलकुंडा सका उर ॥
भूषन प्रताप सिवराज तव, इमि दच्छिन दिसि सचरै ।
मधुराधरेस धक धकत औ द्रबिड़ निबिड़ उर दबि डरै ॥

२

दरवर दौर करि नगर उजारि डारि,
कटक कटायो कोटि दुरजन दरब की ।
जाहिर जहान जंग जालिम है जोरावर,
चलै न कछूक अब एक राजा रब की ॥
सिवराज तेरे त्रास दिल्ली भयो भुवकप,
थर थर कॉपति बिलाइति अरब की ।
हालत दहिल जात काबुल कधार बीर,
रोस करि काढ़ै समसेर ज्यो गरब की ॥

३

कोट गढ़ ढाहियतु एकै पातसाहन के,
एकै पात साहन के देश दाहियतु है ।
भूषन भनत महाराज सिवराज एकै,
साहन की फौज पर खग्ग बाहियतु है ॥
क्यो न होहि बैरिन की बैरि-बधू बौरी सुनि,
दौरनि तिहारे कहौ क्यो निबाहियतु है ।

रावरे नगारे सुनि बैर बारे नगरन,
नैन बारे नदन निवारे चाहियतु है ॥

४

चकित चकत्ता चौंकि चौंकि उठै बार बार,
दिल्ली दहसति, चितै चाह करषति है।
बिलखि बदन बिलखात बिजैपुर—पति,
फिरति फिरंगिन की नारी फरकति है ॥
थर थर कांपत 'कुतुबसाह गोलकुंडा,
हहरि हवस भूप भीर भरकति है।
राजा सिवराज के नगारन की धाक सुनि,
केते पातसहन की छाती दरकति है ॥

५

फिरंगाने फिकिरि औ हदसनि हबसाने,
भूषन भनत कोऊ सोवत न घरी है।
बीजापुर बिपति बिडरि सुनि भाजे सब,
दिल्ली-दरगाह बीच परी खरभरी है ॥
राजन के राज सब साहन के सिरताज,
आज सिवराज पातसाही चित धरी है।
बलख बुखारे कसमीर लौं परी पुकार,
धाम धाम धूमधाम रूम साम परी है ॥

६

गढ़न गँजाय गढ़ धरन सजाय करि,
छांड़े केते धरम दुआर दै भिखारी से।
साहि के सपूत पूत वीर सिवराज सिंह,
केते गढ़धारी किये बन बनचारी से ॥

भूषन बखाने, केते दीन्हे बन्दीखाने सेख,
सयद हजारी गहे रैयत बजारी से ।
महतो से मुगुल महाजन से महाराज,
डाँडि लीन्हे पकरि पठान पटवारी से ॥

७

जीत्यो सिवराज सलहेरि को 'समर सुनि,
सुनि असुरन के सुसीने धरकत हैं ।
देवलोक नागलोक नरलोक गावैं जस,
आजहूँ लों परे खगदन्त खरकत हैं ॥
कटक कटक काटि कीट से उड़ाये केते,
भूषन भनत मुख मोरे सरकत हैं ।
रनभूमि लेटे अध फेटे असेते परे,
रुधिर लपेटे पठटे फरकत हैं ॥

८

चन्द्र राव चूर करि जावली जपत कीन्हो
मारे सब भूप औ सँहारे पुर धाय कै ।
भूपन भनत तुरकान दलथभ काटि,
अफजल मार डारे तबल बजाय कैं ॥
एदिल सो बेदिल हरम कहै बारबार,
अब कहा सोवो सुख सिहहि जगाय कैं ।
भेजना है भेजो सो रिसालै, सिवराज जूकी,
बाजी करनालैं परनालैं पर आय कैं ॥

९

दारा की न दौर यह रारि नहीं खजुबे की,
बाँधिबो नहीं है किधौं मीर सहवाल को ।

मठ विश्वनाथ को न वास ग्राम गोकुल को,
देव को न देहरा न मन्दिर गोपाल को,
गाढ़े गढ़ लीन्हे और बैरी कतलाम कीन्हे
ठौर ठौर हासिल उगाहत है साल को।
बूड़ति है दिल्ली सो सँभारै क्यो न दिल्लीपति
धक्का आनि लाग्यो सिवराज महाकाल को॥

१०

मारि करि पातसाही खाक साही कर दीन्ही,
छीन लीन्हीं छिति हद सब सिरदारे की।
खिसि गई सेखी फिसि गई सूरताई सबै,
हिसि गई हिम्मत ही हियते हजारे की॥
भूषन भनत भारे धौंसा की धुकार बाजे,
गरजत मेघ ज्यो बरात चढ़े भारे की।
दच्छिनी दमाक दार दूल्हो शिवराज भयो,
दिल्ली दुलहिन भई सहर सितारे की॥

११

अजफल खान गहि जा ने मयदान मारा,
बीजापुर गोलकुडा मारा जिन आज है।
भूषन भनत फरासीस त्यो फिरगी मारि,
हबस तुरूक डारे पलटि जहाज है॥
देखत मे खान रूसतम जिन खाक कियो,
सालति सुरति आजु सुनी जो अवाज है।
चौंकि-चौंकि चकता कहत चहुँधा ते यारो,
लेत रहौ खबरि कहाँ लौं सिवराज है॥

१२

सपत नगेस, चारो कुकुभ गजेस कोल,
कच्छप दिनेस धरैं धरनि अखंड को।

पापी घाले धरम सुपथ चाले मारतड,
करतार प्रन पाले प्रानिन के चड को॥
भूषन भनत सदा सरजा सिवाजी गाजी,
म्लेच्छन को मारै करि कीरति घमड को।
जग काज वारे निहचित करि डारे सब,
भोर देत आसिष तिहारे भुज दड को॥
तेरो तेज सरजा समत्थ! दिनकर सोहै,
दिनकर सोहै तेरे तेज के निकर सो।
भौंसिला भुआल! तेरो जस हिमकर सोहै,
हिमकर सोहै तेरे जस के अकर सो।
भूषन भनत तेरो हियो रतनाकर सो,
रतना करौ है तेरे हिय सुख कर सो।
साहि के सपूत सिव साहि दानि तेरो कर,
सुरतरू सो है, सुरतरू तेरो कर सो॥४४॥
सिह थरि जाने विन जावली जगल हठी,
भठी गज एदिल पठाय करि भटक्यो।
भूषन भनत, देखि भभरि भगाने सब,
हिम्मति हिये मैं धारि का हुवै न हटक्यो।
साहि के सिवाजी गाजी सरजासमत्थ महा,
मद्गल अफजलै पजाबल पटक्यो।
ता बिगरि ह्वै करि निकाम निज धाम कहँ,
आकुत महाउत सुआँकुस लै सटक्यो॥४५॥
कवि कहै करन करनजीत कमनत,
अरिन के उर माहि कीन्ह्यों इमिछेव है।
कहत धरेस सब धराधर सेस ऐसो,
और धरा धरन को मेट्यो अहमेव है।
भूषन भनत महाराज सिवराज तेरो,

राज काज देखि कोई पावत न भेव है।
कहरी यदिल, मौज लहरी कुतुब कहै,
बहरी निजाम के जितैया कहे देव है ॥४६॥

मालती सवैया।

दानव आयो दगाकरि जावली दीह भयारो महामद भार्यो।
भूषन बाहुबली सरजा तेहि भेटिवे को निरसक पधार्यो।
बीछू के धाय गिरे अफजल्लहि ऊपर ही सिवराज निहार्यो।
दाबियो बैठो नरिन्द अरिन्दहि मानो मयन्द गयन्द पछार्यो॥४७॥
साहितनै सिव साहि निसा में निसॉक लियो गढ सिह सोहानो।
राठि वर को सहॉर भयो लरिकै सरदार गिरयो उदैभानो।
भूषण यो घमसान भो भूतल घेरत लोथिन मानो मसानो।
ऊचे सुछज्ज छटा उचटी प्रगटी परभा परभात की मानो ॥४८॥

कवित्त मनहरण।

लूट्यो खानदौरा जोरावर सफजग अरू,
लूट्यो तलब खॉ मानहु अमाल है।
भूषण भनत लूट्यो पूना में सइस्तखान,
गढन में लूट्यो त्यो गढोइन को जाल है।
हेरि हेरि कूटि सलहेरि बीच सरदार,
घेरिघेरि लूट्यो सब कटक कराल है।
मानो हय हाथी उमराव करि साथी,
अवरग डरि सिवाजी पै भेजत रिसाल है॥४९॥
अटल रहे है दिगअतन के भूप धरि,
रैयति को रूप निज देस पेसकरि कै।
राना रह्यो अटल बहाना करि चाकरी को
बाना तजि, भूषण भनत, गुन भरि कै।
हाड़ा, रायठौर, कछवाहे, गौर और रहे,
अटल चकत्ता को चमारू धरि डरि कैं।

अटल सिवाजी रह्यो दिल्ली को निदरि धीर,
धरि, ऐड धरि, तेग धरि, गढ़ धरि कैं ॥५०॥

मदजल धरन द्विरद बल राजत
बहुजल धरन जलद छबि साजे ।
भूमि धरन फन-पति है लसत,
तेज धरन ग्रीषम रबि छाजै ।
खग्ग धरन सोहे भट रन में,
भूप लसत गुन-धरन समाजै ।
दिल्ली दलन दच्छिन दिसि थंभन,
ऐड़ धरन सिव राज विराजै ॥५१॥

छूट्यो है हुलास आम खास एक सग, छूट्यो,
हरम सरम एक, सग बिनु ढग ही,
नैनन ते नीर धीर छूट्यो एक संग छूट्यो,
सुख रुचि मुख रुचि त्यो ही बिन रग ही ।
भूषन बखानै, सिवराज, मरदाने तेरी,
धाक बिललाने, न गहत बल अग ही ।
दक्खिन के सूबा पाय दिल्ली के अमीर तजै,
उत्तर की आस जीव आस एक सग ही ॥५२॥

उत्तर पहार विधनौल खण्डहर झार,
खण्डहु प्रचार चारु के ली है बिरद की ।
गौर गुजरान अरू पूरब पछाँह ठौर,
जतु जगलीन की बसति माररद की ।
भूषन जो करत न जाने बिनु घोर सोर,
भूलि गयो आपनी ऊँचाई लखे कद की ।
खोइयो प्रबल मदगल गजराज एक,
सरजा सो बैर कै बड़ाई निज मद की ॥५३॥

बचैगा न समुहाने, बहलोल खाँ अयाने,
भूषण बखाने दिल आन, मेरा बरजा।
तुझ ते सवाई तेरा भाई सलहेरि पास,
कैद किया साथ का न कोई बीर गरजा।
साहन के साह उसी औरंग के लीन्हें गढ़,
जिसका तू चाकर और जिसकी है परजा।
साहि का ललन दिली दल का दलन,
अफजल का मलन सिवराज आया सरजा ॥५४॥

मालती सवैया

श्री सरजा सिव तो जस सेत सो होत है बैरिन के मुहकारे।
भूषन तेरे अरून्न प्रताप सपेत लखे कुनवा नृप सारे।
साहि तनै तव कोप कृसानु ते बैरि गरे सब पानिपवारे।
एक अचम्भौ होत बड़ो तिन ओठ गहे अरि जातन जारे ॥५५॥

कवित्त मनहरण

महाराज सिवराज चढत तुरग पर,
ग्रीवा जात नै करि गनीम अतिबल की।
भूषन चलत सरजा की सैन भूमि पर,
छाती दरकत है खरी अखिल खल की।
कियो दौरि घाव उमरावन अमीरन पै,
गई कटि नाक सिगरेई दिली दल की।
सूरत जराई कियो दाह पातसाही उर,
स्याही जाय सब पातसाही मुख झलकी ॥५६॥
सहज सलील सील जलद से नील डील,
पब्बय से पील देत नाहिं अकुलात हैं।
भूषन भनत, महाराज सिवराज देत,
कचन को ढेरु जो सुमेरु सो लखात है।

सरजा सवाई कासो करि कविताई तब,
हाथ की बड़ाई को बखान करि जात है।
जाको जस-टंक सातो दीप नव खंड महि,
मण्डल की कहा ब्रह्मंड ना समात है ॥५७॥

मालती सवैया

मोरंग जाहु कि जाहु कुमाऊँ सिरी नगरै कि कवित्त बनाए।
बाँधव जाहु कि जाहु अमेरि कि जोधपुरै कि चित्तौरहि धाए।
जाहु कुतुब्ब कि एदिल पै कि दिलीसहु पै किन जाहु बुलाए।
भूषन गाय फिरौ महि मै बनि है चितचाह सिवाहि रिझाए ॥५८॥

कवित्त मनहरण

बिना चतुरंग संग बानरन लै के बाधि,
बारिध को लंक रघुनन्दन जराई है।
पारथ अकेले द्रोन भीषम से लाख भट,
जीति लीन्ही नगरी बिराट मैं बड़ाई है।
भूषन भनत, ह्वै गुसलखाने मैं खुमान,
अवरंग साहिबी गुमान हरि लाई है।
तौ कहा अचंम्भो महाराज सिवराज सदा,
वीरन के हिम्मतै हतियार होत आई है ॥५९॥

कवित्त मनहरण

साजि चतुरंग वीर रंग मैं तुरंग चढ़ि,
सरजा सिवाजी जङ्ग जीतन चलत है।
भूषन भनत नाद बिहद नगारन के,
नदी नद मद गैबरन के रलत है।
ऐल फैल खैल भैल खलक मे गैल गैल,
गजन की ठेल पेल सैल उसलत है।

तारा सो तरनि धूरि धारा मे लगत जिमि,
थारा पर पारा पारावार यो हलत है ॥१३॥
बाने फहराने घहराने घटा गजन के,
नाहीं ठहराने राव राने देश देस के।
नग भहराने ग्राम नगर पराने सुनि,
बाजत निशाने सिवराज जू नरेश के।
हाथिन के हौदा उकसाने, कुम्भ कुञ्जर के,
भौन को भजाने अलि छूटे लट केस के।
दल के दरानन ते कमठ करारे फूटे,
केरा केसे पात विहराने फन सेस के ॥१४॥
प्रेतिनी पिसाचरु निसाचर निसाचरिहू,
मिलि मिलि आपुस मे गावत बधाई है।
भैरो भूत प्रेत भूरि भूधर भयकर से,
जुत्थ जुत्थ जोगिनी जमाति जुरी आई है।
किलकि किलकि कै कुतूहल करति काली,
डिम डिम डमरू दिगम्बर बजाई है।
सिवा पूछै सिव सों समाजु आजु कहाँ चली,
काहू पै सिवा-नरेश भृकुटी चढ़ाई है ॥१५॥

सबन के ऊपर ही ठाढ़ो रहिवे के जोग,
ताहि खरो कियो छै हजारिन के नियरे।
जानि गैर मिसिल गुसैल गुसा धारि उर,
कीन्हो न सलाम न बचन बोले सियरे।
भूषन भनत महावीर बलकन लागो,
सारी पातसाही के उड़ाय गये जियरे।
तमक ते लाल मुख सिवा को निरखि भये,
स्याह मुख नौरग सिपाह मुख पियरे ॥१६॥

केतकी भौ राना और बेला सब राजा भये,
ठौर ठौर लेत रस नित यह काज है।
सिगरे अमीर भये कुन्द मकरन्द भरे,
भृङ्ग से भ्रमत लखि फूल के समाज है।
भूषन भनत सिवराज वीर तैंही देस,
देसन मैं राखी सब दच्छिन की लाज है।
त्यागे सदा पटपद पद अनुमान यह,
अलि अवरग जेब चंपा सिवराज है ॥१७॥
कूरम कमल कमधुज है कदम फूल,
गौर है गुलाब राना केतकी बिराज है।
पाँडर पँवार जूही सोहत है चंदावत,
सरस बुंदेला सो चमेली साजबाज है।
भूषन भनत मुचुकुन्द बड़गूजर है,
बघेले बसन्त सब कुसुम समाज है।
लेइ रस एनेन को बैठ न सकत अहै,
अलि अवरङ्गजेब चम्पा सिवराज है ॥१८॥
छूटत कमान अरु गोली तीर बानन के,
मुसकिल होत मुरचान हूँ की ओट मैं।
ताहि समै सिवराज हुकुम कै हल्ला कियो,
दावा बाँधि पराहल्ला बीरवर जोट मैं।
भूषन भनत तेरी हिम्मति कहाँ लौं कहौं,
किम्मति इहाँ लगि है जाकी भट झोट मैं।
ताव दै दै मूछन कँगूरन पै पाँव दै दै,
अरि मुख घाव दै दै कूदि परै कोट मैं ॥१९॥

मालती सवैया

केतिक देस दल्यो दल के बल, दच्छिन चंगुल चापि कै चाख्यो।
रूप गुमान हर्‌यो गुजरात को सूरत को रस चूसि कै नाख्यो॥

पञ्जन पेलि मलिच्छ मले सब, सोइ बच्यो जेहि दीन ह्वै भाख्यो।
सो रंग है सिवराज बली, जिन नौरंग में रंग एक न राख्यो ॥२०॥

कवित्त मनहरण

गरुड़ को दावा सदा नाग के समूह पर,
दावा नाग जूह पर सिंह सिरताज को।
दावा पुरहूत को पहारन के कुल पर,
पच्छिन के ग़ोल पर दावा सदा बाज को।
भूषन अखंड नवखण्ड महि मण्डल में,
तम पर दावा रवि किरन समाज को।
पूरब पछाँह देस दच्छिन ते उत्तर लौं,
जहाँ पातसाही तहाँ दावा सिवराज को॥२१॥

वारिधि के कुम्भभव घन बन दावानल,
तरुन तिमिर हू के किरन समाज हौ।
कंस के कन्हैया, कामधेनु हू के कंठकाल;
कैटभ के कालिका विहंगम के बाज हौ।
भूषन भनत जंग जालिम के सची पति,
पन्नग के कुल के प्रबल पच्छिराज हौ।
रावन के राम कार्तवीज के परसुराम,
दिल्ली पति दिग्गज के सेर सिवराज हौ॥२२॥

मौरंग कुमाऊँ औ पलऊ बाँधे एक पल,
कहाँ लौं गिनाऊँ जेऽब भूपन के गोत हैं।
भूखन भनत गिरि विकट निवासी लोग,
बावनी ववंजा नव कोटि धुँध जोत हैं।
काबुल कंधार खुरासान जेर कीन्हे जिन,
मुगल पठान सेख सैयदहु रोत हैं।

अब लग जानत हे बड़े होत पातसाह,
सिवराज प्रकटे ते राजा बड़े होत है ॥२३॥

दुग्ग पर दुग्ग जीते सरजा सिवाजी गाजी,
उग्ग पर उग्ग नाचे रुण्ड मुण्ड फरके।
भूषन भनत बाजे जीत के नगारे भारे,
सारे करनाटी भूप सिहल कों सरके।
मारे सुनि सुभट पनारे वारे उद्भट,
तारे लगे फिरन सितारे गढ़ धर के।
बीजापुर बीरन के गोल कुण्डा धीरन के;
दिल्ली उर मीरन के दाड़िम से दरके ॥२४॥

मालवा उजैन भनि भूषन भेलास ऐन,
सहर सिरोज लौं परवाने परत है।
गोड़बानो तिलगानो फिरगानो करनाट,
रुहिलानो रुहिलन हिये हहरत है।
साहि के सपूत सिवराज, तेरी धाक सुनि,
गढ़पति बीर तेऊ धीरन धरत है।
बीजापुर गोलकुण्डा आगरा दिल्ली के कोट,
बाजे बाजे रोज दरवाजे उघरत है ॥२५॥

मारि करि पातसाही खाक साही कीन्हीं जिन,
जेर कीन्हों जोर सो लै हद सब मारे की।
खिसि गई सेखी फिसि गई सूरताई सब,
हिसि गई हिम्मत हजारो लोग भारे की।
बाजत दमामे लाखौं धौंसा आगे घहरात,
गरजत मेघ ज्यों बरात चढ़े भारे की।
दूलहो सिवाजी भयों दच्छिनी दमामे वारे,
दिल्ली दुलहिन भइ सहर सितारे की ॥२६॥

जिन फन फुतकार उड़त पहार भार,
कूरम कठिन जनु कमल विदलिगो।
विष-ज्वाल ज्वाला मुखी लवलीन होत जिन,
झारन चिकारि मद दिग्गज उगलियो।
कीन्हों जिन पान पयपान सो जहान सब
कोलहू उछलि जल सिन्धु खलभलिगो।
खग्ग खगराज महाराज सिवराज जूको,
अखिल भुजग मुगल दल निगलिगो ॥२७॥

२५

सारस से सूबा करवानक से साहजादे,
मोर से मुगल मीर धीर ही धचै नहीं।
बगुला सो बगस बलूचियो बतक ऐसे,
काबुली कुलंग याते रन मे रचै नहीं॥
भूषन जू खेलत सितारे में सिकार साहू,
सभा को सुवन जाते दुवन सचै नहीं।
बाजी राब बाज ही चपेटै चगु चहूँ ओर,
तीतर तुरुक दिल्ली भीतर बचै नहीं॥

छत्रसाल प्रशंसा

हैबर हरट्ट साजि गैबर गरट्ट सम,
पैदर के हठ फौज जुरी तुरकाने की ।
भूषण भनत राय चम्पति कौ छत्रसाल,
रुप्यौ रन ख्याल ह्वै के ढाल हिन्दुवाने की ॥
कैयक हजार एक बार बैरी मारि डारे,
रजक दगनि मानो अगिनि रिसाने की ।
सैद अफगन सेन सगर सुतन लागी,
कपिल सराप लौं तराप तोपखाने की ॥१॥
तहबरखान हराय एँड़ अनवर की जंग हरि ।
सुतरुद्दीन बहलोल गये अबदुल समद मुरि ।
महमद को मद मेटि शेर अफगानहि जेर किय ।
अति प्रचड भुजदड बलन केहि नाहि दड दिय ।
भूषण बुंदेल छत्रसाल डर रग तज्यो अवरग लजि ।
झुक्के निशान तजि समर सो मक्के तकि तुरक्क भजि ॥२॥
निकसत म्यानते मयूखैं प्रलै भानु कैसी,
फारे तम तोम से गयंदन के जाल को ।
लागत लपटि कठ बैरिन के नागिनिसी,
रुद्रहि रिझावै दै दै मुडन की माल को ॥
"लाल" छितिपाल छत्रसाल महा बाहु बली;
कहां लो बखान करौं तेरी करवाल को ।
प्रतिभट कटक कटीले केते काटि काटि,
कालिकासी किलकि कलेऊ देति काल को ॥३॥
रैया राव चंपति को चढ़ो छत्रसाल सिह,
भूषन भनत गजराज जोम जमकैं ।
भादों की घटा सी उड़ि गरद गगन घेरें,
सेलै समसेरैं फिरैं दामिनि सी दमकैं ।

खान उमरावन के आन राजा-रावन के,
सुनि सुनि उर लागैं घन कैसी घमकैं।
बैहर बगारन की, अरि के अगारन की,
लाँघती पगारन नगारन की धमकैं ॥४॥
चाक चक-चमू कै अचाकचक चहूँ ओर,
चाक सी फिरत धाक चपति के लाल की।
भूषन भनत पात साही मारि जेर कीन्हीं,
काहू उमराव न करेरी करवाल की।
सुनि सुनि रीति बिरुदैत के बड़प्पन की,
थप्पन उथप्पन की बानि छत्रसाल की।
जंग जीति लेवा तेऊ ह्वै कै दाम देवा भूप,
सेवा लागे करन महेवा महिपाल की ॥५॥
सांगन सों पेलि पेलि खग्गन सो खेलि खेलि,
समद सा जीता जा समद लौं बखाना है।
भूषन बुदेला-मनि चपति-सपूत धन्य,
जाकी धाक बचा एक मरद मियाँना है।
जंगल के बल से उदगल प्रगल लूटा,
महमद अमीर खां का कटक खजाना है।
बीर-रस मत्ता जाते काँपत चकत्ता यारो,
कत्ता ऐसा बाँधिये जो छत्ता बाँधि जाना है।६।

देस दहपट्टि आयो आगरे दिल्ली के मेंडे,
बरगी बहुरि मानौं दल जिमि देवा-को।
भूषन भनत छत्रसाल छितिपाल-मनि,
ताके ते कियो बिहाल जंग जीति लेवा को।
खंड खड सोर यों अखंड महि-मडल में,
मडित बुन्देलखड मंडल महेवा को।

दच्छिन के नाह को कटक रोक्यो महाबाहु,
ज्यों सहसबाहु ने प्रवाह रोक्यो रेवा को॥७॥
अत्र गहि छत्रसाल खिझ्यो खेत बेतवै के,
उत ते पठानन हू कीन्ही झुकि झपटैं।
हिम्मति बड़ी कै गवड़ी के खिलवारन लौं,
देत सै हजारन हजार बार चपटैं।
भूषन भनत काली हुलसी असीसन कौं,
सीसन कौं ईस की जमाति जोर झपटैं।
समद लौं समद की सेना त्यों बुंदेलन की,
सेलैं समसेरैं भईं बाड़व की लपटैं॥८॥
भुज भुज गेस की वैसंगिनी भुजगिनी सो,
खेदि खेदि ग्वातो दीह दारुन दलन के।
बखतर पाखरिन बीच धँसि जाति मीन,
पैरि पार जात परवाह ज्यों जलन के।
रैया राव चंपति को छत्रसाल महाराज,
भूषण सकत करि बखान यों बलन के।
पच्छी-पर छीने ऐसे परे पर छीने बीर,
तेरी बरछी ने बर छीने हैं खलन के॥९॥
राजत अखण्ड तेज छाजत सुजस बड़ो,
गाजत गयन्द दिग्गजन हिय साल को।
जाहि के प्रताप सों मलीन आफताब होत,
ताप तजि दुज्जन करत बहु ख्याल को।
साज सजि गज तुरी पैदर कतार दीन्हें,
भूषन भनत ऐसो दीन प्रतिपाल को।
और राव राजा एक मन मैं न ल्याऊँ अब,
साहू को सराहौं कै सराहौं छत्रसाल को॥१०॥

फुटकर

१

बाप ते विशाल भूमि जीत्यो दस दिसिन ते,
महिमें प्रताप कीनो भारी भूप भान सों।
ऐसो भयों साहि के सपूत सिवराज बीर,
तैसो भयो होत है न ह्वै है कोऊ आन सों॥
एदिल कुतुबसाह औरंग के मारिबे को,
भूषन भनत को सरजा खुमान सो।
तीन पुर त्रिपुर के मारे शिव तीन बान,
तीन पातसाही हनी एक किरवान सों॥

२

कौन करे बस बस्तु कौन यहि लोक बड़ो अति।
को साहस को सिन्धु कौन रज लाज धरे मति।
को चकवा को सुखद बसै को सकल सुमन महि।
अष्ट सिद्धि नव निद्धि देत माँगे को सो कहि।
जग बूझत उत्तर देत इमि कवि भूषण कविकुल सचिव।
दच्छिन नरेस सरजा सुभट साहिचद मकरन्द सिव॥

३

सूबा निरानद बादराखन गे, लोगन बूझत ब्यौंत बखानो।
दुग्ग सबै सिवराज लिये धरि, चारु बिचार हिये यह आनो॥
भूषन, बोल उठे सिगरे हुतो पूना में साइत खान को थानो।
जाहिर है जग में जसवंत लियो गढ़ सिंह में गीदर बानो॥

४

भेजे लिख लग्न शुभ गनिक निजाम बेग
इतै गुजरात उतै गंग ज्यों पतारा की।
एक यश लेत अरि फेरा फिर गढहू को
खडी नव खंड दिये द्वान ज्योऽब तारा की॥

सहायक ग्रन्थों की सूची

हस्तलिखित

१. भूषण ग्रन्थावली — काशीराज पुस्तकालय आदि
२. शिवा बावनी — विविध प्रतियाँ
३. साहित्य सिंधु — ×
४. वृत्त कौमुदी — मतिराम द्वितीय
५. अलकार प चा।शिका — मतिराम द्वितीय
६. विक्रम सतसई की रस चन्द्रिका टीका
७ पिंगल — चिंतामणि
८ प्रबोध रस सुधा सर — नवीन
९. फतह प्रकाश — रतन
१०. कान्यकुब्ज वंशावली — ×
११. सुरकियो की वंशावली आदि — पटेहरा राज
१२. श्री लालजी महापात्र असनी के कवित्तो का संग्रह
१३. भिनगराज पुस्तकालय मे सगृहीत कवित्त सग्रह आदि
१४. रीवाँ राज रेकर्ड ऑफिस के सम्बन्धित कागज, सोलकियो की वंशावली आदि
१५. भरतपुर राज के कागज-पत्र
१६. तिकमापुर तथा बाद (कानपुर) मतिराम के वंशजों की वंशावली, पत्रादि

प्रकाशित

१७. मिश्रबन्धु विनोद
१८. हिन्दी नवरत्न
१९. शिवसिंह सरोज
२०. हिन्दुत्व : सावरकर
२१. कुमाऊँ राज का इतिहास
२२. रीवाँ राज्य दर्पण

२३. तवारीख बुन्देलखण्ड (उर्दू)
२४. राजस्थान : टाड
२५. मराठा इतिहास : पारसनीस
२६. मराठा इतिहास : किर्लोस्कर
२७ छत्रपति शिवा : वी० एन० सेन
२८. वंश भास्कर
२९. तजकिरए सर्व आजाद हिन्द (फारसी)
३०. औरंगजेबनामा
३१. बुन्देलखण्ड का इतिहास
३२. मतिराम सतसई
३३. छत्रसाल
३४ वीरसिंहदेव चरित (केशव)
३५. हिम्मत बहादुर विरुदावली (पद्माकर)
३६. छत्रप्रकाश
३७. कविता कौमुदी
३८. ललित ललाम
३९. रसराज
४०. रहिमन विनोद
४१. रहिमन विलास
४२. शिवराज शतक (गुजराती)
४३. राधा माधव विलास चम्पू (मराठी)
४४. शिव भारत (संस्कृत)
४५. शिव दिग्विजय (संस्कृत)
४६. कुवलयानन्द (संस्कृत)
४७. साहित्य दर्पण : टीका सालिगराम
४८. काव्य प्रकाश : मम्मट
४९. कविकुल कल्पतरु : चिंतामणि
५०. बैस क्षत्रिय वंशावली
५१. राजरत्नमाला : मुंशी देवी प्रसाद
५२. भगवन्तराय रासा-सदानन्द
५३. सुजान चरित : सूदन
५४. शृंगार संग्रह : सरदार
५५. सोर्स बुक ऑव् मराठा (अंग्रेजी)
५६. रेकर्ड ऑन शिवाजी (अंग्रेजी)
५७. शिवाजी : जदुनाथ सरकार
५८. औरंगजेब : जदुनाथ सरकार
५९. बीसलदेव रास : माता प्रसाद गुप्त
६०. भूषण विमर्श : दीक्षित
६१. वीरकाव्य : उदयनारायण तिवारी
६२. हिंदी साहित्य का आदिकाल : द्विवेदी
६३. सं० पृथ्वीराजरासो—हजारी प्रसाद द्विवेदी
६४. हिंदी साहित्य का इतिहास : केयी
६५. हिंदी साहित्य का इतिहास-आचार्य शुक्ल

६६. हिन्दी साहित्य का आलो० इतिहास : वर्मा
६७. हिंदी साहित्य का इतिहास- श्यामसुदर दास
६८. बार्डिक पोइट्री : लाला सीताराम
६९. इंडियन ऐण्टीक्वेरी
७०. एशियाटिक जर्नल्स
७१. यू० पी० गजेटियर्स
७२. इम्पीरियल गजेटियर्स
७३. रीवॉ स्टेट गजेटियर्स
७४. बिहार गजेटियर्स
७५. ऑर्कियालॉजिकल सर्वे रिपोर्टस
७६. माडर्न वर्ना० लिट्रेचर : ग्रियर्सन

पत्र-पत्रिकाएँ

नागरी प्रचारिणी पत्रिका, हिन्दुस्तान, माधुरी, सुधा, साहित्य सन्देश, शिक्षा, राजस्थान केसरी, प्रताप, वर्तमान, लीडर, ट्रिव्यून, मार्डन रिव्यू, प्रभा, मनोरमा, विश्वामित्र, स्वाधीनता (मराठी) विशाल भारत, सम्मेलन पत्रिका, साहित्य, गङ्गा, भारत, अर्जुन, आज, और सरस्वती आदि ।